आखिर जो बचा

अंतर्भारतीय पुस्तकमाला

आखिर जो बचा

बुच्चिबाबू

अनुवादक

दयावंती

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

प्रथम संस्करण : 1975 (शक 1897)
प्रथम आवृत्ति : 1985 (शक 1907)
द्वितीय आवृत्ति : 1992 (शक 1913)

ISBN 81-237-0000-8

Aakhir Jo Bacha (*Hindi*)
Original title: Chivaraku Migiledi (*Telugu*)

रु. 22.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5 ग्रीन पार्क, नयी दिल्ली-110 016 द्वारा प्रकाशित।

भूमिका

लार्ड डेविड सेसिल कहते हैं कि उपन्यास यथार्थ जगत का कलात्मक प्रतिरूप होता है। राल्फ फॉक्स का विचार है कि उपन्यास का अर्थ गद्य में रची गयी काल्पनिक कहानी नहीं, प्रत्युत संपूर्ण मानव जीवन तथा उसकी प्रवृत्तियों का गद्य में रखा गया लेखा होता है। हम यह मान सकते हैं कि उपन्यास सम-कालीन सामाजिक जीवन का चित्रण कर उसके अर्थ और सार्थकता को परि-भाषित करने वाली साहित्यिक विधा है। फारेस्टर, पर्सी लेब्बर इसे उत्तम कला की श्रेणी में रखते हैं तो एच. जी. वेल्स तथा वर्जीनिया वुल्फ इसे कला बिलकुल नहीं मानते। उपन्यास को 'कला' स्वीकारते हुए भी सामरसेट मॉम उसे 'उत्तम' का श्रेय नहीं देते। इस प्रकार उपन्यास विधा को प्राप्त साहित्यिक गौरव विवादास्पद होते हुए भी आज इस विधा को जितना महत्व प्राप्त है उतना किसी अन्य साहित्यिक विधा को नहीं।

देश व काल की सीमाओं को बेधकर मानव मन की गहन परतें खोल कर दिखाना इस साहित्यिक विधा का उद्देश्य है।

प्रणय-कलह से लेकर विश्व युद्ध तक, आई. सी. बी. एम. से लेकर सोश-लिज़्म के लक्ष्य तक, परमाणु से लेकर परमेश्वर तक सभी विषय इस विधा के लिए कथावस्तु बन सकते हैं। नित्य प्रति जीवन में घट रही और सामूहिक रूप से मानवजाति को प्रभावित करने वाली अनेक घटनाओं का यथार्थ ही आज के उपन्यास की कथावस्तु है।

यह विधा पाश्चात्य देशों में अंकुरित हुई, पनपी और समूचे संसार को प्रभावित कर बैठी। सरल, सुबोध पद्धति में जीवन को नित्य नवीन बनाते रहने की जीवन दृष्टि देकर यथार्थबोध कराती, कर्तव्यज्ञान देती हुई यह नतन साहित्य विधा शीघ्र ही पाठकों के मन को भा गयी।

इस विधा को लैटिन में नोवेल्ला, इतावली में नोवेल्लस, स्पेनी भाषा में नोवेल्ला, फ्रेंच में नोवेल्ली तथा अंग्रेजी में नोवेल कहते हैं जिसका अर्थ होता है 'नयी कथा'। कदाचित इसी आधार पर 'गुजराती' में यह नवलकथा कहलायी। मलयालम में इसे 'आख्यान', मराठी और कन्नड में 'कादंबरी', बंगला व हिंदी में 'उपन्यास' नाम दिया गया है। तेलुगु में पहले इसे 'गद्यप्रबंध' कहा गया उसके बाद 'नवान् विशेषान्', 'लालती-गृहति, इति नवला' शब्द की व्युत्पत्ति को कृत्रिम बनाकर स्त्रीलिंग वाची शब्द बनाया गया। पर वास्तविकता यह है कि तेलुगु में 'उपन्यास' के लिए प्रयुक्त 'नवला' शब्द और यह साहित्यिक विधा दोनों ही अंग्रेजी से उधार लिये गये हैं।

पिंगलि सूरना (1600 ई.) द्वारा रचित 'कलापूर्णोदयम्' प्रबंध-काव्य को कई लोग तेलुगु का प्रथम उपन्यास मानते हैं। लेकिन यह रचना गद्य-प्रबंध भी नहीं है। 'बाणोच्छिष्ट जगत सर्वम्' का गौरव पाने वाली 'कादंबरी' को भी उपन्यास नहीं माना जा सकता क्योंकि वह भी तो छंद रहित काव्य ही लगती है, न कि उपन्यास।

आंध्र प्रदेश में गंवई गांवों में खिली चांदनी में बैठ नवान्न से बने व्यंजन खाते हुए चिरकाल से मौखिक परंपरा में जी रही छप्पन देशों की कहानियों को तेलुगु उपन्यास-साहित्य का प्रारंभिक रूप कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी। लेकिन इसे प्रबंध काव्य रचनाओं तथा जनपद कथाओं को परंपरा के विकसित रूप में तो कदापि नहीं माना जा सकता।

अंग्रेजी की इस विधा से प्रभावित 'नवला' तेलुगु साहित्य की एक नवीन विधा है। पर यहां इतना स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि 1872 ई. में लिखी गयी 'श्रीरंगराजु चरित' नामक तेलुगु रचना न किसी अंग्रेजी उपन्यास का अनुवाद है और न ही रूपांतर। श्री नरहरि गोपालकृष्ण चेट्टी द्वारा लिखित यह तेलुगु का प्रथम मौलिक उपन्यास है।

इसके बाद सन् 1878 में श्री कंदुकूरि वीरेशलिंगम पंतुलु ने पहले सोचा कि वे किसी छोटी-सी अंग्रेजी प्रबंध रचना का आंध्रीकरण कर अपनी शैली बनायेंगे और तब फिर कोई काल्पनिक गद्य प्रबंध लिखेंगे। इस प्रकार सोचकर उन्होंने विकार ऑव वेकफील्ड का आंध्रीकरण शुरू कर दिया। कार्य शुरू करने पर उन्हें विदेशी कथा और उसका परिवेश देशी भाषा में अनुवाद के

लिए उपयुक्त नहीं जंचा । तब उन्होंने इसी कथा का आधार लेकर तेलुगु में 'राजशेखर चरित्र' लिखा । 1891 में 'गुलीवर्स ट्रेवेल्स' के आधार पर 'सत्य-राज्यापूर्व देश यात्रलु' की रचना की । उन्हीं दिनों श्री पंतुलु 'चिंतामणि' नामक पत्रिका के संपादक भी थे अतः उन्होंने पत्रिका द्वारा उपन्यास प्रतियोगितायें चलाईं और उपन्यास लेखकों को प्रोत्साहित किया । फिर तो उपन्यासों का अंबार लग गया । 1895 में श्री कोक्कोंड वेंकटरत्नम् का लिखा बाणभट्ट की कादंबरी पर आधारित उपन्यास 'महाश्वेता' प्रकाशित हुआ । तत्पश्चात् बंगला से कई उपन्यास तेलुगु में भाषांतरित हुए । इसके बाद तो विदेशी भाषाओं से अनूदित उपन्यासों की बाढ़ सी आ गयी । इसके बाद जासूसी उपन्यासों का दौर आया और अब उपन्यास लेखन विधा महासमुद्र की तरह हिलोरें लेने लगी ।

मुहावरेदार तेलुगु भाषा में आंध्र भूभाग के जीवन की यथार्थता चित्रित करने वाला प्रथम तेलुगु उपन्यास श्री उन्नवा लक्ष्मीनारायण शर्मा रचित 'मालपल्लि' है । इसके बाद ही श्री विश्वनाथ सत्यानारायण रचित 'वेयिपडगलु' (सहस्त्रफण शीर्षक से हिंदी में अनूदित) तथा श्री अडवि बापिराजु का लिखा 'नारायणराव' प्रकाशित हुए और आंध्र विश्वविद्यालय से पुरस्कृत भी । इसके बाद श्री चिलकमूर्ति लक्ष्मी नरसिंहम् द्वारा रचित 'गणपति', श्री मोक्कपाटि नरसिंह शास्त्री द्वारा रचित 'बारिस्टर पार्वतीशम्' श्री वेलूरि शिवराम शास्त्री द्वारा रचित 'ओबय्या' हास्य व्यंग्य उपन्यास प्रकाशित हुए । तत्पश्चात् श्री टी. गोपी चंद, श्री कोडावटिगंटि कुटुंबराव, श्री महीधर राममोहनराव के यथार्थवादी उपन्यास, 'चलम्', 'लता' आदि सेक्स प्रधान उपन्यास हैं । इसी दौर में 'नारायण भट्टु' 'रूद्रम्मादेवी' इत्यादि ने ऐतिहासिक उपन्यास भी लिखे थे ।

तेलुगु उपन्यास के इतिहास में अब एक ऐसा दौर है कि आज कई लेखक 'स्त्री' के नाम से लिखते हैं क्योंकि अधिक संख्या में लेखिकाओं ने उपन्यास लेखन के लिए कलम उठायी है । और एक-एक ने इतने उपन्यास लिखे हैं कि उपन्यास के लिए तेलुगु पद शब्द 'नवला' नवलाओं का ही है सार्थक बन बैठा है । इन लेखिकाओं में मुप्पाल्ल रंगनायकम्मा, यद्दनपूडि सुलोचना रानी, आरिभपूडि (कोडूरि) कौसल्यादेवी, आनंदरामम्, द्विवेदुल विशालाक्षी, मल्लादि वसुंधरा, वासिरेड्डी सीता देवी के नाम उल्लेखनीय हैं । अन्य साहित्यिक विधाओं की

तरह प्रतिद्वंद्वी 'कहानी' विधा को भी तेलुगु उपन्यास ने पछाड़ दिया है।

आज के तेलुगु उपन्यास की कथावस्तु का विश्लेषण किया जाय तो मुख्य विषय इस प्रकार उभरते हैं—जीवन के यथार्थ की झांकी, पात्रों के मनोभावों की विशद व्याख्या और मनोविश्लेषणात्मक अभिव्यक्ति।

मनोविश्लेषणात्मक अभिव्यक्तिपरक उपन्यासों के प्रथम लेखक श्री टी. गोपी चंद हैं तो श्री जी. वी. कृष्णराव, श्री बुच्चिबाबू, श्री राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री ने उसे पोषित किया है। इन सभी लेखकों पर फ्रॉयड, एंजिल आदि का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है। पूर्व और पश्चिम के साहित्य संबंधी सिद्धांतों का समन्वय करते हुए ईडिपस ग्रंथि से पीड़ित भारतीय युवक की मनोदशा का सम्यक-चित्रण और अंत में उसे प्राप्त विशेष जीवन दर्शन ही बुच्चिबाबू के 'चिवरकु मिगिलेदि' उपन्यास की विशेषता है।

मुख्य कथा

इस उपन्यास का नायक डाक्टर दयानिधि, एक और पात्र जगन्नाथम् के शब्दों में दि वेल्थ आफ काइंडनेस है।

लोगों से सुनी बात कि उसकी मां चरित्रहीन है दयानिधि के मस्तिष्क में घूमती रहती है। हमउम्र लड़कियों के साथ खुलकर बातें करना या चुटकी लेने का उसमें साहस नहीं। रूपसी होने के कारण भगोड़ी कामाक्षी की रूपसी बेटी कोमली के प्रति उसका लगाव भी है, जो रूपसी है। लेकिन वंश, परंपरा, आभिजात्य की भावना और संस्कारों को तिलांजलि देकर कोमली से विवाह करने का साहस उसमें नहीं है। इन आकर्षणों से पलायन का रास्ता भी उसे नहीं सूझता। 'यात्रा समाप्त कर अलसाये सौंदर्य' जैसी कोमली का स्पर्श भी वह नहीं कर पाता। आकर्षण' और 'संस्कार' दोनों के टकराव में अपने से समझौता कर लेता है। "अनुभूति चौखटों के भीतर नहीं मिल पाती, महान् सौंदर्य को किसी भी प्रकार के चौखटे नहीं घेर सकते। तन की मांग को इन दोनों के भीतर चौखटा नहीं बनना चाहिए।" अमृतम् से उधार लाये पचास रुपयों के नोट कोमली के तकिये के नीचे रखकर वापस लौट आता है।

मां की मौत पर मातमपुर्सी के लिए आये दूर के रिश्ते के मामा तहसीलदार गोविंदरामय्या की बेटी सुशीला के आभिजात्य का गर्व उसे चिढ़ाता हुआ लगता

है तो पड़ौस के नायडु की बेटी नागमणि का व्यंग्य उसे तिलमिला देता है। हां, दूर के रिश्ते की साली अमृतम् का स्वभाव सचमुच उसे अमृत-सा मीठा लगता है, जो मां के चरित्र, और कोमली की जाति का प्रसंग ही नहीं उठाती।

सुशीला से वह डरता है, इसी कारण उससे कतराता है। नागमणि उसे पसंद है और पिकनिक वाले दिन गाड़ी में हिचकोलों का सुखद आनंद कुछ दिनों के लिए उसे व्यस्त रखता है। इन बातों ने उसके हृदय को छू लिया था पर सुशीला के प्रति कहीं उसके मन में अविश्वास है, दयानिधि को लगता है कि सभी कुछ प्राप्त होने पर भी किसी का अभाव अपने में महसूस करती, किसी को खोजती 'अमृतम्' ही उसकी सहयात्री है। अमृतम् में आभिजात्य का दर्प नहीं, अहंकार नहीं; उसे चाहिए एक सहभागी उससे जुड़े एक व्यक्ति की मैत्री। दयानिधि वह दे सकता था, इसी से वह उसमें लिप्त हो गया, उसके सौंदर्य सागर में डुबकी लगाकर समा गया। तभी तो अमृतम् के नवजात शिशु में अपनी पहचान पा सका, अपना प्रतिबिंब देख सका।

कोमली के सौंदर्य में आकर्षण था। उसे शिक्षित और संस्कारित करने के लिये 'रोज़' को उसकी शिक्षिका नियुक्त किया। पर उसे लगता था कि कोमली के सौंदर्य को छुआ नहीं जा सकता, उसे पाया नहीं जा सकता।

सुशीला की मां दयानिधि को दामाद बनाने की आशा संजोये कहती है, "अभी क्या जल्दी है, बाप पढ़ा रहा है, कोई एक तो उसके भाग्य में लिखी होगी।" दोनों की मंशा को ताड़कर दयानिधि के पिता दो टूक उत्तर देते हैं, "बेटी देने वाला कुल और वंश का गौरव भी तो देखेगा। दूल्हे की मां की बदचलनी पर भी तो लोग चुप नहीं रहेंगे।"

दूर से एक और रिश्ता आया। पुलिस इंसपेक्टर माधवय्या को दयानिधि के बारे में सब कुछ पता लग गया। फिर भी बोले, "लड़के लड़की की इच्छा से कोई वास्ता नहीं, शादी होकर रहेगी।" और शादी हो गयी।

दयानिधि ससुराल में भी किसी के साथ घुलमिल नहीं पाया। शंका थी कि सब उसे नीच समझते हैं। परिणामस्वरूप यह शंका कई रूपों में उभरती है। शांति आश्रम में प्रथम मिलन पर पत्नी की अनामिका में अंगूठी पहनाकर दयानिधि पहला प्रश्न पूछता है—"तुम्हारे लोग मेरे बारे में क्या कह रहे हैं ?"

संक्रांति के त्यौहार पर ससुराल जाने के लिए परीक्षा की तैयारी आड़े आती है। प्रथम संक्रांति पर ससुर द्वारा भेजा गया 100 रुपये का उपहार स्वीकार करना मानसिक दासता मानकर वापस लौटा देता है। पुलिस सुपरिं-टेंडेंट सलाह देते हैं, जल्दी से गौने की रस्म पूरी करके बेटी को बिदा कर दो। स्वतंत्रता का बुखार अपने आप उतर जायेगा।

गौने के लिए काकिनाडा जाकर, कांग्रेस कमेटी द्वारा आयोजित सभा में देश की आजादी के लिए भाषण देते हुए लाठियों की मार खा अस्पताल पहुंचता है। अमृतम् के साथ पति को देखने इंदिरा अस्पताल जाकर बाहर खड़ी रहती है कि पति से आज्ञा मिले तो देखने जाय। दयानिधि लिवा लाने को कहता ही है कि इतने में इंदिरा के पिता आकर उसे घर ले जाते हैं। सोचा, कहीं स्वतंत्रता सेनानी से मिलने पर सरकार उसे नौकरी से निकाल न दे। बस! दयानिधि अमृतम् को अपना निर्णय सुना देता है—"हमारे रास्ते अलग हो गये हैं अमृतम्। आशा व्यर्थ है कि फिर ये जुड़ पायेंगे।"

एलूर में डाक्टरी की प्रेक्टिस करता है। उसे किसी ऐसे व्यक्ति की जरूरत है जो उसके भीतर की उदार भावना और संवेदना को स्वीकारे। श्यामला की सौंदर्यहीनता की बीमारी की चिकित्सा के पीछे भी यही उदारता कार्य करती है जो श्यामला के भाई को शंकास्पद बनाती है। परिणामस्वरूप चिकित्सा बंद करवा कर उसे घर लिवा ले जाता है। इसी समय नौकरी छूटी 'रोज़' को अपने यहां कंपाउंडर रख लेता है। दयानिधि से इसी उदारता और संवेदना की अपेक्षा करती है कोमली जो बहुत पहले किसी जमींदार के साथ उठ गयी थी। दयानिधि उसे दो सौ रुपये मनिआर्डर भेजता है।

इसी बीच पति को देखने चाचा के साथ आयी इंदिरा 'श्यामला' और 'रोज़' को देखकर शंकालु हो जाती है। कोमली का पत्र इस घुटन में अर्घ्य डालने का काम करता है। "सुना था कि आपकी मां भी ऐसी ही थी" इंदिरा पति पर कटाक्ष करती है।

क्लब में भी यार-दोस्त उसे ब्यूटी स्पेशलिस्ट कह कर ताने कसते हैं और 'हेमलेट' की उपाधि देते हैं।

तभी उसे पता चलता है कि जिसके साथ कभी उसकी बात चली थी, निधि का दोस्त राजा जिससे विवाह करना चाहता था, वही सुशीला उसी

के एक रोगी कृष्णमूर्ति के साथ विवाह करने जा रही है। विवाह रुकवाने के लिए जी तोड़ कोशिश करने के बावजूद सुशीला विवाह कर लेती है। और शादी के बाद आठवें महीने शिशु को जन्म देकर मर जाती है।

क्लब के यार-दोस्त इस घटना में भी दयानिधि का हाथ मानकर ताने कसने से नहीं चूकते—''सुना था कि कृष्णमूर्ति की बीवी और डाक्टर के बीच कई दिनों तक रोमांस चलता रहा। डाक्टर की मां के भी यही लक्षण थे।''

मां, सुशीला, अमृतम्, 'रोज़' और श्यामला जिन्हें लोगों को अफवाहों ने जकड़ रखा था दयानिधि के मस्तिष्क पर छा गये थे।

रायलसीमा के कुष्टरोगियों का समाचार सुन दयानिधि को लगता है कि उनको उसकी संवेदना की अपेक्षा है। वहां चला जायगा तो कोई उसके बारे में नहीं जान पायेगा। निंदा, अफवाहों से पीछा छुड़ाने के लिए वह रायलसीमा चला जाता है। वहां श्री आचारी उसे आश्रय देते हैं। उनकी बेटी कात्यायनी के प्रति दयानिधि की ममता उभर आती है।

इसी बीच आंध्र प्रदेश की मांग के प्रचार के लिए रायलसीमा पधारे राज-भूषणम के साथ दयानिधि का टकराव होता है। परिणामस्वरूप नयी अफवाहें पुरानी निंदाओं के साथ पुनः पनपने लगती हैं।

दयानिधि को वर्षा के उपरांत वहां एक हीरा मिलता है और वह एक लखपति हो जाता है। हीरों की खोज के लिए खदानों का काम शुरू होता है जिसके साथ वहां एक अस्पताल, एक सहायक, चार नर्सें, चार कंपाउंडर और तीन मास्टर नियुक्त होते हैं। कोमली भी जमींदार को छोड़कर चली आती है, और दयानिधि के यहां आश्रय पाती है। दयानिधि को कोमली के प्रति प्रेम है, क्योंकि उसमें भी संवेदनशीलता है लेकिन उसके जीवन के पिछले कालेपन से उसे घृणा होती है। प्रेम मांगती कोमली को 'प्रेम पवित्र है' कहते हुए वह अपने से दूर ठेल देता है।

आंध्र राष्ट्र समिति कडप्पा सभा में सरकार जिले से आये एक व्यक्ति का भाषण···

तभी ससुराल से इंदिरा की बीमारी का पत्र आता है। क्षय रोग से पीड़ित इंदिरा को देखने जाता है लेकिन उसके शव का दाह संस्कार कर वापस लौटता है। लौटते समय अमृतम् के भाई जगन्नाथम् के पास जाता है तो

उसे पता चलता है कि अमृतम् के लड़की हुई है । अपने ही अंश को एक बार देख आने की लालसा उसे अमृतम् के पास खींच ले जाती है ।

बच्ची को देखकर वापस रायलसीमा पहुंचता है तो पाता है कि वस्तुस्थिति पूरी बदल चुकी है । जिला मैजिस्ट्रेट के पास किसी अज्ञात व्यक्ति ने उसके विरुद्ध कई शिकायतें की हैं । मजदूरों को उकसाकर हड़ताल करायी जाती है । खदानें पाट दी जाती हैं । उसके आश्रयदाता आचार्युलु का घर आग की लपटों में धू-धू कर जलता है । उसके परिवार को अपने यहां बसाकर दयानिधि कोमली को साथ लिए उसी क्षण सब कुछ त्याग कर जीवन की अंतिम यात्रा पर निकल जाता है ।

जीवन का रहस्य क्या है ? कभी उसने अपने आप से प्रश्न किया था तो उसे उसी समय बैकुंठम् मास्टर का खाली पत्र मिला था । आज भी उसके सामने फिर से वही प्रश्न उभर आया था । उसे लगा कि 'आखिर जो बचा' वह समाधान कदापि नहीं हो सकता । समाधान पाने के लिए किये गये सभी प्रयत्न. उनकी यादें और अपने आपसे समझौता-- यही उसके जीवन का रहस्य है ।

'अहं' के पोषण की इच्छा उसमें बलवती है । उसके भीतर अपार करुणा है चाहे उसका निकास 'अहं' से ही हुआ हो । और इस करुणा के प्रसार के लिए उसे ऐसे व्यक्ति चाहियें जो उसे मान लें । अपेक्षा और अयाचित दान के परिष्कार में ही उसके जीवन का रहस्य निहित है ।

पग-पग पर आड़े आते समाज, रूढ़ि, परंपरा, छोटे-छोटे स्वार्थ और संकुचित विचारों के साथ वह टकराता है । उसका बाकी जो बचा है, वह इस टकराहट की टीस ही है ।

बुच्चिबाबू द्वारा रचा गया कल्पना का यह संसार गहरा और अथाह है । मनोविश्लेषण के साथ दो विश्वयुद्धों के बीच भारतीय जीवन, भारतीय युवक की मनोदशा और सामाजिक इतिहास के चित्रण में सफल लेखक बुच्चिबाबू ने तेलुगु उपन्यास साहित्य को निखार दिया है, यह कहना अत्युक्ति नहीं होगी ।

—तूमाटि दोणप्पा

अनुक्रम

तिनके का क्या मूल्य ?

पश्चिम में लाल सूरज जम्हाई लेकर दूसरी दुनियां में मूर्छित हो गया तो उस वातावरण में बचे थे केवल काले बादल जो दिन के साथ लगाव रखते हुए रात्रि को टटोल रहे थे। तारे डरते हुए से चमक रहे थे। पूंछ हिलाते अजगर सी घूमकर वह छोटी नदी कहीं दूर जा छिपी थी। नदी के किनारे झाड़ियों के बीच बैठा दयानिधि आकाश की ओर देखकर मन ही मन हंसने लगा। हवा की एक हल्की सी लहर ने उसके तन को छू कर एक विचित्र सी अनुभूति दी। प्यास के साथ तन विकसित होता है, तो हवा शरीर में उमंग और उत्साह भर कर रक्त को स्पंदित करती है और उसे नये नये मार्गों की ओर ले जाती है और अंग अंग में तंद्रा सी छा जाती है, आंखें केवल देखना छोड़ कर गहराईयों का दर्शन करती हैं।

पश्चिम में भरता हुआ लाल घाव, रात्रि का अन्वेषण करने वाले मेघ, निर्भय होकर चमक रहे नक्षत्र, पूंछ हिलाना बंद कर निश्चल पड़े अजगर सी नहर, पवित्र भाव से झूम रही झाड़ियां, मूक भक्तिवश हो मौन प्रकृति, उन सबके साथ वह स्वयं, सभी एकाकार हो उठे थे, क्षण भर के लिए चेतनता खोकर इस प्रकार जड़ हो गये थे मानो इस विश्व से उनका कोई संबंध ही न रह गया हो।

"अबेर हो गयी। घर चलो छोटे बाबू।"

दयानिधि उठकर खड़ा हो गया।

"इधर कैसे आ गये नारय्या ?"

"गैया चराकर ले जा रहा हूं। उठिए छोटे बाबू। मां जी आपके लिए आंखें बिछाये बैठी होंगी।"

दयानिधि ने उठकर कुरता झाड़ा और धोती से चिपके घास के तिनके को निकालकर नहर में फेंक दिया।

"आज दुपहरी आपके चले आने के बाद घर में फिर झगड़ा हो गया छोटे बाबू। बड़े बाबू और मैया बाबू की टक्कर हो गयी। भैया बाबू ने कहा—जब तक मांजी घर में रहेंगी वे खुद कहीं बाहर जाकर रहेंगे। बड़े बाबू ने मांजी को आज फिर डांटा। पांच बजे की गाड़ी से भैया बाबू बूलच्छमी बहू को लेकर चले गये। बूलच्छमी बहू के आने के बाद से तो भैया बाबू बिलकुल बदल गये।"

दयानिधि चुप रहा। नारय्या घर का विश्वसनीय पुराना नौकर है और छुटपन से वहीं रहता आया है। घर की सारी बातें जानता है। पर अपने ही घर की सारी बातें एक नौकर के मुंह से सुनना, दयानिधि सह नहीं पाया। शर्म से उसका सिर झुक गया।

"तू घर जा नारय्या। मैं तनिक ठहर कर आऊंगा।"

"मांजी दोपहर रोने लगी थीं कि आपने काफी भी नहीं ली और चले आये। ढूंढ कर साथ ले आने को कहा है। आज इत्ती दुपहरिया में क्यों चले आये बाबू। कामाक्षी की बेटी तो अभी गांव से लौटी नहीं।"

दयानिधि को आश्चर्य हुआ कि नारय्या को उसके निजी रहस्य का पता कैसे चला। सोचा "शायद कामाक्षी ने बताया होगा या फिर अम्मा ने ही···"

"तो कब आयेगी वह ?···खैर! तू जा, मैं घूम-घाम कर एक घंटे में घर लौटूंगा। जाकर अम्मा से कह दे।

नारय्या ने अपने बछड़े के गले में बंधी रस्सी अपनी कमर में लपेटी और पगड़ी में से एक अधजला चुरुट निकालकर सुलगाया।

"छोटे बाबू। बुरा न मानो तो एक बात कहूं। आप झटपट शादी कर डालो।

नारय्या अब तक शादी से संबंधित अपने मन का आनंद नहीं खो बैठा था। दुख और सुख के नाम पर अलग अलग उसके पास अपने कोई अनुभव नहीं थे।

जिस दिन उसकी बीबी चंद्रन्ना के घर बैठ गयी थी। उस रात उसने जी भर कर जुआ खेला था और भोर होते ही चंद्रन्ना के घर जाकर गरम काफी की तलब की थी। पर जब माधवय्या के घोड़े को वात हो गया तो तीन दिन दुख के मारे नारय्या ने एक कौर भी मुंह में नहीं डाला।

दयानिधि मन ही मन हंसा। यह सब कुछ जानता है। उमर भी चढ़ आई है पर तटस्थ होकर चुप नहीं रह सकता।

"बाबू। चलो अब घर। अंधेरे में कोई कीड़ा-वीड़ा काटेगा।" कहता हुआ नारय्या गैया हांकता हुआ निकल गया। सारस के कई जोड़े शर्मीली चांदनी में चमकते उड़ते जा रहे थे। किसी पक्षी ने नहर के पानी में हरकत पैदा की। गरमी की दुपहरिया से अलसाये चेहरे में खुमारी भर कर चांदनी ने चंदा के आगे अपना तन फैलाया। दयानिधि खड़ा था अचानक चलने लगा और उसके पैर अनायास ही कामाक्षी के घर के पिछवाड़े जाकर रुक गये। गली में कोई नहीं था। कुल मिलाकर गली में तीन झोंपड़ियां और दो खपरैल के घर थे। सीढ़ियों के पास परछाई में खड़े होकर उसने हल्की सी दस्तक दी।

"कौन ? मंगम्मा ! इमली लायी हो। ज़रा ठहरो। सिर धो रही हूं।" भीतर से आवाज़ आई तो वह एक क़दम पीछे हट गया। —"हूं। तो शाम को ही लौटी होगी।" किवाड़ के छेद से भीतर झांका पर मन ही मन ग्लानि हुई—अपराध बोध से। "किवाड़ के छेद से इस तरह उसका झांकना—पीछे के किवाड़ के छेद में से कोई उसे देख रहा हो तो ?" निश्चित होने पर कि कोई हमारी चोरी नहीं देख रहा है तो जाने कितने काम कर डालते हैं— पर किसी के द्वारा देख लिये जाने का संदेह होने लगे तो अवसर मिलने पर भी हम बगुला भगत बन जाते हैं। दयानिधि ने सोचा —"इंसान की नीयत किवाड़ के छेद की जैसी है।"

गली के मोड़ पर कुछ हिलने की आहट हुई। चारे की खोज से थक कर समय बिताने के लिए खड़े गधे के हिलने की आवाज़ थी। साहस बटोर कर दयानिधि ने फिर छेद से भीतर झांका। कोई नहीं दिखा। भीतर से ज़मीन पर पानी गिरने की आवाज आ रही थी —"वह रहा लोटा, नंगा पैर, घुटने की गोलाई— यह कमबख्त सूराख ज़रा दाईं ओर क्यों न हुआ ?" कोफ्त हुई उसे। उसका हृदय धड़कने लगा। हथेली जहां किवाड़ पर टिकायी थी उतनी जगह पर पसीने

का निशान पड़ गया। निशान पर उसने फूंक मारी और अब बायीं हथेली टिकायी। लोटा हाथ से फिसल कर बाल्टी में गिरने की आवाज़ आ रही थी।

"मरा लोटा" किसी की खीझ सुनायी दी। अब वह आकार हिलने लगा। बाल्टी हिलने का शब्द भी रुक गया। किवाड़ पर से दयानिधि ने फौरन हथेली खींच ली। अंगूठी किवाड़ से लगकर किरकिरा उठी।

"कौन है ? बोलता क्यों नहीं ? मंगम्मा। ठहर अभी आती हूं—अम्मा मंदिर गयी है···"

थोड़ी देर बाद किवाड़ खुले और खोलने वाली किवाड़ की ओट में थी। दयानिधि भीतर पहुंचा और किवाड़ लगाकर खड़ा हो गया। भीगी सफेद साड़ी आधी लपेटे पीढ़े पर कोमली कपड़े से बाल झाड़ रही थी। लगता था जैसे नग्न चांदनी साकार हो बालों में लाल फूल खोंसे बैठी है।

"कौन ? अरे आप।" आंचल को कंधों पर खींच कर गले में लपेट लिया। दयानिधि ने उसकी ओर देखा। पिछली गर्मियों में पहली बार उसे देखा था और फिर दुबारा बड़े दिन की छुट्टियों में। तब से लेकर आज तक, उसे अच्छी तरह याद है कि एक सौ उन्नीस बार देख चुका था पर आज उसे लगा कि उसका वास्तविक रूप देख पा रहा है।

उसे इस बात के अहसास से तनिक दु:ख हुआ कि कोमली के तन का सौंदर्य हर बार और हर समय एक समान दिखने वाला सौंदर्य नहीं है। अच्छा खाना, संरक्षण और प्रसाधन मिलने पर ही उसके भीतर छिपा सौंदर्य बाहर फूट पायेगा। वैसे सोलह की पूरी हो चुकी है, पर लगता है अभी उसमें यौवन की पूरी सुघराई नहीं आई है। लंबी पतली बांहें पीठ से लगे कंधे, पतली सी कमर, उसके नीचे फैलाव में कोई भी साड़ी डाल दो तो हैंगर जैसे टिका लेने वाली वक्रता। वह तो अभी विकस रही थी, कुछ-कुछ आकृति भर कर उभरे लड़कों के से स्तन थे। पूनों के चांद पर छाये हल्के मेघ के आवरण से झरते, प्रकाश जैसा तन का रंग था। कोमली के उस शरीर को देखते रहने में दयानिधि को एक विचित्र अनुभव हो रहा था। शरीर के सभी अंग आकर्षक थे। दयानिधि असमंजस में पड़ गया कि किस अंग विशेष को देखे। दयानिधि को लगा कि विधाता ने कोमली पर अपना कार्य अधूरा छोड़ दिया है।

कोमली ने प्रश्नार्थक हुंकार भर कर भौंहें सिकोड़ीं।

"तुम्हारे लिए आया हूं ।"

"मुझसे क्या काम है, अम्मा से होगा । चले जाओ । वह उठी और दोनों हाथ किवाड़ पर टिकाकर खड़ी हो गयी । गले में लपेटी भीगी साड़ी का आंचल खिसक कर वक्षों का सहारा न पाकर कमर पर जाकर टिक गया । आज के पूरे दृश्य ने दयानिधि को एक नया साहस दिया । उसे लगा कि कोमली का रहस्य उसने पा लिया है । स्त्री की माया उसके शरीर को छूकर उसका शोध करने वाला ही जान पाता है । उसे लगा कि कई जन्मों से भटकती दोनों की आत्मायें खोजती हुई आज अचानक यहां मिलकर एक-दूसरे को पहचान चुकी हैं ।

"तुम्हारी मां से नहीं तुमसे मुझे—

"इस अंधेरे में मुझसे क्या काम है ? ऐसे अकेले में कभी मत आया करो । अम्मा देखेगी तो मार-मार कर मेरा कचूमर निकाल देगी ।"

"तुम्हें अगर मेरा आना अच्छा न लगा हो तो आगे से कभी भी रात को नहीं आऊंगा । घर में दिमाग़ परेशान हो गया था कुछ सूझा नहीं तो तुम्हें देखने चला आया ।" तनिक रुक कर उसने फिर पूछा—"कोमली सच-सच बताना । अकेली हो इसलिए साहस बटोर कर पूछ रहा हूं, मुझे पसंद करती हो ?

दिन होता तो वह यह प्रश्न न करता । कोमली एक कदम आगे जाकर चांदनी में खड़ी हो गयी । सफेद साड़ी उसके तन पर बहुत फब रही थी ।

वह तुलसी के टूटे चौरे पर जा बैठी । नन्हा-मुन्ना शरीर, गीलेपन को सुखा पाने की भी शक्ति नहीं थी उसमें, थका हुआ था ।

"हां उसके ओंठ शून्य का आकार बनाकर सिकुड़ गये । पसंद ही कहूं तो क्या करोगे ?"

दयानिधि उसकी ओर बढ़ा तो वह उठकर दूर चली गयी ।

"बाप रे ! पास मत आना । अम्मा देखेगी तो हड्डी पसली एक कर देगी ।"

"इसका मतलब तुम मेरे साथ रहना चाहती हो । क्यों ?"

"नहीं ।"

"अच्छा । अगर मैं तुम्हारे पास रहूं तो तुम्हें अच्छा लगेगा कि नहीं ?"

"अच्छा लगेगा ?" वह लजाकर हंसने लगी। शशिमुख ने शरमा कर मेघों का घूंघट डाल लिया। पेड़ों के बिना अपने आप फूट निकली लताओं की भांति पतली-पतली हंसी उसके मुख पर फैल गयी।

"फिर से एक बार हंस दो ज़रा।"

"ठिठोली मत करो। आप ठहरे बाम्मन और बड़े आदमी।"

"तुम्हें तो बड़े आदमियों से दोस्ती अच्छी लगती है न ?"

"डर लगता है।"

"क्यों ?"

"तुम बड़े हो—इतनी बार मेरे घर आये पर मेरे लिए कभी कुछ भी ?"

"तुम्हारी मां ने मांगने को कहा है ?"

"छि:, हम लोग पेशा नहीं करते—ऐसी बातें आप बड़े लोगों के घर में होती होंगी।"

"कोमली ऐसी बातें नहीं करते।"

"हम छोटे लोग नहीं कर सकते पर आप कर सकते हैं, क्यों ?"

"तो फिर तुमने पैसे की बात क्यों उठायी ? मैं तुम्हें रुपये दूं तभी तुम मुझे अपने पास रहने दोगी ?'

"बस, बहुत हो गया, उल्टी बातें बनाते हैं। जाइये, अपने घर का रास्ता नापिये। अम्मा आयेगी तो कचूमर निकाल देगी। मुझे न आप चाहिये न आपका पैसा। अब जाइये···यहां से।"

"रूठो मत रानी। अच्छा तो कल सरकस दिखाने ले जाऊंगा। चलोगी न मेरे साथ ?"

"छि: रिश्वत देते हो। तुम्हारे बापू जैसे नहीं हैं हम लोग। रिश्वत वो लेते हैं हम नहीं। समझे ?"

"तुम्हें यह बात कैसे मालूम हुई ?"

"लोग-बाग कह रहे थे। कृष्णमाचारी ने बताया।"

"तुम्हें ऐसी बातों पर विश्वास नहीं करना चाहिए। खैर ! कल हम दोनों मिल कर सरकस देखने चलेंगे। बोलो चलोगी न ?"

"नहीं।" सरकस में शेर, चीते, भालू होते हैं मुझे उनसे डर लगता है। मुझे साथ ले जाने के लिए पैसा कहां से लाओगे ? तुम्हारे बापू तो तुम्हें कुछ

देते ही नहीं ।" कहते हुए कोमली ने दयानिधि के पास जाकर उसकी जेबें टटोलीं और उनमें से घास का तिनका बाहर निकाला । "यह क्या ? तिनका ? छि: —रख लो संभालकर, तुम्हारे ही काम आ जायगा ।"

दयानिधि ने उसके हाथ से तिनका लेकर कलाई पकड़ी और तिनके को उसके बालों में खोंसना चाहा । यह पहला अवसर था कि दयानिधि ने कोमली का शरीर छुआ था । दयानिधि का अंग-अंग यह महसूस कर रहा था कि कोमली केवल उसी के लिए बनायी गयी है । स्पर्श से उसका शरीर कांप उठा । समुद्र की लहरों पर उठा फेन ज्वाला बनकर आकाश को छूने लगा तो दयानिधि को लगा कि उस ज्वाला का शमन कोमली का शरीर ही कर सकता है अन्य कोई वस्तु नहीं । कोमली ने उसका हाथ झटक दिया और तिनके के दो टुकड़े कर उसके मुंह पर फेंक दिया और बोली —

"छि: घास और मिट्टी ! मिट्टी मुंह में देनी चाहिये न कि सर में ?"

इस मुहावरे का प्रयोग कोमली ने किस संदर्भ में किया दयानिधि समझ न पाया । मुहावरे का प्रयोग कर सकने लायक भाषा-संस्कार कोमली में नहीं था । फिर भी दयानिधि इतना तो समझ गया कि मुहावरे के इस बेतुके प्रयोग में काफी आक्रोश और व्यंग्य भरा है । दयानिधि को क्रोध भी आया । नसें भिच रही थीं । धमनियों में खून उफन कर भटकने लगा था । "नहीं । कुछ नहीं मिलेगा कुछ भी नहीं मिलेगा— शरीर प्रवंचित और मन कुंठित हो गया था । किसी का भी स्पर्श न पाये छूटे तीर की भांति सभी अंग दिशाहीन हो पकड़ से छूटते जा रहे थे । सभी नद-नाले दु:ख-सुख जैसे ऊबड़-खाबड़ और संकरियों से बहकर महासमुद्र में जा मिलते हैं और परिपूर्णता प्राप्त करते मुक्ति पा लेते हैं । पर उसके शरीर में तो यौवन घुसपैठिया बनकर मनमाना खिलवाड़ करता है पर अशमन नहीं करता और न ही विमुक्ति देता है । दो हरी चूड़ियां किवाड़ों के छेद से दिखीं साथ ही दस्तक से उठी हल्की ध्वनि भी सुनायी दी । कोमली ने किवाड़ खोलकर देखा, कोई नहीं था ।

"चले जाओ, मुझे काम है अब कभी मत आना ।"

"यूं ही आकर देख भी नहीं सकता ?"

"क्या रखा है देख जाने में ? खाली नज़रों के नज़राने ही तो हैं ।"

"इतना मिल जाय बस । मैं उससे ज्यादा कुछ नहीं चाहता ।"

इतने में दूसरा कोई व्यक्ति भीतर आया। आगंतुक ने सर पर का अंगोछा निकाला और उसे झाड़ कर कंधे पर डाल कर खड़ा हो गया। दियासलाई के लिये जेब टटोलने लगा।

"आइये आचारी जी—आग लाऊं?" कोमली ने आगंतुक का स्वागत किया।

"क्यों री दोपहर आकर भी तूने अब तक खबर नहीं भेजी ?"

"अम्मा ने नहीं दी खबर ? मंदिर से सीधे आपके घर जाने की बात कह रही थी।"

"नहीं तो—तो क्या इस समय तू ही चूल्हा चौका कर रही है ?"

"चावल चढ़ा दिये हैं, आप खाना चाहें तो अंडों की कढ़ी बना दूंगी।"

"बस कर, अंडे जैसा मुंह लेकर तू क्या बनायेगी खाना ? जा जल्दी बाल संवार कर आ।"

दयानिधि दोनों की बातें सुनकर ठिठक गया—"कोमली, तो मैं जाता हूं।" आकाश की ओर देखता हुआ बोला। दोनों में से किसी ने उसकी बात नहीं सुनी। आचारी तुलसी के चौरे पर बैठने लगा तो कोमली बोली—"ठहरिये, कपड़े खराब हो जायेंगे। चारपाई डाल देती हूं और दीवार के साथ लगी चारपाई लाकर कुएं की जगत पर बिछा दी। उसका एक पाया ज़रा छोटा था जमीन नहीं पकड़ता था।

"आचारी जी" मेरा मुंह तो आपने मुर्गी का अंडा बताया तो जरा बताईये न आपका अपना मुंह कैसा है ?"

"मुर्गे जैसा—क्यों ठीक है न ?"

"कोमली हंसते हंसते लोटपोट हो गयी। आचारी को हाथ देकर उठाया और चारपाई पर ला बिठाया। "पानी पियेंगे न ?"

"अहा। अथिति का तूने उचित सत्कार किया है। श्रद्धा भक्ति सहित पत्र फल पुष्प तोय ..

कोमली हंसते हुए भीतर जाकर लोटे में पानी ले आई।

"तो मैं जाता हूं।" दयानिधि ने उदास होकर कहा।

"जाओ जी, तुम क्या ले जाओगे, सर्कस तो मैं आचारी जी के साथ जाऊंगी।"

"हां मैं उसी के लिए तो आया हूं। जल्दी खाना खाकर चलेंगे दोनों।"

दयानिधि उठकर बाहर चला आया। बाहर गली में चारों ओर देखा। पेड़

से झर कर सूखे पत्ते खड़खड़ा रहे थे कुत्ता भौंक रहा था । कोमली ने किवाड़ खोलकर एक बार इधर उधर देखा और फिर खटाक से बंद कर भीतर से सांकल चढ़ा दी । दयानिधि कुछ पूछना चाहता था पर पूछ न पाया । कोमली को वह समझ नहीं पाया । कोमली पर वह मरता है पर वह तो सीधे मुंह बात भी नहीं करती । करती भी है तो ताने देकर । उसका अपना यौवन, सुडौल, सुंदर शरीर, वंश की कुलीनता कुछ भी तो कोमली को आकर्षित नहीं करते । हो सकता है कोमली का शरीर ही किसी का आकर्षण पाने योग्य विकसित नहीं हुआ है । वह एक बारूद भरी पेटी है कोई उसे आग लगायेगा तो जरूर उससे चिंगारियां फूटेंगी ।

"उफ् कितनी उपेक्षा ? कितना निरादर करती है ? पर क्या यह सब कुछ उसके मन की सहज बातें हैं या फिर सब दिखावा है ? समझने का अवसर भी तो नहीं देती । अगर यह सब उस का दिखावा हो तो वह बिलकुल नहीं सह सकता । उसे माफ भी नहीं करेगा । माफ नहीं करेगा तो करेगा क्या ? कुछ भी तो नहीं । ओह ! वह अपना शिकार नहीं छोड़ सकेगा । अंगों में तनाव आ गया है । नसें कस गयी हैं । पतली पतली हड्डियां ठंडे शरीर का मांस—क्या इन्हीं दोनों की प्राप्ति के लिए उसका शरीर उसे दास बना देगा ? आखिर वह क्या चाहता हैं ? अपने आपसे वह टकराया । क्या वह कोमली से उत्तम संस्कार की अपेक्षा करता है ? ऊहूं ! यह चीज तो उसमें नहीं के बराबर है । वह इसकी अपेक्षा नहीं करता । यौवन एक शक्ति है जो पीढ़ी दर पीढ़ी व्यक्तियों को जला कर राख करती आई है । सृष्टि को भेदने वाली इस महती शक्ति को संस्कार, रूप, रंग, सौष्ठव, नक्काशी चक्करदार गलियों में भटकाकर फिर उद्गम में ला पटकने वाली मेधा और मानस की सीढ़ियों से इस शक्ति का कोई संबंध नहीं । कौन सी अच्छी शिक्षा और विद्या उस अस्थि-पंजर में बसी मांस पिंड की मूरत को बदल सकती है ? मेधा और मन दासता के बाधक हैं सो वह कोमली में किसी भी प्रकार के संस्कार, शिक्षा और विद्या की अपेक्षा नहीं करता । तो आखिर चाहता क्या है वह ? वंश, गौरव, कुल अभिमान ? नहीं । बिलकुल नहीं । काश, वह स्वयं कोमली के कुल में जन्म लेता । पर कोमली की ही चाह क्यों है ? उसके अपने ही कुल में विवाह के योग्य कई लड़कियां हैं उन्हीं में से कोई एक क्यों नहीं पंसद आ गयी ? कैसा

दुर्भाग्य है, कोमली का खानदान कुल की मर्यादा उसके अपने कुल से बिलकुल अलग है। क्या यही भेद कोमली के प्रति आकर्षण का कारण तो नहीं बनते ?"

सिर्फ उसे कोमली चाहिये, उसके स्थान पर दूसरी कोई नहीं। कोमली के तन के प्रति अपनी इस दासता से उसे अपने आप पर खीझ हो आई। वह कोमली को भूल जायेगा बिलकुल मन से हटा देगा। तन की भूख मिटाने के लिए भारत में करोड़ों स्त्रियां है।

जम्हाई लेना तक नहीं आता। बिलकुल बच्ची है कोमली। उस पर खीझने से क्या होगा। दुनियां कोमली से बहुत कुछ अपेक्षा रखती है वह मां बनकर स्त्रीत्व की गरिमा रखेगी, सृष्टि को एक पुण्य प्रदान करेगी। पर वह स्वयं किस काम का ? डाक्टर बनेगा ठीक है इससे दुनियां को क्या मिलेगा ? वह मर जाता तो कितना अच्छा होता, कम से कम वे सारी मुसीबतें तो नहीं रहतीं। डाक्टर और अध्यापक मर कर ही समाज के लिए उपयोगी बनते हैं। अध्यापक के मरने से विद्यार्थियों को एक दिन की छुट्टी मिलती है, डाक्टर के मरने से पैसे न दे सकने वाले रोगियों को आराम मिलता है। जैसे कोमली आपरेशन टेबिल पर लेटी हुई है उसने कल्पना की इस दृष्य की कल्पना से उबकाई आ रही है, एक एक अंग को उसने चीर कर काट कर फेंक दिया। पर फिर सब आपस में जुड़ गये और उसे चिढ़ाने लगे—छिः यह सब कैसी बेतुकी बातें सोच रहा है ?

सोचते सोचते वह घर पहुंच गया। सामने कोई मेला लगा था। सिर पर कुछ रखे तीन व्यक्ति उछल रहे थे। कुछ तीखी बेसुरी आवाजें कान के पर्दों को चीर रही थीं। भीड़ में अपनी सुध खोया खड़ा था नारय्या। कुटुंबय्या की बेटी श्यामला मकान के आगे चबूतरे पर खड़ी तमाशा देख रही थी। वह दूर नाले के पास खड़ा उन सबको देख रहा था। घर के भीतर जायेगा तो बापू डाटेंगे, पूछेंगे कि कहां गया था। नारय्या ने बात लगा दी होगी। सबके सो जाने पर आहिस्ते से भीतर जायेगा और खटिया डालकर पड़ा रहेगा तो रात निकल जायेगी। सुबह तक वातावरण ठंडा हो जायेगा। आठ बज रहे थे। ग्यारह से पहले कोई नहीं सोता।

तब तक वह क्या करेगा? कोमली कृष्णमाचारी के साथ सरकस जाने को कह रही थी। वह खुद भी जायेगा। सरकस की भीड़ में छुपकर कोमली को

चुपचाप देखेगा। शायद उसकी मां भी आये। उस हालत में कृष्णमाचारी कुछ ऐसी वैसी बात नहीं करेगा। फिर भी वह देखेगा कि कृष्णमाचारी के क्या इरादे हैं। चार महिने पहले दोपहर की नींद से जगी कोमली का चेहरा उसे याद आया। लगता था कि दुनियां के असंतोष का पूरा बोझ उसकी पलकों पर है। नींद में गोलाई से चौकोर में परिवर्तित हुए लड़की जैसे कंधे, दयानिधि की आंखों में तैर गये। गरमी इच्छा या आकर्षण कुछ भी नहीं था उस वक्त कोमली में। कोई एक हाथ भी तो मन पटल पर स्थिर नहीं रहता। किसी के बारे में जितनी कल्पना करो वह उतना दूर होता जाता है। कोशिश न करने पर कुछ देखते सुनते समय अचानक वह वांछित व्यक्ति घुसपैठिया बनकर मन: पटल पर उतर आता है और अपनी प्रतिमा को आप ही रंग देता है। इस प्रतिमा को आमंत्रित कर मन में बिठा लेना था। उसे भगा देना किसी के बस की बात नहीं।

निधि ने अपनी जेब टटोली। थोड़ी सी रेज़गारी पड़ी थी। सरकस देखने के लिए टिकट लगता था। घर से निकलते समय पैसे का बटुवा भूल आने पर उसे अपने आप पर खीझ हुई। सोचा, सरकस के पास कोई न कोई परिचित व्यक्ति मिल ही जायगा। थोड़ी सी झूठ बोल देगा कि पर्स कहीं गिर गया है तो मैनेजर भीतर जाने देगा। न भी जाने दे तो क्या है वह सरकस देखने तो नहीं जा रहा है। आम खाने से मतलब है न कि पेड़ गिनने से। डेरे पर कुछ इधर उधर सूराखें तो होंगी ही। कुछ न हुआ तो उसी में झांक लेगा। खेल शुरू हो जाने पर टिकट फिर कोई नहीं मांगता। अगर न भी हुआ तो खेल खत्म होते ही कोमली बाहर आयेगी। तभी सही। किसी न किसी भांति देख तो सकेगा। उसके पैर अपने आप चलने लगे। मनुष्य को शायद विचार वर्तमान से बचकर भाग निकलने के लिए ही मिले हैं ? बीती बातों को पुन: पुन: सोचता और भविष्य की कल्पना करता रहता—विचारों का सिर्फ यही काम है ? वर्तमान से वह कभी साक्षात्कार करना नहीं चाहता उसका परिणाम ? आधे अधूरे विचार दिमाग की थकान और शरीर को कष्ट यही सब कुछ तो है।

वह सोच रहा था, भैया झगड़कर चले गये। उस दिन अम्मा के संदूक को घर से बाहर फेंक कर फौरन उसे चले जाने को कहा था। कहां जाती वह ?

उस दिन वह बीच बचाव न करता तो वह परिवार कब का टूट चुका होता। कोमली को पाने के लिए उसके मन में कितनी पीड़ा है इसे केवल अम्मा जानती है। उसे उसका खून बलबलाता है। हृदय की बात वह समझती है, इसीलिए अम्मा उसे डांटती नहीं बल्कि हामी भर देती है। काश ! दुनियां में सबके पास अम्मा का जैसा विशाल हृदय होता। ऐसे विशाल हृदय वालों को समाज कोसता है। समाज व्यक्ति का सुख और कल्याण नहीं चाहता। वह चाहता है नम्रता और आदर्श जो सुख समाज को नहीं मिलता, यदि वह किसी को मिलता हो तो समाज उसके रास्ते में दीवारें खड़ी कर देता है।

समाज को ही क्यों दोष दिया जाय ? उसने किसी का क्या बिगाड़ा ? वह भी तो सिर्फ इतना ही कहती है-मात्र अपने सुख की चिंता करो और इससे तटस्थ रहो तो तुम्हारे साथ दूसरे भी सुख से जी सकेंगे। सो मेरे बनाये नियम और बंधनों को मत लांघो, होशियारी से इन्हीं घेरों के भीतर अपना जीवन जीते रहो। चाहे नीति कह लो या परंपरा जब तक तुम समाज में हो, इन चौखटों से तुम्हारा पीछा नहीं छूटेगा। तारों को अपनी पकड़ से छूटने नहीं देती बल्कि चलाती रहती है यह नियति, सूरज और चांद भी इससे असंपृक्त नहीं हो सकते। पेड़, नदियां, पहाड़ भी इसके आगे नतमस्तक हैं। नियति ने सृष्टि समेत सभी का मुंह बंद कर रखा है।

कोमली भला इन बातों को क्या समझेगी ? कोमली के लिए उसका मन कितना तप रहा है ! कैसे जताये उसे ! कभी वे एक ही शरीर थे, जाने यहां इस दुनिया में आकर क्यों अलग हो गये ! उसका अपनापन मिटकर कोमली में मिल जाना चाहे तो दोनों को कैलाश पर्वत से प्रवाहित होने वाली नदी में बहकर मर जाना होगा। वह मानता है कि उसका प्रेम पवित्रता से उफनने वाला प्रेम नहीं है, और न ही प्रेरणा पाकर कवियों द्वारा लिखे जाने के लिए सामग्री प्रस्तुत करने वाला प्रेम है। यह तो एक रोग है, जड़ता है, कोई उसके लिए उत्तरदायी नहीं। वृद्धों, नीति के नियमों, औचित्य व समाज इनमें से किसी एक को भी दोष देना उचित नहीं। उस में जो शक्ति उत्पन्न हुई है कोमली में जाकर मिल जाने पर ही समाप्त होगी।

मेघों द्वारा निर्मित बाधाओं को अपने चारों ओर के चक्र से हटाता चांद सरकता जा रहा था। मकानों की खपरैलों से निकलता धुआं बड़ी अदा के

साथ आकाश की ओर बढ़ रहा था । कीट पंतगे हवा के दबाव का सामना न कर सकने के कारण अबोध बन इंसानों के चेहरों से टकरा रहे थे । सूखे पत्ते गाड़ियों के पहियों के नीचे चरमरा रहे थे । दूर कहीं कौए की बेतुकी कायं कायं, कुत्ते की अर्थहीन आवाज, लोटे से पैर धोते हुए पानी गिरने की आवाज, जूठे पत्तल फेंकने की आवाज करीब आकर डूबती चली जा रही थी और उसमें से उभर रहा था सरकस का बैंड जो मंदिर के घंटों की आवाज पर हावी होता जा रहा था । ··· प्रकाश, मंद होते दीप, झुंड का शोर शराबा । मानव समूह आनंद प्राप्ति के लिए जुटा हुआ था । इस समूह में कोमली कहीं भी नहीं दीखी और न ही आजानुबाहु कृष्णमाचारी ही । कहीं भीतर होंगे । कामाक्षी साथ न देकर क्या उन दोनों को ही भेज देगी ?

"भीतर पधारिये बाबू ।"

"सरकस देखने नहीं निकला । यूं ही सैर करने आ निकला हूं ।"

"बड़े बाबू नहीं आये क्या ? आज तो मोटर साईकिल वाला कुएं में कूदेगा। देखने लायक तमाशा है । थोड़ी देर सही, बैठ कर चले जाना ।"

"बापू को निमंत्रण भेजा होगा वर्ना वह मुफ्त में क्यों भीतर भेजता ? भीतर जाकर बैठ गया । वह रहा गोपालराव नायडू, बीबी बच्चों सहित । उनका दूसरा लड़का न जाने क्या कर रहा है ?" दूर से शेर दहाड़ रहा था । निधि ने इधर-उधर नजर दौड़ायी--वे दीखे नहीं । दोनों ने मिलकर उसे धोखा दिया है । पर घर में दोनों अकेले भला क्या करेंगे ? कोमली की मां फौरन आ गयी होगी । उफ् भीतर कितनी गर्मी है ? हवा भी तो नहीं । डेरे की सूराखों से सिर पर तारे चमक रहे हैं । इन तारों को बिना पैसों के हर कोई देख सकता है । शायद कोमली बैठी इन्हीं को देख रही होगी । उसकी आँखें तो लगती हैं, मानो बादलों से झांकते दो तारे हैं । और उस पर सफेद साड़ी, चंदा पर से पीला झीना आवरण-सा हटा बादल है । कब तक आखिर इन उपमाओं और समानताओं की कल्पना से तृप्त होता रहेगा ?

अभी खेल शुरू नहीं हुआ--"शायद आधे रास्ते में होंगे ।" फाटक के पास खड़ा रहा तो अवश्य उन्हें देख सकेगा । हां यह बात और है कि वे मुखौटे चढ़ा कर न आयें । कुछ भी कर सकते हैं । सुना था कृष्णमाचारी नाटक में औरत बनता था—जाने किसने कहा था । कोमली को नेकर कमीज पहना दें तो

बिलकुल लड़का लगेगी । पर बालों का क्या करेगी ? "तेरे मेरे बीच परछाई-सी आड़े आई, निशीथ-सी निविड़ अलकावली" जाने किस कवि का यह भाव है ? वह सोच रहा था "भाव बड़े ही विचित्र होते हैं । हमारे अपने ही भाव कभी-कभी बिलकुल अपने नहीं लगते और कभी-कभी दूसरों के भाव अपने लगने लगते हैं । सच पूछो तो भावों में नयापन कहां । सब वही पुराने के पुराने हैं । भूख, प्यास, नींद, आकर्षण, असंतोष जीवन के प्रति अनुराग सभी के लिये समान होते हैं । उनमें नयापन कहां से आयेगा ? भाव व्यक्तियों को निकट लाते हैं पर भावों को व्यक्त करने का आधार भाषायें उन्हें अलग करती हैं । जीवन के प्रति मोह की बात ही ली जाये ? मरने के लिए कोई भी तैयार न होगा । मरने के बाद भी जीवित रहने की इच्छा होती है और उसके लिये दूसरा लोक स्वर्ग, स्वर्ग के अधिपति और आत्मा का वहां जाकर शाश्वत बस जाने की कामना, अगर यह संभव न होने पाये तो पुनः कई जन्म लेने, मानव जन्म पाने और तब आत्मा को शुद्ध करके पुनः ऊपर जाकर परमात्मा में लीन हो जाने की इच्छा इन सब बातों की जीवन और जिजीविषा के कारण ही मानव ने कल्पना कर डाली । मनुष्य इन सब की कल्पना करके भी चुप न हुआ । जीवन असार है, शरीर माया है, जीवन सपना है, परमात्मा में जीवात्मा का मिल जाना ही परम सत्य है आदि सिद्धांतों की स्थापना भी कर ली है इस जीवन के प्रति अनुराग भावना में ।"

बैंड की आवाज —एक गैस लाइट के साथ एक भीड़ उसी की ओर आ रही थी । शायद कोई जुलूस था, कोई उसके बीच खुली मोटर में बैठा हुआ था । उसके गले में फूलों की माला थी । सुंदरम जैसा लग रहा है । क्लब में सुंदरम के साथ उसका परिचय हुआ था । कोई मन-ही-मन समाचार पत्र पढ़े तो उसे सुंदरम पसंद नहीं करता था । सबसे पहले खुद समाचार पत्र बटोर लेता और एक कोने में जाकर दस लोगों को इकट्ठा कर, उसमें से उन्हें ताजे समाचार पढ़कर सुना ले, तभी उसका दिल भरता था ।

"यह सब क्या है, यह भीड़ कैसी ? ' एक व्यक्ति से उसने प्रश्न किया ।

"सुंदरमजी कलकत्ते के कांग्रेस से सकुशल लौटे हैं ।"

दयानिधि पूरी बात समझ गया । असहयोग आंदोलन को तीव्रतर बनाने, हरिजनोद्धार के कार्यक्रम में सहायता देने के लिए, रहस्यपूर्ण क्रांतिकारी आंदोलन

समाप्त करने का निश्चय लेने के लिए कलकत्ते में कांग्रेस अधिवेशन बुलाया गया था। इसकी खबर पाकर ब्रिटिश सरकार ने अधिवेशन का निषेध किया। अधिवेशन में भाग लेने के लिए जाते हुए नेताओं को बीच रास्ते में गिरफ्तार कर लिया गया। इतनी बाधायें होते हुए भी ग्यारह सौ कार्यकर्ता अधिवेशन में उपस्थित हुए। सरकार की लाठी की मार का सामना करते हुए सात निर्णय पढ़कर सर्वसम्मति से उनका अनुमोदन किया। मार खाकर वापस लौटने वालों में सुंदरम एक था। जनता उसे आश्चर्य से देख रही थी, उस पर गर्वित हो रही थी।

व्यक्तिगत जीवन में अपनी जिन बाधाओं का कोई कूल किनारा नहीं दिखता तो राजनैतिक क्षेत्र व्यक्ति के लिए आदर्श बन जाता है और वही उसके जीवन का लक्ष्य भी। दयानिधि को लगा कि वह भी इस आंदोलन में शामिल हो जाये। आजादी भी एक तरह की भूख होती है। राजनैतिक और भौतिक आजादी न बुझने वाली प्यास होती है। इसके मिटने के बाद ही मानसिक और नैतिक स्वातंत्र्य का कोई मूल्य होता है। एक प्यास है तो दूसरी भूख होती है दोनों में किसे तरजीह दी जाये ? उपवास करके गांधी जी ने प्रमाणित कर दिया कि बिना भोजन के कुछ समय तक जीवित रहा जा सकता है, पर क्या इक्कीस घंटे ही सही, बिना पानी के रहा जा सकता है ?

"छोटे बाबू ! तुम यहां हो ?" निधि ने सिर घुमा कर देखा।

"तुम अकेले आये हो नारय्या ?"

"आपके लिये पूरा शहर छान डाला। कामाक्षी के घर भी गया था···।"

"कोमली थी वहाँ ?"

"जाएगी कहां ? घर पर मजे में लेटी थी। आखिर दूधवाली ने बताया कि आप सर्कस देखने गये थे।"

"आखिर मेरे बारे में इतनी चिंता तुझे क्यों होती है, नारय्या ?"

"क्या बताऊं छोटे बाबू ! भैया बाबू के जाने के बाद से मांजी बहुत घबरा रही हैं, दिल का दौरा बढ़ गया, आप जहां भी हों जल्दी से ढूंढ लाने को कहा है।"

"बेहोश हो गयी क्या ?"

"बेहोश ही होंगी। मुंह से बात नहीं निकल रही है --बड़े बाबू खुद डाक्टर

को लिवाने गये हैं और मुझे आपके पास भेजा है । गाड़ी लेकर चले जाइये । मैं ज़रा बाज़ार जाकर शहद खरीद लाऊं ।"

"नारय्या । तुम कामाक्षी के घर क्यों गये । मां ने जाने के लिए कहा था क्या?"

"ये बातें बाद में होती रहेंगी बाबू । आप जल्दी घर जाइए ।"

दयानिधि घर की ओर मुड़ा । भैया के चले जाने का मां की बेहोशी से कोई संबंध नहीं है । कभी-कभी तो इससे पहले भी बेहोश हो जाती थी । उसके शरीर में खून तो बिलकुल नहीं है । नसों की कमज़ोरी है । मां का मस्तिष्क हमेशा कुछ-न-कुछ सोचता रहता है और कोई दुर्घटना ला देता है । डाक्टर की दवाइयां उन्हें बिलकुल पसंद नहीं । "घर की सारी परेशानियां ज्यादातर उसी ने मोल ली हैं । उमर ढल रही है—आराम से बैठकर गृहस्थी क्यों नहीं चलाती । पति कमा रहा है, बड़े बेटे की बहू आ गयी है । कम-से-कम अब अपने जीवन को क्यों नहीं एक रास्ते में ढालती और गृहस्थी चलाती ?" कितने लोगों ने समझाया, उपदेश दिये, डराया, धमकाया, गाली दी और घर से भेज देने की बात भी कही । मामा गोविंदराव ने पूछा था—"क्यों रे, अम्मा को भेज देना तू पसंद करेगा, कितने बड़े साहस का काम है भेज देना । सुना है कि भैया ने हामी दे दी और पिताजी कुछ समझ पाये तौलिये में मुंह छिपाकर बैठे रहे । वह खुद कह पाया था "नहीं ।" आखिर वह जाएगी कहां ? कुतंत्रों में फंसकर रहस्यमय मूक वांछा लिए बाहर न पता लगने वाली चाल चलने से उसे गृहस्थी में सड़ते रहना और अपने आपको सभ्य समझते रहने का नाटक करते रहना और उसी दिखावे की गृहस्थी में सड़ जाना चाहिए । हिंदू परिवार भला कैसे टूटेंगे ? परिवार में एकता के लिए सिर्फ दिखावा काफी है दूसरी किसी बात की आवश्यकता नहीं । पति के बुरे आचरण को जानते हुए भी पत्नी को उसे न जानने का दिखावा करना चाहिए और ज़रूरत पड़े तो पति के उस आचरण का समर्थन भी करते रहना चाहिए । पत्नी अगर किसी दूसरे पुरुष से प्रेम करती है तो पति की नज़र बचाकर ही कर सकती है । अगर पति रहस्य को जान ले तो उसे पत्नी को क्षमा कर देना होगा । बेटा बदचलन बाप की करतूतों को किवाड़ की छेदों से देखे और बिलकुल अनजान बनकर रह जाए । ये सारी बातें आदर्श हिंदू समाज में पत्थर की लकीर हैं जो न मिटेंगी न इन्हें कोई मिटा पायेगा ।

गोविंदराव के घर में भी तो यही सब होता है फिर वह महाशय अपने परिवार को न सुधार कर दूसरों की बातों में क्यों टांग अड़ाते हैं ? कालेज में उनका बेटी पढ़ती थी तो कितनी बार उसका नाम दीवारों पर लिखा और मिटाया गया और फिर लिखा गया । कालेज से उसका नाम कटवाना, लिखवाना, फिर कटवाना कौन नहीं जानता ? वही महानुभाव अब हमारे परिवार को संवारना सुधारना चाहते हैं । ऐसे ही लोग सबके लिए मुसीबतों की सृष्टि करते फिरते हैं। दूसरों को सुधारने के लिए हर तरह से तैयार रहने वाले ये ही खुद समाज को आगे नहीं बढ़ने देते । हर एक की अपनी परिस्थिति अलग होती है और बुद्धि का विकास अलग ढंग से होता है। पर सभी को एक ही रास्ते पर, किसी एक व्यक्ति के आदेश पर चलने को विवश होना हमारा दुर्भाग्य है । हर व्यक्ति अपने जीवन की आप चिंता करे और दूसरे उसके जीवन में दखल न दें तभी दुनिया सुधरेगी । वह दोपहर तीन बजे घर से निकला था पागलो की भांति, और अब दस बज रहे हैं । अपनी समस्या पर विचार करने का साहस नहीं था सो अब तक कोमली के बारे में सोचता रहा और वर्तमान से कुछ देर ही सही तात्कालिक मुक्ति पा सका । कोमली के प्रति जो मोह उत्पन्न हुआ था, उसे लगा कि वह भ्रम मां ने घर में जो चक्रव्यूह रचा था उससे भागकर बच निकलने के लिए एक अच्छा अवसर था । शरीर तो उस व्यूह से बच निकला पर मन और मस्तिष्क वहीं जकड़ा रह गया था, उसे कैसे बचाता ?

दयानिधि लोकल फंड डिस्पेंसरी पार करके पुलिया के पास पहुंचा । अस्पताल के दरवाजे बंद करने की आवाज़ सुनायी दी । दूर कारखाने में छुट्टी का भोंपू बज रहा था । लोगों की भीड़भाड़ कम हो गयी । दूर कोई लड़का ऊंची आवाज़ में कुछ गा रहा था । गाड़ियों में जुते घोड़ों की हिनहिनाहट, बैलों के गले में घंटियों के अलावा पूरा वातावरण निस्तब्ध था । रह रह कर जुगनू चमकते थे । चांदनी से पेड़ों की धुंधली छाया चमक रही थी वह पुल के नुक्कड़ पर पहुंच कर मुड़ा ।

"इतनी रात तक यहां घूम रहे थे ?" वह चौंका । किसी ने कंधा पकड़ कर झकझोरा था । कुछ देर तक हक्का-बक्का खड़ा रहा । मुंह से बोल नहीं फूटे ।

"तेरी मां ने तेरे भैया को गांव भेजकर ही दम लिया। सुन· रहा है न ? बोलता क्यों नहीं ?"

"हां—सुना है। बात क्या हुई ?"

"इसकी चिंता तुझे क्यों होने लगी ? हमेशा सैर सपाटे और अपने ही ख्यालों में डूबे रहने के सिवाय तुझे इन बातों की परवाह क्यों होने लगी ?"

"बताते क्यों नहीं कि क्या बात हुई ?"

"हर गंदी कोठरी में जाकर घुसता रहेगा—उस पर इतनी खीझ और अकड़ नहीं दिखलायेगा तो आदमी थोड़े ही कहलायेगा।"

"मैं किसी की कोठी वोठी नहीं चढ़ा बप्पा ! घर में रह नहीं गया।तो थाड़ी देर नहर के किनारे अकेले बैठने का मन हुआ सो—"

"कामाक्षी की बेटी के साथ—"

दोनों कुछ देर मौन चलते रहे—"तेरी मां को दौरा पड़ा-था—जानता है न ?

"हां नारय्या बता रहा था।"

"ऐसे जवाब देता है जैसे इन सब से तेरा कोई वास्ता नहीं।"

"दोपहर को जब घर से निकला तब तो अच्छी भली थी।"

"ऐसे दौरे पड़ना तो उसकी आदत सी हो गयी है। सचमुच का दौरा पड़ा होता तो बात थी, यह भी एक नाटक है उसका। घर में कोई बात हो जाय तो बस उसे दौरे पड़ने लगते हैं और वह खटिया चढ़ जाती है, और मेरे सिर मढ़ देती है। डाक्टरों की फीस और यह भाग दौड़। डाक्टर पीठ पीछे हंसते हैं इस नाटक को देखकर।"

"बप्पा ! मुझे नहीं लगता कि मां नाटक करती है। उसके शरीर में खून बिलकुल नहीं। दिन पर दिन कांटा बनती जा रही है। फिर भी दवा नहीं लेती इस पर भैया के ताने और चीखना चिल्लाना। भाभी का पहाड़ सिर पर उठा लेना, आपकी झड़पें और शोर शराबा—मुझे तो लगता है कि अपने घर में तो पुरुषों को ही अकसर दौरा पड़ा करता है।"

"ओह ! तो हमारे साहबज़ादे अपने अमूल्य विचारों की सीख दे रहे हैं। धन्य हो धन्य ! हां—मां की तरफदारी नहीं करोगे तो कामाक्षी की बेटी के साथ तेरा नाटक कैसे चलेगा तभी तो मैना की तरह बड़े ही मीठे लहजे में बोली थी—"कामाक्षी के घर होगा बुला लाओ—"

"तेरे नाटक वह चलने देती है, तुझे उस रंडी के घर भेजने का इंतज़ाम तेरी मां करती है तो तू उसका बेटा है वह जो नाटक खेलती है उसमें उसकी मदद करता है।"

"बस—चुप भी कीजिए बप्पा ! मैं अब आगे नहीं सुन सकता। इस सड़क पर इतनी ज़ोर से कह रहे हो कोई सुनेगा तो—"

"यह कोई रहस्य की बात थोड़े ही है कि लोग आज सुनेंगे ! जाने कब से दुनियां जान गयी है ये सारी बातें। अब तू और मैं छिपाकर रखेंगे तो छिपी रहने वाली बात नहीं है। तू बाईस पार कर चुका है। अब तक तेरे लिए क्यों कोई रिश्ता नहीं आया, कभी तूने भी जरा इस पर सोचा है ?"

"मेरे लिए कोई रिश्ता न आने पर दुनियां का कुछ नहीं बिगड़ता और न ही मुझे इसकी कोई चिंता है।"

"हां—चिंता क्यों होगी तेरा खेल जो चलता जा रहा है।"

"बप्पा—आप पढ़े लिखे होकर भी ऐसी बातें करते हैं। आपको शर्म नहीं आती ?"

"तू जो कुछ करता है उस पर तुझे शरम आती तो मुझे भी आती। अब बात पर भड़कता क्यों है ? पढ़ाई के नाम पर पैसा बरबाद करके तू और तेरी अम्मा कौन सा महान काज संवार रहे हैं ज़रा तो बता मेरे लाड़ले ?"

"दयानिधि का स्वर तेज़ हो गया। तीखे शब्द उठते आवेश के कारण मुंह से ठीक नहीं आ पा रहे थे।"

"बप्पा ! मुझे गाली दो चुपचाप सुन लूंगा पर मां को कुछ कहोगे तो अच्छा न होगा। वह बेचारी कुछ नहीं जानती।"

"कुछ नहीं जानती तो कामाक्षी को क्यों बुला भेजा था ?"

"शायद यूं ही कुछ इधर उधर की बात सुनी होगी उसने सो—"

"सुनने तक कहां रही बात ? वह जाने कौन थी कामाक्षी, पराये पुरुष से एक सरकारी नौकर होने का गौरव भी न देकर, बहस करने लगी—कि उसकी बेटी को मैं अपनी बहू बना लूं।"

"क्या उसने यह सचमुच बात कही थी बप्पा ?"

"कह रही थी कि तू रोज़ उनके पिछवाड़े चक्कर लगाता रहता है। शादी के बिना ऐसे एक पराये मर्द का उसके घर आना जाना कहां तक ठीक है आखिर उसे

अपनी बेटी की शादी भी करनी है—सो मुझे मामला तय कर देना होगा। इतना कहकर वह वहां धरना देकर बैठ जायेगी। मैंने उसे बाहर निकाल दिया। अब बता कौन है वह चुड़ैल ?"

"सचमुच बप्पा ! मैं भी नहीं जानता कि कामाक्षी कौन है ?"

"उसका कोई खसम है कि नहीं ?"

"मैं यह भी नहीं जानता। पर इतना जानता हूं कि वह ब्राह्मण नहीं है।"

"उसके कुल गोत्र का पता नहीं, पति का पता नहीं, कई मर्द उसके घर आते जाते हैं ऐसी रांड की बेटी पर तू रीझ गया। वाह रे। इतना पढ़ लिख कर भी अक्ल घास चरने लगे तो किसे दोष दिया जाय ?"

"बप्पा ! आप ग़लत समझ रहे हैं। मैं घूमने जाता हूं तो कभी-कभी कोमली सड़क पर दिखती है बस उससे विवाह करना कामाक्षी जितना आसान समझती है उतना मैं नहीं।"

"तो फिर तू क्या कहना चाहता है ?"

"कुछ भी नहीं। कामाक्षी के कहने भर से यह विवाह नहीं हो जाता। अगर सचमुच ही विवाह की बात हो तो कुल मर्यादा और वंश आदि की यह बात ही नहीं उठती और न ये आड़े आते हैं।"

"हां अब तो बात बनायेगा। शर्म नही आती ? ज़मीन रेहन रख कर तेरी पढ़ाई का खर्चा चला रहा हूं तो मुझ पर इतनी मेहरबानी क्यों नहीं करेगा—।"

"बप्पा ! कुल, वंश, गोत्र और नाम का चरित्र से कोई संबंध नहीं। गौरववान कहलाने वाले कितने चरित्रहीनों को, व्यभिचारियों को हम प्रति दिन देख रहे हैं। अनपढ़ हो तो उसे शिक्षा की ज़रूरत है। संस्कारहीन हो तो उसे अच्छे वातावरण में रखकर अच्छे संस्कार दिये जा सकते हैं, पर सौंदर्य तो मनुष्य दे नहीं सकता—।"

दोनों घर पहुंचे।

"क्यों रे गुरुनाथ ! डाक्टर ने क्या जवाब दिया ?" दशरथरामय्या ने चबूतरे पर बैठते हुए पूछा।

"बाहर गांव से अभी अभी लौटे हैं। कहा है कि खाना खाकर आयेंगे। कंपाउंडर आ रहा है—।"

दशरथरामय्या ने चुटकी भर नास चढ़ायी।

"हूं तो तेरी कहानी काफी दूर तक जा पहुंची है। उस भगोड़ी औरत की बेटी से तू प्रेम लड़ा रहा है और तेरी मां—हां में हां मिलाती हुई तुझे बढ़ावा दे रही है।"

"बप्पा ! मैं फिर कहता हूं मां को इसमें मत घसीटो—।"

"इतनी बड़ी दुनियां में तुझे दूसरी कोई भी लड़की पसंद नहीं उस कुलटा की बेटी के सिवा। तेरे मामा गोविंदराव तुझे अपनी बेटी देने को कहता था तो तूने, उसे भी ठुकरा दिया।"

"सुशीला के रिश्ते की बात मामा गोविंदराव ने कभी उठायी ही नहीं। यह तो आपकी चाह है। दूसरी बात सुशीला से विवाह करके में सुखी नहीं रह पाऊंगा क्योंकि हमारे घर के सभी रहस्य उसके पूरे परिवार वालों की ज़बान पर हैं।"

"चुप रह कमबख्त। बेतुकी बातें करता है। कुलटा मां की गोद से जन्मा है तभी ये गंदी आदतें···।"

"आपका बेटा कहला रहा हूं इसके लिए मुझे अपने आप पर घृणा हो रही है।"

"क्या बक रहा है ज़बान बंद कर।" दशरथरामय्या ने आवेश में अचानक एक ज़ोर से थप्पड़ जड़ दिया।

"तनिक भीतर आइये बाबू।" कंपाउंडर ने आकर कहा। नारय्या पीछे खड़ा था। दशरथरामय्या और दयानिधि भीतर गये। सब समाप्त हो चुका था। दशरथरामय्या धोती की छोर में मुंह छुपाये सुबकने लगे।

दयानिधि पलंग के पास बैठा आंखें फाड़-फाड़ कर देख रहा था। जल्दी से वह पिछवाड़े की ओर निकल गया और खुले आकाश की ओर ताकता हुआ मन-ही-मन देवताओं से प्रार्थना करने लगा कि उसकी मां को जीवन दे दो। इसके अलावा वह कुछ नहीं मांगेगा अपने लिए। बस यही एक चाह है कि मां जीवित हो जाये। चोरी-चोरी उसने खिड़की में से मां के मृत शरीर की ओर झांका कि कहीं उसमें हरकत तो नहीं हो रही है। भगवान की कृपा से शायद हाथ-पैर ही हिलने लग जायें। निधि पर कोई भी देवी देवता प्रसन्न नहीं हुए और न ही उसकी चाह पूरी की।

उसे रोना नहीं आया। लगा कि समय रुक गया है।

उसने सोचा था कि जेरसोप्पा नियाग्रा जलप्रपात की भांति मां की अविरल स्नेह धारा हिमालय, गंगा, भागीरथी की भांति मां की निश्चल प्रेम धारा हमेशा हमेशा के लिए उनके लिए स्थिर बनी रहेंगी कोई उसे रोक नहीं सकेगा। इसके अभाव में उसका जीवन निर्जीव, अर्थहीन हो जाता है। मां की मृत्यु पर उसे लगा कि नक्षत्र मंडल छिन्न-भिन्न हो जायगा। समुद्र उफन कर सारी दुनियां को ले डूबेगा। भूमि फटकर संसार को अपने उदर में खो लेगी। पर यह कुछ भी नहीं हुआ। सब अपने अपने स्थान और स्थिति में अटल और अमर थे। कुछ हुआ तो यह कि वह स्वयं पागल हो गया।

पागल हो दयानिधि नहर की ओर चल पड़ा। संध्या समय जिस घास पर लेटा था उस पर लेट कर रो न पाया। आखें सूख चली थीं और खून जम गया था। ऊपर आकाश में चांद कुम्हला कर उनींदा होकर जम्हाई ले रहा था। तारे पूरब के उठते प्रकाश में भीग कर टूटते छोड़ते आकाश से हटते जा रहे थे। जाने कितना समय निकल गया वह जान भी न पाया। अपने आप की सुध बुध खोकर बैठा रहा। जब सुध आई तो पूरव के आकाश में सूरज झरोखा खोलकर अंधेरे को दूर खदेड़ रहा था। नहर निस्तब्ध थी, पक्षी बसेरों में जग गये थे। प्रभात की प्रकृति मां जैसी बन गयी थी।

सब कुछ समाप्त हो गया।

नानी के मुंह से सुनी मां के बचपन की बातें उसे स्मरण हो आयीं। लंहगा पहने मां पालकी में बैठी प्यास लगने पर भी मुंह खोलकर पानी न मांग सकने वाली वह मां—मां को खा जाने वाली बुरी साईत में उसका जन्म होने के कारण उसकी बलि दे देने की बात उठाने पर, "हाय मेरा बेटा।" कह कर तिनके जैसी कांपती, निश्वास छोड़ती मां—होस्टल में रहते समय खर्चे के लिए बापू के मनीआर्डर न भेजने पर कंगन गिरवी रख कर फीस भरने वाली मां—दीपावली के दिन सफेद रेशमी कमीज पहन कर पटाखे छोड़ते हुए उसे देखकर खुश होने वाली उसकी मां—कोमली के सौंदर्य के बारे में सुन कर सब कुछ समझ में आ जाने के अर्थ में सिर हिलाती वह मधुर ममतामयी मां की मूर्ति—सब बातें एक एक करके उसकी आंखों में तैरती गयीं।

"मां—पिता जी की दृष्टि में भोग तृप्ति के लिए एक पत्नी। समाज की दृष्टि में परिवार को ठीक से न चला पाने वाली असफल गृहिणी—परिवार के

लिए एक सुहागिन, दुनियां की दृष्टि में मात्र एक व्यक्तित्व और सृष्टि के लिये वह मात्र एक स्त्री हो, पर उसके लिए वह एक मां—विशाल वट वृक्ष की छाया की भांति स्नेहमयी मां है।

इस संसार में जन्म लेकर लोगों की भीड़ में इतनी बाधायें सहकर उसने आखिर क्या पाया ? मातृत्व—मातृत्व पाकर वह स्त्री मां में परिवर्तित हो गयी। बस जीवन का लक्ष्य पूरा हो गया और वह चली गयी। निर्धारित लक्ष्य तक पहुंचने वाली मां का जीवन व्यर्थ हुआ या सफल हुआ कौन कह सकता है ? व्यर्थता और सफलता ये दोनों भी तो केवल मनुष्य के मस्तिष्क की कल्पनायें हैं।

आंसुओं से घास के तिनके भीग उठे। प्राणों का मूल्य ही कितना है ? एक तिनके का जितना मूल्य है ? सिर्फ उतना ही · बस ! ऊफन कर आते हुए दुख को उमड़ते हुए अश्रु प्रवाह को पीढ़ी दर पीढ़ी के विछोह के लिए संजो रखे आंसू—'पत्थर-युग' के लोगों की समझ में न आने वाले आंसू—युगों से रिसते आंसू न जाने किसके लिए और क्योंकर उमड़ आते हैं इसका रहस्य कौन जानता है ?

मां की बीमारी दूर करने के लिए ही तो उसने डाक्टरी पढ़ने का निश्चय किया था। आंसुओं के प्रवाह को रोकना ठीक नहीं—भीगा तिनका सूरज के स्पर्श से संभल जाएगा—उसका कुछ नहीं बिगड़ेगा।

अब तक उसका एक अलग व्यक्तित्व नहीं था। हर ज़रा-सी बात के लिए मां पर निर्भर था। पैसे की ज़रूरत होती तो मां को तंग करता। मां पिताजी से मांग कर देती। उसका जीवन एक समुद्र था तो मां उसमें आश्रय देने वाली एक लंगर थी। अब वह लंगर रहित हो गया। उसकी कोई दृढ़ शक्ति उसे छोड़कर अलग हो गयी। दुनियां से उसे बांध रखने वाली वह सांकल अब टूट चुकी है। कोमली ने उसे तिनके जैसा भटक दिया है। मौत ने मां को तिनके तोड़कर प्राणों से अलग कर दिया है। मां उसकी शक्ति सामर्थ्य, बल संतोष आदर्श सभी को लेकर चली गयी है। बस अब उसके लिए सब चुक गया है।

नये नये लोग

सात महीने बीत गये। दयानिधि बड़े दिन की छुट्टियों में होस्टल छोड़ अपने गांव चला आया। गाड़ी से उतर कर देहरी में पैर रखते रखते सुबह नौ बज गये। देहरी पार कर भीतर पहुंचा तो अपना ही घर उसे पराया लगने लगा। मां होती तो उसे लिवाने किसी को स्टेशन भेजती और चौखट लांघते ही आरती उतारती। पिताजी के कमरे में गया तो खिड़की से जोगप्पनायुडु के घर की नयी उठी छत दिखायी दी। पिछली बार वह यहां था तब उन्होंने बनवाना शुरू किया था। मकान के ऊपर मकान बड़े राक्षस जैसा दीख रहा था। रंग बिरंगे कांचों से जड़ा। सब था उसमें, नहीं था तो केवल सौंदर्य और बनवाने वाले में सुरुचि का अभाव जतला रहा था। कमरे में खिड़की के ऊपर बप्पा और मां का शादी का चित्र टंगा था। बचपन में भैया अमृतन् और मां इन तीनों का एक चित्र दाहिनी ओर दीवार पर जड़ा था। कृष्णरावपुर बदली होने पर पिताजी को बिदाई देते वक्त वहां के सहयोगियों के साथ खिचवाये गये उनके फोटो में वह स्वयं भी खड़ा था। मेज के दराज़ में एक छोटा सा आइना रखा हुआ था जिसे बप्पा दाढ़ी बनाने के लिए इस्तेमाल करते थे। शीशा लेकर दयानिधि ने उसमें अपना मुंह देखा रेल के धुएं से मुंह काला हो गया था सिर के बाल सींकों जैसे माथे पर फैल गये थे—चौड़ी आंखें गहरी काली पुतलियों के नीचे झाइयां मुंदती भारी पलकें, धनुष की सी भौंहें, चौड़े

ललाट, लंबी गोल गर्दन, पतले ओंठ, हंसने पर चमकती बत्तीसी। दाहिनी ओर कपोल पर एक हल्का सा गढ़ा, अपने आपको देखकर हंसी आई—लगा कि वह अपनी मां को देख रहा है। उसके अपने चेहरे में मां का झांकता चेहरा—लगा कि कोई उसके शरीर और मन के भीतर है जो उसे जीवित रख रहा है। लगा कि मां मरी नहीं उसी के भीतर समा गयी है।

मेज पर चिट्ठी पड़ी थी जो उसने दो मास पूर्व पिता जी को लिखी थी। उसे निकाल कर पढ़ने लगा—"भैया को पसंद नहीं है इसका मुझे खेद है। रिश्ता मुझे पसंद है और मुझे कोई आपत्ति नहीं। पुरुष अकेला नहीं रह सकता। उसे एक आश्रय-एक आधार-चाहिये। स्त्री के बिना पुरुष का जीवन संपूर्ण नहीं होता। स्त्री के बिना पुरुष का जीवन पतवार हीन नौका है—" आवेश उत्तेजना का क्षण बीत जाने पर साधारण स्वस्थ स्थिति में क्या वह पिताजी को ऐसी चिट्ठी लिख पाता—कभी नहीं।

"भीतर आ जाओ जीजा जी—काफी लो पहले, बाद में नहा लेना।"

चौंककर चिट्ठी लिफाफे में रखी और पीछे मुड़कर देखा तो अमृतम् थी।

"क्यों? डर गये? समझ बैठे कि मैं कोई भूत हूं?"

"अमृतम्···" कह कर उसने दीवार पर जड़ी फोटो के साथ सामने खड़े चेहरे की तुलना की—"हां वही तो है—अम्मुल।"

"तुम्हारी मां मुझे अम्मुल कहकर पुकारती थी।" दोनों ठहाकर हंस पड़े।

"अमृतम्" पिताजी के दूर के रिश्ते की भतीजी लगती थी। भैया के साथ उसके विवाह की बात चली थी। पर जाने क्यों यह रिश्ता जुड़ा नहीं। बचपन में अमृतम् बंदर की तरह उछलती शैतानी करती थी। अब जितनी मोटी भी नहीं थी। सभी उसे चिढ़ाते थे। अब कितनी बदल गयी है? अमृतम् को उसने सिर से पैर तक देखा। इस हद तक बदल गयी थी कि उसे पहचान पाना मुश्किल हो रहा था। सुंदर सुडौल शरीर हल्के गुलाबी रंग की छाया लिए गहरी झील सी आंखें लंबी केश राशि सुदृढ़ कंधे सबसे अधिक आकर्षक थे उठे हुए उरोज। भय मिश्रित आश्चर्य से दयानिधि ने उसे एक बार फिर देखा।

"जीजा जी। काफी ले लो ना। ठंडी हुई जा रही है।"

उसे लगा कि वह पुनः जी उठा है। आज तक किसी ने उससे इतने गहरे

स्नेह का रिश्ता नहीं जताया था । स्वयं उसके मामा की बेटी सुशीला भी तो उसे इतने प्यार से नहीं बुलाती । वह चुपा गया ।

"वैसे मेरा तुम्हारे साथ निकट का परिचय नहीं है फिर भी तुम्हारी काफी तारीफ सुनी थी । हां ! बड़े जीजाजी से अच्छा परिचय है । बेचारी बुआ जी कई बार लिखती रहीं कि छुट्टियों में मैं इन्हें साथ लेकर आऊं पर इन्हें तो खेती बारी से बिलकुल छुट्टी ही नहीं मिलती । मैं बुआ जी को देख भी न पायी कि बेचारी चल बसीं । भगवान ने अच्छा ही किया । बीमारी से तड़फाते रहने के बजाय सुहागन मौत दे दी ।"

अमृतम् आंखों में उभरे आंसुओं को साड़ी की छोर से पोंछने लगी । अब तक दयानिधि ने मां की मौत पर कई लोगों को शोक और संवेदना प्रकट करते देखा था, पर वह उसे दिखावे जैसा लगा । अमृतम् के आंसू देखकर लगा कि दूसरों का दुख समोकर महज रूप में बह निकले हैं ।

"तुम्हारे पति भी साथ आये हैं ? क्या नाम है उनका ?"

साड़ी का छोर आंखों पर से हटाया अमृतम् ने । वह पीले खद्दर की साड़ी पहने थी । दयानिधि के मस्तिष्क में जाने क्यों अचानक कालिदास की शकुंतला कौंध गयी—कंधों से, गोलाई में चिकनी मोटे कपड़े की चोली—जूड़े में आधा खोंसा हुआ लाल मंदार पुष्प देखकर लगता था कि पर्वत गहरों से सूर्यास्त देख रहा हो । आंसुओं से भीगी पलकों के नीचे पुतलियों से अपार करुणा सहानुभूति झांक रही थी ।

"पानी से भिगो दोगी तो रंग छूट जायेगा ।" वह बोला ।

अपनी साड़ी की तरफ देखकर आंसुओं से भीगे हिस्से को छिपाकर अमृतम् हंसने का प्रयत्न करने लगी ।

"अभी एक हफ्ते पहले खरीदा था । धोबी को भी नहीं दिया ।"

"तो अपने पति का नाम नहीं बताया तुमने ?"

लाज से भर गयी—"नहीं जानते क्या ? यूं ही पूछ रहे हो शैतानी के लिए…"

"सच । बिलकुल याद नहीं ।"

"मुझे भी नहीं मालूम—जाओ—बड़े वो हो । मैं नहीं बताती शर्म लगती है ।" कह कर खांसने का बहाना करने लगी ।

"अच्छा न सही मत बताओ नाम। यह तो बता दो कि क्या करते हैं हमारे साढ़ू भाई ?"

"खेती बारी, पटवारी का भी काम संभाल लेते हैं। तुम न तो मेरी शादी में आये और न उसके बाद भी कभी हमारे गांव आये।"

"किसी ने बुलाया होता तब न ?"

"जाओ भी, कैसी बातें करते हो। मुझी को किसने बुलाया था जो मैं यहां आ पहुंची ? यह तो अपने मन की बात होती है।"

"वाह। तुम आई हो तो उसका कारण है—मां मर गयी इसीलिए अपने मामाजी को देखने आई हो।"

"जाओ भी, जीजाजी ! तुम बड़े वो हो। मैंने समझा था कि तुम बड़े भोले हो, बातें बिलकुल नहीं जानते पर तुम तो सभी के कान काटने लगे हो। अब तुम्हीं बताओ, तुम्हें देखने का मन भी हो तो मैं अकेली कैसे आती ? हमारे इनको तो चार लोगों के बीच रहने की बिलकुल आदत नहीं। ऊपर से हर वक्त कुछ न कुछ खेती बारी का काम लगा ही रहता है—गोड़ाई, निराई, कुछ नहीं तो चकबंदी—और तुम तो ठहरे शहरी आदमी हमारे दूर देहात क्यों आने लगे। हमारा देहात तो वीरान जंगल होता है जंगल।"

"तुम जैसी पत्नी के साथ वीरान में भी गृहस्थी बड़े मजे से…"

वाक्य अभी पूरा नहीं हुआ था कि सुशीला आ पहुंची। सुशीला छोटे कद की थी। संकरा माथा, छोटी सी आंखें, गोल कपोल, गहरी ललाई लिए शरीर, चेहरे पर चश्मा फब रहा था।

"शायद अब आप डाक्टर बन गये हैं—हां तो डाक्टर साहब। मालूम तो हो ही रहा है कि आप अभी-अभी डाक गाड़ी से उतरे हैं सो मेरा विचार है कि मुझे 'कब आये' पूछने की आवश्यकता नहीं रह गयी।"

"सुशीला देवी जी। आपके तर्क का मैं बिलकुल खंडन नही करूंगा।"

"कदाचित् आप शहर से ही पधारे हैं ?"

"आपका अनुमान वास्तविकता से दूर नहीं है।"

अमृतम् हंस रही थी—"यह उल्टी-उल्टी बातें क्यों भई ?"

सुशीला परिहास की हंसी हंस दी।

"भावी पति पत्नी के बीच मुझ मूसलचंद की क्या ज़रूरत बाबा। लो मैं

जाती हूं।"

"अम्मुलु। सावधान। ये बातें फिर मत दोहराना।" सुशीला बोली।

"अब इसमें बुरी बात क्या है ? मेरी बात झूठ तो नहीं है।"

"बस चुप रहो अमृतम्। तुम निरी उजड्ड गंवारू औरत हो।"

"सुशीला। तुम जैसों को अपना गुस्सा उस बेचारी पर उतारना शोभा नहीं देता।"

"फिर ये ऐसी उजड्ड बातें क्यों करती है। चौबीसों घंटे इन्हें शादी-ब्याह, दुल्हा-दुल्हन की पड़ी रहती है--रचाया है न इसने अपना ब्याह एक उजड्ड गंवार से।" अमृतम् के ओंठ आवेश से कांप रहे थे।

"सुशीला। क्यों ताना देती हो और बात का बतंगड़ बनाती हो। उजड्ड हो या शहरी, कहने को एक पति तो है। अठारह की उम्र चढ़ गयी है तुम्हें तो वह उजड्ड भी नसीब नहीं हुआ।"

"बकवास बंद कर अमृतम्। ज्यादा कुछ कहेगी तो ठीक न होगा।"

दयानिधि ने काफी की प्याली मेज़ पर रखी और अमृतम् का हाथ पकड़ कर भीतर दालान की ओर ले गया। अमृतम् खटिया पर बैठकर रोने लगी।

सुशीला ने पैर पटकते हुए बाहर आकर खटाक से किवाड़ लगा दिये।

दोपहर को नरसम्मा भाभी यानी सुशीला की मां आकर दयानिधि के पास बैठ गयी। कुशल प्रश्न के बाद सवाल का तीर छोड़ ही दिया।

"प्रैक्टिस कहां चलाओगे ? बस्ती में या शहर में ?"

"अभी प्रैक्टिस कैसी भाभी ? पढ़ाई पूरी होने में तो दो साल और लगेंगे तब की बात अभी से कैसे बताऊं ?"

इतने में जगन्नाथम् भी आ गया। जगन्नाथम् अमृतम् का छोटा भाई था और हैदराबाद में आठवीं कक्षा तक पढ़ा था। अमृतम् और जगन्नाथम् में किसी भी बात का साम्य नहीं था। स्वभाव भी बिलकुल अलग थे। अमृतम् के हंसमुख चेहरे की गहराई में विषाद झलकता था। उसकी हंसी में राज्य विनाश के पश्चात्, खंडहरों को देखकर, कभी अतीत में उस राज्य संपदा का अनुभव प्राप्त करती महारानी की सी गारिमामय गंभीर और पूर्ण हंसी का आभास मिलता था। इसके बिलकुल विपरीत जगन्नाथम् एकहरा शरीर लिये दांतों की बत्तीसी दिखाता नटखट हंसी हसता था। हंसते समय उसकी आंखें मुंद जाती

थीं। सिर पीछे की ओर झुक जाता था। सामने के व्यक्ति का चेहरा देखकर वह बात नहीं कर पाता था। एक की तरफ देखकर दूसरों से बातें करता था। यौवन लुका छिपी खेलता कभी-कभी कपोलों पर झलक दिखा जाता था। किसी भी प्रकार की कंघी से उसके घुंघराले बाल सीधे नहीं हो पाते थे। दृष्टि में पैनापन भरा था। क्षण भर के लिये भी चुप नहीं रह पाता था। दयानिधि से यह उसका पहला परिचय था।

"क्यों रे जग्गू। कितने बजे हैं। जीजा जी आये हैं देखा उन्हें तूने ? तू भला उन्हें कहां जानेगा।" नरसम्मा बुआ प्रश्न और उत्तर स्वयं देती गयी।"

"मौसी। मैं नहर तक जाकर वहां स्नान करके आया हूं—कल आप भी मेरे साथ चलियेगा···जीजा जी। मैंने हैदराबाद में बिलकुल आप ही के जैसा व्यक्ति देखा है आपका सिर मूंड दें तो आप बिलकुल वैसे ही दिखने लगेंगे जिन्हें मैंने देखा था।"

"क्या पागलों का सा बकवास कर रहा है।" दूर से अमृतम् भाई को ताड़ना देती हुई बोली।

"दीदी। अपन न तो पागल युग में हैं और न ही पागलपन ने घेरा है। तुम तो पेट भर खाकर ऊंघ रही हो। अपने राम की राम कहानी भूखी पीढ़ी में जी रही है। बकवास के बिना वह पता कैसे चलेगा सबको। नरसम्मा मौसी के हाथ की अंबाड़ की चटनी तो आज भगवान ने अपने राम के भाग्य में लिख दी है—अरे हां—जीजा जी हमारे गांव के मास्टर जी यहां मिल जाते तो कितना अच्छा होता—कल नहर स्नान के लिए उन्हें भी ले चलते। क्या बताऊं इतनी अच्छी और गहरी भंवर है कि बस फंस जायें तो वापस न आ पायें।"

"तो रे जग्गू, इसीलिए क्या मुझे भी न्यौता दिया था।" नरसम्मा ने पूछा।

"बुआ जी। उस लड़के के मुंह मत लगो। नीम पागल है वह। नहीं, उसे पागल भी नहीं कहा जा सकता। बेबात की बहस के पागलपन में वह विद्वान है, उसके पागलपन का अपना एक ढंग है, उठान है, क्रम है, लय और ताल है।" निधि बोला।

"लगता है आपने काफी रिसर्च किया है। महाशय आपको तो पागलखाने का सुपरिंटेंडेंट नियुक्त करना चाहिये।"

इतने में थालियां लगायी गयीं । भोजन परोसा गया तब जाकर जगन्नाथम् का मुंह बंद हुआ ।

निधि को अब अपना घर उतना काटता हुआ महसूस नहीं हुआ जितना उसने सोचा था । नये रिश्तेदारों से परिचय हुआ । उनके स्वभावों का विलगाव आर परस्पर आचरण दयानिधि को बड़े ही विचित्र लगे ।

"निधि जी ।"

"निधि जी । यह कैसा संबोधन है रे । जीजाजी नहीं पुकार सकता ? चल चलें । उन्हें सोने दे बेचारे रात भर सोये नहीं होंगे गाड़ी में ।" पीली खद्दर की साड़ी गले में लपेट कर और पान से ओंठ रंगकर अमृतम् जाने को तत्पर हुई । गदराया शरीर, गले के पीछे लटकती नागिन सी लंबी चोटी, जाने क्यों निधि को लगता था कि वह कई बच्चों की मां है । उसने सोचा—शायद बच्चे नहीं होंगे। होते तो दिखते ज़रूर ।

"अपने राम अब यहां से जाते हैं पर जाते-जाते एक बात बताना जरूरी है । कहना यह है कि अपने राम सुपरिटेंडेंट साहब से बातचीत करके आये हैं और आज्ञा देकर आये हैं, कि मामाजी ने छोटा बजरा तैयार रखने को कहा है । सो कल अपन सब सैर करने जायेंगे सिवाय नरसम्मा मौसी के । वैसे तो हां उन्हें भी ले जाकर डांड के पास छोड़ा जा सकता है लेकिन कहीं उन्होंने छींक दिया तो समझो अपने राम की नैया हो जायेगी डुबूंग ।"

ठीक है, सैर के साथ-साथ पिकनिक भी कर लेंगे । अच्छा अब आज्ञा हो तो एक झपकी ले लूं ।" निधि ने करवट लेकर जम्हाई ली ।

"अपने राम अब सीधे नारय्या के पास जा रहे हैं । कुछ काम है ।" जगन्नाथम् चला गया ।

निधि सोकर उठा तो तीन बज चुके थे । सुशीला चाय लेकर आई । जगन्नाथम् ने चिट्ठी लाकर अल्मारी में रखी । चिट्ठी दशरथ रामय्या ने कैंप से लिखी थी कि उन्हें दौरे पर अभी एक हफ्ता और लगेगा, नारय्या के हाथ कुछ धुले कपड़े भिजवा दिये जाएं ।

दयानिधि ने उठकर हाथ मुंह धोया, बाल संवारे और कपड़े बदले । सुशीला ने भी साड़ी बदली और लंबी चोटी गूंथ सामने आ खड़ी हुई । निधि ने होल्डाल खोलकर मैले कपड़ों की ढेरी लगायी । फिर पेटी खोलकर एक-एक

सामान बाहर रखने लगा। आधी दर्जन किताबें, दो बक्से निकाल कर खटिया पर रखे।

सुशीला किताबों को उलट-पुलट कर देखने लगी। फिर बोली—"डाक्टर! मेरे लिए शहर से क्या लाये हो?"

"सुशीला ज़रा जाकर देख तो आओ नरय्या कहां है?"

"वहां नहीं है जीजा जी। नरय्या और जग्गू दोनों आम के बगीचे तक गये हैं। अभी वापस नहीं आये—" पास वाले कमरे से अमृतम् बोली। निधि ने मन ही मन कहा भले लोग भी अनजाने ही दूसरों पर मुसीबत ला देते हैं।

"क्या है उस पैकेट में? मेरे लिए क्या लाये हो बताओगे नहीं डाक्टर?" सुशीला ने पूछा।

"ये—ये तो दवाइयां हैं।"

"खोलकर देखूं डाक्टर कैसी दवाइयां हैं?"

"सुशीला तुम्हारा यह 'डाक्टर' का संबोधन मुझे बिलकुल पसंद नहीं क्योंकि अभी तो मैं पूरा डाक्टर बना नहीं। दूसरी बात, मैं रोगियों के लिए डाक्टर हूं, तुम रोगी नहीं हो। "दयानिधि के स्वर में कटुता थी।

"डाक्टर, माफ करना कि मैंने तुम्हें डाक्टर कह कर बुलाया—कमबख्त यह शब्द ज़बान पर इतना चढ़ बैठा है कि उतरता ही नहीं। मैंने तो सोचा था कि 'डाक्टर' कहने पर तुम खुश होगे।"

"नहीं। तुम अच्छी तरह जानती हो कि मुझे इस संबोधन से ज़रा भी खुशी नहीं होती। अपने आपको खुश करने के लिए तुमने कारण की कल्पना की है। मुझे चोट पहुंचाना तुम्हारा लक्ष्य है। सभी डाक्टरो के प्रति तुम्हारे मन में जो क्रोध है उसे तुम मुझ पर उतारना चाहती हो।"

"मुझे क्यों होने लगा डाक्टरों पर क्रोध। उल्टे तुम्हीं विचित्र बात कह रहे हो।"

"सच कह दूं तो तुम्हें चोट पहुंचेगी। तुम्हें कष्ट पहुंचाना मेरा लक्ष्य नहीं और न ही यह मुझसे बन पड़ेगा।"

"मुझे चोट नहीं पहुंचेगी बताओ न निधि। मुझसे डाक्टरों को क्यों चिढ़ है, अगर तुम नहीं बतलाओगे तो मुझे रात भर नींद नहीं आयेगी।"

"यूं ही मज़ाक किया था—इतना भी नहीं समझती ।"

नहीं, तुम्हें बताना ही होगा—टालने की कोशिश मत करो । बताओगे तो आगे के लिए अपने को सुधार लूंगी । मैंने तो यह सोचा था मामी गुज़र गयी है मामा अकेले होंगे यहां कुछ दिन रहेंगे तो तुम सबका दिल बहल जायेगा । अगर जानती होती कि हमारी वजह से तुम्हारे मन में कोई छुपी पीड़ा कसक रही है तो मैं कल ही चली जाऊंगी ।" कह कर सुशीला ने सिर झुका लिया ।

"सच मानो सुशीला मैं मज़ाक ही कर रहा था । तुम सबके यहां आने से मुझे सचमुच बहुत आनंद हुआ है । तुम लोग नहीं होते तो मेरे लिये दिन काटना मुश्किल हो जाता । उदास हो जाता । कुछ नहीं तुम्हारी जैसी साड़ी मां के पास भी थी । इसे देखकर मुझे मां की याद हो आई, मन दुखी हो गया, बस इतनी सी बात है ।"

"यह साड़ी मामी की ही दी हुई है । मां ने जान खाई कि इसे पहन लूं—ठहरो उतारे देती हूं—।"

"कहीं यह काम मेरे ही सामने मत कर बैठना ।"

सुशीला चली गयी । निधि ने राहत की सांस ली ।

निधि ने छोटी पैकट जेब में डाली, बाकी चीजें संदूक में भरने लगा । इतने में अमृतम् काफी लेकर आ गयी ।

"लगता है जीजा जी । शहर से बहुत सी चीज़ें लाये हैं ।"

दयानिधि घबराया कि कहीं वह पूछ न बैठे "मेरे लिये क्या लाये हो ?"

"जीजा जी, शहर जब वापस जाओगे न तो हमारे गांव से होकर जाना ऐसे कुछ पैकेट मैं तुम्हें दूंगी ।" अमृतम् बोली ।

"सूजी के पूवे, चावल की पपड़ी और गुझिए बांधकर दूंगी अच्छे खालिस घी में बनाये जाते हैं हमारे यहां ।"

"गुझिए तो अपने राम भी खायेंगे ।" जगन्नाथम् भी लौट आया था तब तक ।

"खाने को यहां कहां धरे हैं ?"

"अरे । यह क्या है ?" जगन्नाथम् ने पहले किताबें उठा कर देखीं और फिर संदूक से चीज़ें एक-एक करके देखना और बाहर रखना शुरू कर दिया ।

"यह कैमरा है ।" निधि बोला ।

"निधि। मेरी तस्वीर नहीं लोगे ?" सुशीला ने भीतर क़दम रखते हुए कहा।

"लो मेरा पोज ले सको तो देखूं।" जगन्नाथम् दोनों हाथ बगल में बांध और मुंह दबाकर खड़ा हो गया।

"बिलकुल बंदर लग रहे हो।" सुशीला बोली।

"हे ललना, हे सुंदर बदना
मत भूल कि तेरा सहोदर हूं।"

"जीजा जी, इस बीच अपने राम बड़े भाषाविद् होते जा रहे हैं। परीक्षा में जो कुछ लिखते है वह गुरुओं के कान काटते हैं। गुरुवर्य उन्हें समझ न सकने के कारण प्रथम श्रेणी के नंबर दिये जा रहे हैं—सो हाल का समाचार है कि फोटो लेना कल पिकनिक तक के लिए स्थगित किया जाता है। सो पुरजन बंधुजनमय सेंट इतर के, भड़कीली पोशाकों में अपने-आपको उपस्थित करें ताकि सबकी फोटो मुफ्त में खींची जा सके और उनकी नाक पर टांगी जा सके। क्यों जीजाजी क्या ख्याल है आपका ?"

"अभी आती हूं।" सुशीला भीतर चली गयी।

दयानिधि भी भीतर गया तब तक सुशीला खटिया पर तहकर रखा हुआ कोट परख रही थी।

"देखो न जीजाजी, मना किया तो भी नहीं मानती। कोट की तह बिगाड़ रही है।" अमृतम् ने फरियाद की।

"मुझे तो बिलकुल ठीक बैठा है। है न निधि ? इसका मतलब हुआ कि मैं तुम्हारे जितनी मोटी हूं।" सुशीला चेहरा शीशे में देखकर बोली। कोट उसके लिए लांग कोट का काम दे रहा था। बटन लगाने के कारण दाहिनी ओर एक उठान उभर गया था। उसे देखकर सुशीला ने जीभ काटी और दीवाल की ओर घूमकर कोट उतारा और उसकी जेब से पैकेट निकाल लिया। अमृतम् की छाती पर से पल्लू खिसक गया था सो सुशीला के हाथ ने उसे खींचकर उसके कंधे पर डाला। इतने में दयानिधि ने सुशीला के हाथ से पैकेट छीन लिया। दोनों दयानिधि की जान खाने लगे कि पैकेट में क्या है।

"मुझसे मत पूछो, इसके बारे में जानना तुम्हारे लिए अनावश्यक है।" दयानिधि बोला।

"हम उसे मागेंगे नहीं सिर्फ़ इतना बता दो कि क्या है वह चीज़ ?"

"वह—वह एक दवायी है…।"

"दवायी ही है तो छुपाकर रखने की क्या ज़रूरत ?"

"मैंने—मैंने छुपाया कहां। मैं तो डर रहा था कि उसके भीतर की शीशियां कहीं टूट न जायें।"

"कहीं पोटाशियम सायनाइड तो नहीं।"

"वह क्या होता है ?"

"एक ज़हर होता है। पीने पर आराम से जान निकल जाती है।" सुशीला बोली।

"ज़रा दिखाओ तो—"

"नहीं। हवा लगने पर इसका असर कम हो जाता है।" कह कर दयानिधि ने कोट पहना और बरामदे की ओर चल पड़ा। बरामदे में क़दम रखते ही जोगप्पनायुडू की बेटी नागमणि का सामना हुआ। जोगप्पनायुडू ने ठेके के व्यापार में काफी पैसा कमाया था। बड़े बेटे को लंदन पढ़ने भेजा। बड़ी बेटी के पति बंबई की किसी फर्म में ऊंचे ओहदे पर नौकर था। नागमणि उसकी दूसरी बेटी थी।

नागमणि ऊंचे क़द की थी और क़द के अनुपात में लंबोतरा मुंह—सेंजने की फली जैसे लंबी लटकती बाहें, कानों को भी ढककर कपोलों को छूती हुई लंबी केश राशि पतली रेशमी साड़ी पहने थी जिसके नीचे से लेस लगा पेटीकोट झलक रहा था। कानों में चकाचौंध करने वाली हीरे के जड़ाऊं कर्णफूल बालों के पीछे से कानों में लगे थे ऐसा लगता था मानो रात्रि के अंधकार में आग की लपटों की रोशनी छूट रही है।

निधि को दोनों हाथ जोड़कर अभिवादन किया।

"मैंने आपको सुबह गाड़ी से उतरते देखा था।" अचानक सुशीला और अमृतम् को देखकर ठिठक गयी।

"हमारा घर देखने नहीं आयेंगे।"

"कल अवश्य आऊंगा।"

"कल हमारे साथ तुम भी चलोगी पिकनिक के लिए।" सुशीला बोली।

"आप लोग आकर एक बार पिताजी के कान में तो डाल दो न। वैसे कहीं

भी जाने को मना तो नहीं करते फिर भी…"

"हां-हां क्यों नहीं। उनसे भी इजाज़त ले लूंगा।"

"कुंवारी लड़कियों का पराये पुरुषों के साथ ज्यादा घूमना फिरना अच्छी बात नहीं।" अमृतम् बोली।

"बस बस रहने दो अपना बुढ़िया पुराण। नागमणि पढ़ी-लिखी है तुम जैसी गंवार नहीं।" सुशीला तुनक कर बोली।

"कितने भी पढ़ लिख लो पर रहती देहात में हो, शहर में नहीं। जहां रहो वहां के समाज की मर्यादा को तोड़ना नहीं चाहिये। तेरा बाप बड़ा आदमी है इसलिए तेरी शादी न करके तुझे ढील दे रखी है।"

"फिर से बात आगे बढ़ा रही हो अमृतम्। कहे देती हूं मेरी शादी के बारे में तुम्हें चिंता करने की कोई ज़रूरत नहीं।"

"तुझे जीने का शऊर नहीं है, दूसरे शऊर से जीने की कोशिश करते हैं तो तू उनसे जलती है। चल नागमणि उसकी बातों पर ध्यान मत दे वह तो यूं ही बकती रहेगी!"

"अच्छा होगा कि भरे बाज़ार की बजाय इन बातों को यहीं तुम लोग तय कर लो। तब तक मैं ज़रा बाहर घूम आता हूं।" दयानिधि ने कहा।

"कहां तक जाओगे?" सुशीला ने पूछा।

"कहीं भी जायें तुझे क्या मतलब? आदमी जहां मर्ज़ी होगी घूमेगा फिरेगा, उस पर तेरा क्या अधिकार?" अमृतम् की बात पर सुशीला बोली। "तुझसे किसने पूछा है, कि दूसरों की बातों में टांग अड़ाती है।"

"क्लब की ओर जा रहा हूं।"

कहते हुए दयानिधि ने जब घर का चौखट लांघा तो पीछे से नागमणि ने आहिस्ते से पूछा—"क्लब के माने—कोमली का घर है न?"

सुशीला ने चश्मा उतार कर साड़ी के छोर से उसके शीशे साफ किये। अमृतम् ने आश्चर्य से आंखे फैलायी, दो बार पलकें झपकाईं और भीतर कमरे में चल दी।

दयानिधि मन ही मन हंसता हुआ बाहर निकल आया। उसे आश्चर्य हुआ कि नागमणि को इस रहस्य का सुराग कैसे मिला।

गोधूली के साथ सिगरेट का सा धुआं खपरैलों से छनकर छल्ले बनाने लगा।

बसेरे की ओर लौट रहे पक्षी रात्रि के आगमन की सूचना दे रहे थे । याकूब खां की सोड़े की दुकान के नीचे दुबका काला कुत्ता अचानक दुम झाड़ता बाहर निकल आया और आकाश में सितारों को देखकर भौंकने लगा। उसके साथी दूर से उसका साथ देकर सहगान करने लगे। सृष्टि के प्रति विरक्ति भाव जितनी आसानी से कुत्ता प्रकट कर सकता है उतनी और कोई प्राणी नहीं । कई लोग इन कुत्तों को चुप कराने के लिए घर से बाहर आये पर कोई भी न रोक सके ।

दयानिधि गली की नुक्कड़ तक आ पहुंचा। कुत्ते के भौंकने से शरीर की फड़कती नसों में तनाव पैदा हो गया।

उसके घर के आगे जाकर दयानिधि के पांव रूक गये । कामाक्षी ने तपाक से दरवाज़ा खोला मानो उस के आने की राह देख रही हो । बैठने लायक एक छोटी सी तिपाई थी । खटिया बेकार हो चली थीं । टूटी खटिया पर बिछी फटी चादर मैली हो गयी थी । लगता था कि धोने के लिए निकालते निकालते उसे वहीं छोड़ रखा हो । दो मैले तकिये भी इधर उधर लुढ़ के पड़े थे । कमरे में प्रवेश करते ही उसे कोमली समझ कर निधि घबरा गया । चटक कर दरार पड़ा पुराना शीशा दीवार पर लटका था । दो तीन पुराने चित्र भी टंगे थे जिन्हें रात की उस घर की रोशनी में देखकर निर्णय करना मुश्किल था कि ये जानवरों के हैं, मनुष्यों के है अथवा पेड़ों के ।

"सुना था कि सुबह आ गये थे—अब आपको हमारी याद क्यों आयेगी उस घर की शोभा तो आपकी मांजी के साथ ही चली गयी । उनकी शान भी निराली ही थी उनके शोक भी निराले । अब लोग बाग जब उन्हें सह नहीं पाते तो बेतुकी की बातें करने लगते हैं । बड़ा ही साहस था उनमें । अब बाम्मनो को देखा है पर उनके जैसा अपनापन, हर बात में पहले कदम उठाना साहस सच मानिये मैंने किसी में नहीं देखा—बैठिये न तिए पर—खटिया में तो खटमल होंगे वर्ना—"

दयानिधि ने कामाक्षी को पढ़ने के अंदाज़ से सिर से पैर तक देखा—चौड़ा चेहरा लंबी आखें और पतला सा मस्तक, देखकर लगता था कि उम्र में काफी सुंदर रही होगी । कहीं कहीं पके बाल उस सुडौल व्यकितत्व को पूर्णता प्रदान कर रहे थे । निधि ने मन ही मन कहा—"कोमली मां पर नहीं गयी ।"

"अब आपको हमारी क्या ज़रूरत है—आपके पास सुशीला और अमृतम् जो

आ गये है ।" निधि को लगा कि दूसरों का दिल दुखाने में स्त्रियों को कुछ विशेष आनंद मिलता है ।

"सुशीला और अमृतम् आज ही से मेरे रिश्तेदार नहीं बने है, जब से मैं पैदा हुआ तभी से हैं ।"

"कहीं दूर रिश्तेदार बनकर रहने और घर आकर रहने में क्या कोई अंतर नहीं होता ?"

"अगर तुम्हारा ही सोचना सच होता तो मैं यहां क्यों आता कामाक्षी ?" सुशीला के पिता तहसीलदार हैं और काफी बड़े ज़मींदार भी । हमारे पास जायदाद के नाम पर कुल है ही कितना ? कुल मिलाकर छह एकड़ जमीन भी तो नहीं । उसमें से दो एकड़ तो मेरी पढ़ाई के लिए वेच दिया गया अब और रहा ही क्या ? हम जैसी ग़रीबों के साथ वे क्यों रिश्ता जोड़ने लगे ?" कामाक्षी ने बात काटी—"सुना है सुशीला आपको बहुत चाहती है ।" दयानिधि को हंसी आई, बोला "अब मैं क्या जानूं इसके बारे में । और तो और शादी सिर्फ मेरे या सुशीला की पसंदगी पर नहीं हो जाती ।"

"अब रहने दो ऐसी बातें । दोनों पढ़े लिखे हो । जब आप दोनों एक दूसरे को चाहेंगे तो कौन सी शक्ति आपको रोक सकती है । आप भी तो उसे पसंद करते हीं होंगे ।"

"तुम्हारी यह धारणा कैसे बनी ?"

"कोमली कह रही थी ।"

"शायद वह मुझे भी अपनी ही तरह समझती रही होगी कि मैं उसके जैसे हरेक से दोस्ती करता फिरता हूं ।"

कोमली तपाक से कमरे में आई । प्रदर्शनी में भूखा शेर अचानक आ जाने से जैसे अस्त व्यस्त हो जाता है, उसी प्रकार वातावरण बिगड़ गया ।

"इनका क्या बिगड़ता है मैं अपनी मर्ज़ी के लोगों से दोस्ती करूंगी—मैं सुशीला या अमृतम् नहीं हूं ।"

कोमली की आंखों में गुस्सा देखकर निधि डर गया । वह भाव गर्भित गंभीरता से भरा क्रोध नहीं था, चंचलता के कारण उत्पन्न हुआ उलाहना भरा क्रोध था । इसी कारण इसका रूप बहुत ही भयंकर होता है । निधि सोच रहा था स्त्रियां बहुत जल्दी बढ़ जाती हैं । आठ महीनों में कोमली में कितना

परिवर्तन आ गया है। उसी के जितनी लंबी हो गयी है। घने काले बादलों में चमकते सितारों की भांति उसकी आंखों की पुतलियां लालटेन की रोशनी में चमक रही थीं। रनिवास में पटरानी की भांति बड़ी ही अदा से बायीं भौंह हिल रही थी। पुरुष सौंदर्य के आगे मूक पीड़ा भय और लज्जा प्रदर्शित करता है तो मूलतः उन विकारो का आधार शरीर ही होता है निधि ने मन ही मन कहा—काश ! इसी गति से उसका दिमाग और मन भी विकसित होता। समस्त विश्व को अपने एक चुंबन में समोये वह आकर्षक ओंठ मूक संसार को एक टेर देकर अपने माधुर्य में समो लेने वाला वह कंठस्वर-उस में से ये ऐसे कठोर और चुभने वाले शब्द !

"पगली। चुप भी रह।" कोमली को उसकी मां ने झिड़का।

"ये भला कौन होते हैं मुझ पर इस तरह टूटने वाले।" कोमली ने पूछा।

"उस दिन कृष्णमाचारी के साथ तुम्हें···"

कामाक्षी ठोडी के नीचे हाथ रखकर मुंह बनाते हुए कृत्रिम हंसी हंस दी।

कोमली की भौंहों में छुपा क्रोध ओठों पर उतर आया। हंसने के लिए कपोल कांपने लगे।

दयानिधि भी नासमझों की तरह हंसने लगा।

"मुर्गी के अंडे जैसा चेहरे वाला कृष्णमाचारी···इस बात की परवाह किये बिना कि हंसने से उसका मुंह बड़ा ही घिनौना लगता है कामाक्षी हंसते-हंसते तिरछी हो गयी।

"उसका खेत हमारे खेत से ही लगा है और वह सभी से यूं ही मजाक करता रहता है।" कामाक्षी ने सफाई देने की कोशिश की।

"वह नहीं तो कोई दूसरा और···" निधि बोला।

"किसने आपके कान भर दिये ?"

"सभी की जुबान पर है यह बात।"

"आप बाम्मनों से तो लाख अच्छे हैं हम। दूसरों की बखिया उधेड़ने से पहले जरा अपने गिरेबान में तो झांकिये।" कोमली जरा कटुता से बोली।

'ऊंचे कुल में जन्म लेने का संस्कार पाकर भी कैसी बातें करते हैं। इन गलत-सलत बातों पर आप विश्वास कैसे कर लेते हैं ? हम लोग छोटी जात के हैं, पर व्यभिचारी नहीं। अभी कल तक कोमली के पिता नारायणचारी ही

घर का सब कारोबार देखते थे। जाते-जाते यही एक एकड़ जमीन लिख गये सो जैसे तैसे जिंदगी कट जाती है। अगर हमें व्यभिचार वृत्ति से पैसा ही कमाना होता तो आज तक हम महल न बनवा लेते। कोमली को देखकर बड़े-बड़े जमीदार हमारे पीछे कुत्तों की तरह दुम न हिलाते ? अब आगे से ऐसी बात भूलकर भी न करिएगा…"

"वर्ना ठीक न होगा हां।" कोमली ने साथ दिया।

"अच्छा अब तू जा भीतर…बीच में टांग क्यों अड़ाती है।"

"रहने दो उसे भी……बाम्मनों के बारे में कह रही थी न; जरा सुनूं क्या कहती है।"

"हां-हां कहूंगी खूब जी भर कर कोसूंगी, काई मेरा क्या बिगाड़ लेगा।" कहते-कहते कोमली का पैर फिसल गया, पुराना चौखट खिसक गया ओर वह गिर पड़ी।

"पगली को बहुत जल्दी आवेश चढ़ने लगता है। अब इसके लिए जल्दी से एक अच्छा-सा दूल्हा ढूंढ दूं तो मैं आराम से माला जप सकूंगी। आप पढ़े-लिखे हैं आपको मेरी बेटी के साथ शादी करने में कोई एतराज नहीं होगा यह सोचकर मैंने बात आपके पिता के सामने उठाई तो वे गुस्से से सांप की तरह मुझे काटने दौड़े…अब किसी को क्यों दोष दूं, मेरी ही किस्मत खोटी है। अच्छा एक बात पूछती हूं किसी से कहियेगा नहीं…आपकी माताजी कैसे मर गयीं। सुना है उनकी हत्या की गयी थी।"

दयानिधि उसकी ओर देख न पाया। उसने सिर झुका लिया। चारपाई पर पड़ी चादर को उंगली में लपेटने लगा…उसे इस बात की कभी शंका भी नहीं हुई थी…"अगर यही सच है तो ? उफ्……उसके पिता हत्यारे हैं और वह स्वयं ? एक हत्यारे का बेटा है ? उसे लगा कि नर्क के किवाड़ किसी ने उसके लिये खोल दिये हैं, उसमें जंगली पशु भूखे चिल्ला रहे हैं। सारी की सारी आदिम बर्बर शक्तियां वहां तांडव कर रही है। अब वह मनुष्य नहीं रह गया है, जल-भुन कर राख बन हवा में मिला हुआ आवेश का मलबा मात्र रह गया है।

"मामूली सी कोई बिमारी थी…" सिर झुकाये ही उसने उत्तर दिया।

"जाने भी दीजिए मैंने यूं ही कहा था। अब मुझे क्या कोई कैसे भी मरे।

अमीरों के घर ऐसी बातें तो होती ही रहती हैं, दूसरा कोई कहां तक इन सब बातों से नाता जोड़ता फिरे ।''

दयानिधि को डर लगने लगा । हिंदू समाज का एक कुलीन पति इसके अलावा और क्या कर सकता है ? अपनी कुलीनता के कारण पत्नी को तलाक भी तो नहीं दे सकता । छोड़ देता है तो उसके कुल की मर्यादा मिट्टी में मिल जाती है । पत्नी के बुरे चाल-चलन को न ीं सह कर भी वह चुप नहीं रह सकता, ऐसा करे भी तो समाज उसे असफल प ति की उपाधि दे डालता है । साहस कर के इधर-उधर के निर्णय भी नहीं ले पाता । डर उसे खा जाता है । उसे अपनी हत्या करने के अलावा दूसरा क ई चारा नहीं । लेकिन वह भी नहीं कर पाता, प्राणों के प्रति मोह यह कार्य नहीं करने देता । ओह कितना बड़ा छल, कितना धोखा है, हत्या का अपराध बड़े भाई के सिर न पड़े इसलिए उसे दूसरी जगह भेजकर जो डाक्टर गांव में नहीं थे उनके लिए खबर भिजवा कर, स्वयं जब वह घर पर नहीं था ऐसा अनुकूल समय देखकर मां की हत्या कर डाली बापू ने और फिर दूध का धुला जैसे दिखने के लिए चुपचाप सड़क पर आकर पुलिया पर बैठ गये । उफ् कितना बड़ा षडयंत्र है । कैसा अच्छा नाटक खेला है उन्होंने ? शव की परीक्षा होती तो सारा रहस्य खुल जाता । अब तो कुछ भी नहीं हो सकता । मृत शरीर को जलाकर भस्म कर दिया गया है । बची खुची हड्डियां भी नदी में बहा दी गयी हैं । ऐसे नाटकों को सफल बनाने के लिए ही श्राद्ध कर्म की रस्में बनायी हैं उन दूर दृष्टि वाले पूर्वजों ने ।

''किसी दुश्मन ने उड़ा दी होगी ऐसी झूठी खबर ।'' उसने कहा ।

''जाने भी दीजिए । अब आप सबसे मत कहते फिरना वरना ये लोग मुझे जीने नहीं देंगे ।''

''हम लोगों में ऐसी बातें नहीं होतीं ।''

''हां बिलकुल नहीं । उन्हें तो घर में ही फांसी लगाकर सड़ जाना होता है ।'' कोमली ने बड़ी कटुता से कहा । सातों परंपरा से ब्राह्मण जाति द्वारा निम्न वर्गों पर किये जा रहे अत्याचारों के प्रति अचानक आग भड़क उठी हो । इतने पर उसकी मां डींग हांकती है कि वह ब्राह्मण की संतान है ।

''अरी चुप भी रह···काहें को बात का बतंगड़ बनाती है ।'' कामाक्षी ने बेटी को डांटा । थोड़ी देर तक निस्तब्धता बनी रही । दरवाजे के चौखट पर बैठी

आस-पास घूमती मधुमक्खी से बचने के लिए मुंह हिला रही थी। उसने कान में उंगलियां देकर मधुमक्खी को संबोधित किया...."जा जाकर उन्हें काट।" मधुमक्खी जब दयानिधि के मुंह पर बैठने लगी तो फिर दयानिधि के मुंह पर से उसे भगाती हुई चिल्लायी..."उठिये-उठिये काट लेगी।"

दयानिधि को कुछ सूझ नहीं रहा था कि क्या करे। वह उठकर जाना चाहता था पर जा नहीं पाया था। सोच रहा था "आखिर क्यों आया है? कोमली को देखने के लिए?"

कामाक्षी ने पूछा—"सुना है नरसम्मा सुशीला के साथ आपका रिश्ता तय करने आई है?"

"सुशीला मेरे साथ शादी नहीं करेगी।" उसने कहा।

"सुशीला इनके साथ नहीं करेगी पर ये सुशीला के साथ शादी कर लेंगे।" कोमली ने ताना दिया।

"कमबख्त कहीं की, चुपकर।" कामाक्षी ने बेटी को झिड़का।

"खैर यह बताइये सुशीला किससे शादी करेगी?"

"उसके मन की बात मैं क्या जानूं?"

"अच्छा आप किससे शादी करेंगे यह तो बता सकते हैं न?"

दयानिधि इस प्रश्न का ठीक उत्तर नहीं दे सकता। उसमें साहस नहीं कि कह दे कि "कोमली से करूंगा।" अगर कहता है तो अवश्य बात पूरी करनी होगी, पर क्या उसका मन इस बात के लिये तैयार है।"

विवाह के लिये स्त्री पति को स्वीकार करती है और पुरुष स्त्री के लिये विवाह करना स्वीकार करता है।

उसे विवाह नहीं चाहिए। वह समझ नहीं पा रहा था कि विवाह क्या होता है। "कोमली को पत्नी के रूप में वह नहीं स्वीकार कर सकता। कोई सुनेगा तो हंसेगा कि भला कोमली भी पत्नी बनकर बच्चे जनेगी, और खाना पकायेगी? कोमली किसी की पत्नी नहीं हो सकती। वह किसी भी पुरुष के हाथों नहीं मसली जा सकती। चांद, तारे, समुद्र, ताजमहल, बाग-बगीचों को लोग देखकर आनंद पाते हैं। कोई भी उनमें से किसी एक पर अपनत्व नहीं जताता। कोमली के लिए भी यही नियम लागू होता है। वह किसी की पत्नी न बनेगी न बन पायेगी। वह तो साम्यवाद व्यवस्था के अंतर्गत एक सौंदर्य संस्था है।

कामाक्षी ने कहा—"क्या सोच रहे हो?"

दयानिधि चौंका।

"कि आप किससे शादी करेंगे ?"

"मैं—सच पूछो तो मैं शादी नहीं करूंगा।'

"रहने भी दीजिए इन बातों में क्या रखा है ? कल कोई लड़की तगड़ा दहेज लेकर आयेगी तो चुपचाप हमें भी बताये बगैर उससे शादी रचा लेंगे। क्यों है न यही बात ?"

वह इन बातों का उत्तर नहीं दे सकता था। उसके दिमाग में इन प्रश्नों के लिए कोई स्पष्ट उत्तर अभी तक नहीं उभरे थे। उसने समाज के दृष्टिकोण से अपने को और अपने यौवन को नहीं परखा था अभी तक। और न ही वह अपने मन में उठी बातें दूसरों को समझाने का उपाय जानता था। उसे कोई भी नहीं समझ पाता है इसका उसे दुख होता था। पाश्चात्य, वैज्ञानिक दृष्टि-कोण से हर वस्तु को परखने वाले, भावनाओं की दासता में पले, भारतीय युवक, और मिट्टी में दबी हुई भारतीय समाज की परंपराओं के बीच एक बहुत बड़ी दीवार खड़ी है सो वह कितना भी चिल्लाये दूसरी ओर के लोग उसे सुन समझ नही पाते।

"मुझे दहेज नहीं चाहिए ?"

"फिर वही झूठी बातें···अजी काफी दहेज लायेगी वह कलक्टर साहब की बेटी है और पढ़ी लिखी भी···।"

उसने कोमली की ओर देखा।

"अपनी बेटी के लिए मैं आप पर दबाव नहीं डालूंगी उसकी और क्या ताक रहे है ?"

"अपनी बेटी की शादी नहीं करोगी क्या ?"

"जाने उसकी किस्मत में कौन लिखा है···अब आप क्यों करने लगे उससे। आप तो बड़े आदमी हैं।"

"मैं किसी से भी शादी नहीं करूंगी।" कोमली ने तुनक कर जबाव दिया।

"हां ठीक कहती हो। तुम्हें शादी करने की जरूरत नहीं।"

"ऐसा मत कहो बाबू। क्या सोच रखा है तुमने अपने मन में ? ये सब बातें आप लोगों के घर में होती हैं। उधर दहेज के लिए शादी करते हो और फिर उससे मन नहीं भरता तो बस्ती की गलियों को छानते हो और हमारी जानें

खाते हो ।"

कामाक्षी की बात काटते दयानिधि ने कहा—"पुरानी बातें फिर छेड़ रही हो ।"

"नहीं तो । फिर आप हम पर क्यों ताना देते हो कि मेरी बेटी को शादी करने की जरूरत नहीं और क्यों मेरी बेटी पर बुरी नजर डालते हो···बताओ क्या हमारे घर इसके लिए नहीं आते ? साहस है तो इससे शादी करो वर्ना कल से मेरे घर में कदम मत रखना, समझे ! बेचारी मेरी बेटी कच्ची उम्र की है और नादान है, अकेले में···"

"मैं अब छोटी नहीं रही अम्मा···बड़ी हो गयी हूं ।"

"जा भीतर जाकर पड़ी रह । बीच में मत आ । हर बात में टांग अड़ाती है ।"

दयानिधि में साहस नहीं था कि कोमली के साथ विवाह करने के लिए हामी भरता । सचमुच ही बड़े जोखिम का काम है कहना और करना । पहाड़ की एक चोटी से दूसरी चोटी पर छलांग लगाने जितना कठिन है । समझ में नहीं आ रहा था कि आखिर वह क्या करे । कोमली ने दूसरे कुल में क्यों जन्म लिया ? उसे इस बात का उत्तर नहीं मिल पाता था उल्टे एक अजीब-सा भय उसे अपनी चपेट में लिए ले रहा था ।

कामाक्षी ने भी बात गंभीरता से थोड़े ही कही होगी । वह तो थाह लेना चाहती होगी । क्या कामाक्षी नहीं जानती कि सचमुच यह कितनी असंभव बात है । उसने अपने आपको समझा कर कामाक्षी से पूछा···"अगर मैं हां कर दूं तो क्या सचमुच कोमली की शादी मेरे साथ कर दोगी ?"

"कह कर तो देखिए । मुझे उससे बढ़कर और कुछ नहीं चाहिए । आप में क्या नहीं है ? धन, जायदाद, पढ़ाई और सुंदरता सभी कुछ तो है आपके पास, मेरी इस बेवकूफ लड़की के लिए आपसे बढ़कर दूसरा वर कौन मिलेगा ?"

"छि:···ये मेरे पती होंगे···जरा मुंह तो देखो ।"

"देखा न तुमने । अभी से यह हाल है । और अब तक इसके साथी कृष्ण-माचारी, रामनाथम् वगैरह तीन-चार लोगों के नाम सुन चुका हूं ।" कुछ और भी कहते कहते रुक गया ।

"किस कमबख्त ने आपके कान भर दिये । जरा उसे मेरे सामने तो लाओ

दांत उखाड़ कर रख दूंगी ।"

"ओह अब याद आया अम्मा । उस सांझ की सर्दी में घर में आने दिया उसी का बदला चुका रहे हैं···अम्मा तू भीतर जा मैं इनकी खबर लेती हूं ।" कहकर कोमली ने मां को बरामदे की ओर धकेल दिया ।

"अब तुम दोनों लड़ो चाहे झगड़ो······दोनों की बातों में मैं नहीं पड़ती बाबा ।" कहती हुई कामाक्षी बाहर चली गयी ।

कोमली की आंखों में चमक आ गयी । पलकें झुका कर. ओंठ दबाकर, ठोड़ी को बड़े ही नखरे से हिलाती हुई बोली···"हूं । अब बताओ क्या कह रहे थे ?"

"हां, मैंने सुना था ।" दयानिधि को डर लगा ब्राह्मणों के अत्याचारों के प्रति एक क्रूर प्रतिहिंसा की भावना वह कोमली में पहले देख चुका था ।

"क्या तुमने अपने कानों से सुना था ?" वह गरज उठी ।

"हां तुम्हारी ही जाति के लोग ··?"

"क्या बक रहे हो जरा फिर से तो कहो एक बार ।"

"लोग कह रहे थे तो मैंने सुना । अब तुमको इतना गुस्सा क्यों आ रहा है मेरी समझ में नहीं आ रहा ।"

वह दयानिधि के पास गयी । उसका सिर ऊपर उठाकर दोनों आंखों में देखा । उफ् कोमली का चेहरा······वे आंखें लग रही थीं जैसे पानी के बदले खून से सींचे गये दो गुलाब के फूल हों ।

"मैंने भी सुना है तुम्हारी अम्मा के बारे में । उसके बारे में क्या सफाई दोगे ?" गले में स्वर दबाकर उसने पूछा । अनायास ही दयानिधि ने दाहिने हाथ से कोमली के गाल पर कस कर एक थप्पड़ जड़ दिया । सांस खींचकर चारपाई पर जा गिरी मानों भूकंप से जड़ समेत कोई पेड़ उखड़ कर गिर पड़ा हो । मैले तकियों पर सिर रख कर उसने चादर से मुंह छिपा लिया ।

कमरे में रोते फिर रहे दो पतिंगे दीवार पर लगी लालटेन का चक्कर लगाने लगे । हिचकियां लेती बत्ती की लौ हिचक रही थी । उसके बुझते जलते प्रकाश में विकृत परछाइयां दीवार पर डोल रही थीं ।

दयानिधि ने अपना हाथ देखा । अनायास ही उससे यह हो गया था । मनुष्य अपने शरीर के किसी अंग को वश में नहीं रख सकता है । और न ही अपने आवेश को वह बांधकर रख सकता है । वेदों में

वह इस सत्य को जानने के नारे लगाता है, पर आचरण में वही सत्य कितना भयंकर होता है—इस सत्य का सामना करना उसके बूते के बाहर होता है। अगर कोमली की बात में सचाई नहीं थी तो क्रोध उस पर क्यों हावी हो गया ? उसने जो सच बातें सुनी थीं सो कोमली से कहीं तो कोमली को ही क्यों आवेश चढ़ गया ? शायद कोमली के बारे में कही गयी बातें सच ही होंगी वर्ना उसे इतना क्रोध नहीं आता। कोमली अगर चोट करना ही चाहती थी तो और भी तो कई तरीके अपना सकती थी—मां की ही बात उसने क्यों उठाई ? पुरुष को किस भांति चोट पहुंचायी जाय, इस विषय में स्त्री की बुद्धि बहुत तेज़ होती है।

वह उठकर खड़ा हो गया। कोट के भीतर से उसने पैकेट बाहर निकाला और उसे मेज़ पर रखकर जाने लगा। कोमली ने फौरन उठकर उसका हाथ पकड़ लिया। उसके दिमाग़ ने काम करने से इंकार कर दिया। आंसू नदी की भांति कपोलो पर बह कर वहां से कई धाराओं में बंटकर अधरों को भिगोते हुए चिबुक के नीचे छुपते जा रहे थे। बिखरे आंचल को समेट कर उसने आंखें पोंछी। आंसू की एक बूंद अब भी आंख की कोर में रुकी थी।

"आप नहीं जा सकते।"

"अब मैं यहां रहकर भी क्या करूंगा ? तुम्हारा मुझसे क्या वास्ता ?"

"आप यहां आये ही क्यों ?"

"एक बार देख जाने को आया था—वह मेरी बेवकूफी थी।"

"देखकर जाने का अर्थ क्या थप्पड़ मार कर जाना होता है ?"

"ऐसा मत कहो, कोमली।"

"तब मुझ पर लांछन क्यों लगाते हैं आप ?"

"मुझे तुमसे अब कोई वास्ता नहीं रहा।"

"जब वास्ता नहीं रहा तो देख जाने के लिए क्यों आये थे ? आप थे तो मैं चुपा गयी कोई दूसरा होता तो नाखूनों से चीर डालती।"

"इतना गुस्सा है तो अब भी क्या हर्ज है ? सामने हाजिर हूं। मुझे चीर डालो।"

"न रे बाबा न—मेरे नाखून ही नहीं हैं।"

'अच्छा अब छोड़ो मुझे जाना है।"

"सर्दी में कहां जायेंगे—देखो न वह कमबख्त लालटेन तेल न होने से कैसी भर-भर कर रही है।" कहती हुई उठी। उसने साड़ी ठीक की और लालटेन में तेल डाला।

"मुझे साड़ी बांधनी नहीं आती। देखो न अम्मा की साड़ी है, लगता है जैसे पाल लहरा रहा है ?" कहकर हंसने लगी। निधि को लगा कि तूफान के वेग से घबराकर तूफान थमते ही, पत्थर के पीछे से झांकते वनफूल की भांति कोमली का चेहरा खिल उठा है। आंसू ने पाप को धोकर उसे पवित्र बना डाला था।

'उंह कितनी गंदी बू देता है यह मिट्टी का तेल ज़रा हथेली तो सूंघ कर देखिये।" उसने चेहरा ऐसे बनाया मानो वहीं पर कै कर देगी। कोमली की आंखों की कोर में सूखते जा रहे आंसू को निधि ने उंगली से हटाया और उसे जीभ से लगाकर देखा। कोमली के आंसू भी खारे हैं।

"यह क्या कर रहे हैं, अम्मा देखेगी तो मेरी जान ले लेगी।" कहती हुई कोमली ने मेज़ पर से पैकेट लेकर खोला। सिंगारदान में पाऊडर, स्नो, सेंट की शीशी, रिबन और साथ ही एक छोटी सी पुस्तक भी थी। कोमली ने एक-एक को निकाल कर आश्चर्य से उन्हें देखा। थोड़ा सा पाऊडर हाथ में लेकर कहा—"ये तो पावड़ी है।" मुंह से निकली हवा के कारण हथेली का पाउडर उड़ गया और वातावरण सुगंध से भर गया। "ज़ोर से तो नहीं लगा न ?" दयानिधि ने बड़े ही नरम स्वर में पूछा।

"क्या ? थप्पड़ ? उसे तो मैं कभी की भूल गयी। रो दी थी न दर्द आंसुओं में घुलकर बह गया। अम्मा की बात न मानूंगी तो हड्डी पसली एक कर देगी। पर क्या बात है कि अम्मा मारती है तो मुझे रोना बिलकुल नहीं आता।"

"तब फिर मेरे मारने पर क्यों रोना आ गया तुम्हें ?"

"पता नहीं—आगे से कभी यूं ही झूठी बातें मत कहना।"

"आगे मैं कभी यहां आऊं तब न ?"

"आओगे क्यों नहीं, यहां आये बिना आपको चैन कैसे आयेगा ?"

"यह सब बातें तुम कैसे जानती हो ?"

"मैं क्या जानूं ? अब ये सारी चीजें तुम क्यों लाये ?"

"तुम्हारे लिए लाया हूं। इन सबको लगाकर अच्छी साड़ी पहन कर कल तुम्हें

हमारे साथ पिकनिक चलना होगा।''

''यह क्या होता है ?''

''मैं, सुशीला, अमृतम् सब मिलकर डोंगी में बैठकर नदी में सैर करने जायेंगे। साथ में नाश्ता पानी भी ले जायेंगे। सब खा पीकर जंगल की खूब सैर करेंगे। तुम्हें भी आना होगा। समझी।''

''अब मेरी क्या ज़रूरत ? सुशीला और अम्मुतरं तो होंगी न साथ में।''

''अम्मुत्तंर शब्द ठीक नहीं कहा तुमने। कहो अ···मृ···तम्···हूं, बोलो न।''

ज़बान पर चढ़ती नहीं। कोशिश करूंगी···अमतंर छिः छि नहीं बैठा। इस बेर सुनो अमरुत्तंर और वही शब्द उच्चारण करती बैठ गयी।

''सुनती हो। कल आना होगा तुम्हें ?''

''उनके साथ ? न रे बाबा न—अम्मा हड्डी तोड़ देगी।''

''तुम्हारी अम्मा से मैं कहूंगा।'' दयानिधि ने उसके कंधे पर हाथ रखना चाहा पर साहस नहीं हुआ।

''रेशमी साड़ी अम्मा की है···ठंड लगती है इससे। एक सूती साड़ी खरीदूंगी मुझे पंद्रह रुपये दो न ?···ऊंहूं मैं नहीं मांग रही—अम्मा ने मांगने को कहा था।'' पल्लू का छोर दोनों हाथों से मरोड़ती हुई और बायें पैर के अंगूठे से ज़मीन पर लकीरें खींचते कहने लगी—''अम्मा को हमेशा पैसों की ज़रूरत रहती है।''

''और तुम्हें ?''

''छिः ! मैं क्या करूंगी पैसे लेकर ? वह तो अम्मा के लिए मांगे थे मैंने।''

दयानिधि का दिमाग़ चकरा गया। पैसा कमाना ही कामाक्षी का उद्देश्य रहा हो तो कोमली द्वारा वह हज़ारों कमा सकती हैं—तिरुपति जाकर मंदिर के आगे बिठा दे और झोली फैलाये तो एक-एक पैसा भी लोग डालें तो वर्ष भर में उसके पास अच्छी खासी पूंजी जमा हो जायेगी। कोमली के कई पुरुषों के द्वारा मसले जाने की कल्पना से वह कांप उठा।

''तुम शादी नहीं करोगी ?''

''छिः शादी ? वह क्या होती है ?''

''शादी ! दुनिया में जो पैदा हुआ है उसकी शादी होनी ही चाहिए। विशेषकर स्त्री की। शादी न करने वाले पुरुष का तो समाज में स्थान ही

नहीं होता। पुरुष को अकेला कोई नहीं रहने देता। स्त्रियां उसका शिकार करने लगती हैं। वेदांतियों ने ब्रह्मचर्य के बाद गृहस्थी का आदेश दिया है। शादी किये बिना एकाध पुरुष भले ही रह जाय पर स्त्री को शादी के बिना रहने की कतई मनायी है।" वह सोच रहा था। अचानक उसने पूछा—

"पैसे लेकर रात को आ जाऊं ?"

"कल आइये।"

पिछवाड़े जाकर उसने दरवाज़ा खोलना चाहा।

"जा रहे हैं बाबू ?" कामाक्षी ने आहिस्ता से पूछा। दयानिधि ने कोई उत्तर नहीं दिया।

"ऐसे क्या मन भरेगा ? अब शौक ही पूरा करना है तो मेरी बिटिया से शादी कर डालो झटपट।"

"मैं शादी नहीं चाहता।"

"तो फिर काहे को हमारे घर आते हो। ऐसी बातें आपकी जाति में होती होंगी पर हम लोगों के यहां नहीं चलतीं। बिरादरी के लोग मेरे मुंह पर थूकेंगे हमारी भी अपनी मान मरजाद है बाबू।"

दयानिधि बिना उत्तर दिये चला गया। बाहर काफी ठंड थी। बर्फ और सर्दी ने मिलकर यम के पाश जैसे पूरे गांव को घेर लिया था। गरमाहट के लिए लगता था कि झोपड़ियां एक-दूसरे से सटी खड़ी हैं। कमरे में कोमली के साथ जब बातें कर रहा था तो लगा कि आंच ताप रहा है। गरमी से वातावरण बोझल हो गया था। आंसुओं से भीगे तकिये पर हाथ रखते समय लगा था कि आग में हथेली रखी है जो उसके चारों ओर जल रही है, पर उसकी रोशनी नाम मात्र को भी नहीं थी।

घर पहुंचा। बरामदे में जगन्नाथम् सोने के प्रयत्न में था। सुशीला के कमरे में लालटेन जल रही थी। किवाड़ों के छेद से उसने भीतर झांका। साथ के कमरे में नागमणि और अमृतम् कौड़ियां खेल रही थीं। नरसम्मा रसोई में किसी से कह रही थी—

"हमें आये कई दिन हो गये हैं। अब बोरिया बिस्तर बांधने की तैयारी करनी होगी। आज ही भैया की चिट्ठी आई है। उसने जल्दी वापस आने को लिखा है।"

"मामा को ही यहां क्यों नहीं बुला लेतीं ?"

"अरे। उस बेचारे को समय ही कहां मिलता है ? कितना भी तहसीलदार हो लेकिन बेटी के रिश्ते के लिए इधर उधर पांव मारने ही पड़ते हैं।" नरसम्मा ने उत्तर दिया।

"तुम्हारी बेटी तो पढ़ी लिखी है। मन चाहा वर स्वयं ढूंढ लेगी। कई लोग तो लड़कियों को इसी कारण पढ़ा रहे हैं कि वे बेटियों के लिए रिश्ते ढूंढ नहीं पाते। अपना मन चाहा वर ढूंढ लेने पर बाद में अगर कोई बात बिगड़ भी जाये तो उसके लिए मां-बाप को तो गाली नहीं दे सकेंगे।" निधि ने उत्तर दिया।

"अच्छा अब तू बता सुशीला के बारे में तेरी क्या राय है। वह तो अपना भला बुरा खुद नहीं जानती। उसे यों ही उसकी मर्ज़ी पर छोड़ थोड़े ही सकते हैं। बच्चों के विवाह के बारे में सोचना करना बड़ों का कर्त्तव्य होता है।

"हां—वो तो है ही।" कहता हुआ निधि भोजन पूरा कर बाहर हाथ धोने आया। खेल पूरा करके नागमणि बरामदे में आ गयी और अमृतम् चौखट के पास दीवाल से सहारा लेकर खड़ी हो गयी। "इतनी रात तक कहां गये थे जीजा जी।" दयानिधि ने उत्तर नहीं दिया।

नागमणि जाते हुए कहने लगी—"कोमली के घर तक गये होंगे, क्यों ?"

दयानिधि सोच रहा था जाने स्त्रियां किसी के व्यक्तिगत विषय को इतनी सहजता से और सीधे कैसे कह देती हैं। परायी स्त्री के बारे में कुछ कहने सुनने को इन्हें इतना अधिकार जाने कैसे मिल जाता है।

"कौड़ियां खेलोगे जीजाजी ?"

"मुझे खेलना नहीं आता—सिखा दो तो ··।"

"अरे वाह ! नेकी और पूछ पूछ—चलो भीतर चलो।"

दयानिधि भीतर पलंग के पास कुर्सी खींचकर बैठ गया और अमृतम् पलंग पर। अमृतम् बातों में लग गयी। "जीजाजी। सच मानो इन लोगों की जात ही ऐसी कि इनको ढंग से बातचीत करना भी नहीं आता।" जाने कौन-सी और किस के बारे में अमृतम् बताती जा रही थी। दयानिधि की समझ में कुछ नहीं आ रहा था पर अमृतम् जब अवर जाति की लड़की पर क्रोध प्रकट कर रही थी और उसके माथे पर बल पड़ रहे थे तो दयानिधि अमृतम् के बल पड़े

ललाट के सौंदर्य को एकटक देख रहा था।

"अरे जीजाजी। ऐसे क्या देख रहे हो ?"

"........................"

"तो मुझे भी नहीं बताओगे कि यह कोमली कौन है ?"

"अमृतम्। मेरी मदद करोगी ? मैं बड़ी ही मुसीबत में पड़ गया हूं।"

"बताओ न कौन सी मुसीबत है। विश्वास करो मैं किसी से नहीं कहूंगी। जहां तक मुझसे बन पड़ेगा जरूर मदद करूंगी। कहो क्या बात है ?"

"तो मैं तुमसे कुछ मागूंगा। मुझे इस वक्त पचास रुपये की सख्त ज़रूरत है। जल्दी ही वापस लौटा दूंगा।"

"बस। इतनी सी बात ? लेकिन क्या अभी चाहिए ?"

"तुरंत...इसी क्षण।"

"इतनी रात गये क्या करोगे ?"

"तुम सब जानती हो अमृतम्।"

"मैं जानती हूं ? तुम भी बड़े वो हो जीजाजी ! भला मैं कैसे जानूंगी ?" आश्चर्यभरी हंसी हंसने लगी।

"ज़रा सोच कर देखो अपने आप सूझ जायेगी।"

"नागमणि होती तो कह देती कि कोमली ने फरमाइश की होगी।"

"तुम भी कम नहीं हो। मैं तुम्हारे उन श्रीमान जी को इसलिये देखना चाहता हूं कि उन्होंने तुम्हें बेवकूफ कैसे और क्यों कहा ?"

"कैसी बातें करते हो जीजाजी, मैंने तो यूं ही कह दिया। मुझे कैसे मालूम तुम्हारे मन की बात। खैर बताओगे नहीं कि कोमली कौन है ?"

"अब तक क्या नागमणि ने तुम्हारे कानों में यह बात नहीं फूंकी—उसे तो अब तक ढिंढोरा पीटना चाहिये था मेरे बारे में।"

"जाने सुशीला के कान में कुछ फूंका होगा। दोनों में बड़ी घुट रही थी आज। पर अब बताओ न कोमली के बारे में ?"

"उसे तुम बिलकुल नहीं जानती वह एक ही अकड़ू और अड़ियल है और बिलकुल असभ्य। बातें करने तक का शऊर नहीं। वह एक मस्तिष्क रहित शरीर है आत्मा रहित अंग मात्र। उसका दर्शन पाने के लिए कई अवतार लेने पड़ेंगे।"

"ठीक कहते हो जीजाजी। उनमें तौर तरीका सलीका बिलकुल नहीं होता और बिलकुल भोंडी रसिकता होती है। हमारे गांव में भी एक ऐसी ही जाति की लड़की है। इनके साथ बड़ा ही भोंड़ा मज़ाक करती रहती है और इनकी भी मत पूछो उसके सामने दुम हिलाते रहते हैं। उसके सारे नखरे सहते हैं।"

"मतलब है कि फिर तुम्हारे श्रीमान जी भी लीलायें करते हैं? क्यों?"

"हां, बस यही समझ लो यह तो हम कुलीनों में घर-घर की कहानी है और मामूली अंतर है तो इतना कि कुछ लोग यूं ही बातों से प्रकट हो जाते हैं और कुछ छुपे-छुपे नाटक चलाते हैं। उस औरत ने ही जब शर्म और हया घोलकर पी ली तो ये भी तो बेचारे क्या करें आखिर।"

"कोमली में हया लाज शर्म बिलकुल नहीं है।"

"तो फिर ऐसी लड़की तुम्हें कैसे रास आ गयी?"

"यही तो नहीं बता सकता अमृतम्। यही जान पाता तो मुझे मेरे जीवन का रहस्य हाथ न लग जाता?"

"इतनी सी बात में रहस्य क्या होगा भला? खाक-पत्थर। अरे ये तो बचपने की बातें हैं। घर-गृहस्थी में पड़ोगे तो ये सारी बातें छूमंतर हो जायेंगी।" कहती हुई अमृतम् ने चादर पर गिरा दवनम (सुगंध भरा पत्ता) जूड़े में खोंस लिया।

"गृहस्थी के नाम से मुझे डर लगता है और अमृतम्! मुझे उस गृहस्थी के चक्कर में पड़कर सुखी होने की बात से ही चिढ़ आती है। सुनसान जगल में ऋषि बनकर रहना आसान है पर सुगंध भार से बेसुध बना देने वाले पुरुषों के बीच नाक बंद करके बैठना इंसान के वश में नहीं। तुम्हारा क्या ख्याल है?"

"जंगल में तो जंगली फूल होंगे ही।" बगीचे में आग लगते देखकर रानियों की भांति अमृतम् विषाद की हंसी हंसने लगी।

"ऐसी सिर फिरी और बेशऊर गंवार के पीछे मेरे पागलपन को देखकर तुम मुझ पर तरस खा रही हो न?"

"नहीं जीजाजी। गंवार हूं, पर मैं तुम्हारा दुख समझ सकती हूं। पागलों को देखकर हम तरस खाते हैं उसी भांति पागल भी हम पर तरस खाते हैं।"

"अमृतम् तुम जैसी उदारता, संवेदना और करुणा हर एक में हो तो यह

पृथ्वी सचमुच स्वर्ग बन जाती ।"

अमृतम् ने जाकर अपनी पेटी खोली और उसमें से चांदी की साबुनदानी में से पांच नोट निकालकर निधि को पकड़ाये ।

"अमृतम्, मैं सचमुच नहीं जान पा रहा हूं कि अपना संतोष और कृतज्ञता किस प्रकार जताऊं ।"

"अरे तो इसमें कौन बड़ी बात है किसी को कभी न कभी पैसों की ज़रूरत पड़ ही जाती है । इस वक्त मेरे पास ये रुपये हैं तभी तो दे पायी, वर्ना कहां से दे पाती ?" कहती हुई अमृतम् जम्हाई लेकर भीतर चली गयी ।

दयानिधि ने गिलास में रखा दूध पी डाला, घड़ी देखी और बाहर निकल आया । बाहर बरामदे के कौने में बैठा नारय्या कुछ बांध रहा था ।

"नारय्या । यह गठरी से कैसी कुश्ती लड़ रहे हो ?"

"बड़े बाबू के धुले कपड़े हैं । सुबह चार बजे उठ कर उनके पास जाना है ।"

दयानिधि सड़क पर निकल आया । पुलिया के पास आकर खड़ा हो गया और आकाश की ओर देखने लगा । नारय्या ने पूछ ही लिया—"इतनी रात गये किधर छोटे बाबू ।"

"नींद नहीं आ रही थी सो चंदा को देखने निकल आया हूं ।"

"उसके घर मत जाइये, खबर भिजवाई है कि घर मेहमान आये हैं । बाबू को आने से मना कर देना ।"

"तुमसे कहा था ?"

"जी, दुकान पर मिल गयी थी ।"

"कौन ?"

"वही कामाक्षी की बेटी और कौन ? बाबू आप उस बदचलन के साथ क्यों ?"

"नारय्या तुम्हारे मुंह से उसके बारे में ऐसी बातें सुनना मैं पसंद नहीं करता । उसके चाल चलन के बारे में तुमने कभी अपनी आंखों से देखा तो तब कहना वर्ना दूसरों की झूठी बातों को लेकर ...।"

"बाबू । यह औरत जात ही ऐसी होती है । देखने करने की ज़रूरत नहीं । जो धेला ज़्यादा दे बस उसके संग ।"

"नारय्या स्त्रियों को लेकर तुम्हारे मन में बहुत ईर्ष्या है। सबको तुम अपनी बीवी की तरह ही मानकर उन्हें आंकते हो। यह बिलकुल गलत है। आगे से कभी किसी दूसरे के सामने ऐसी बात मत करना।"

"मैं सबसे क्यों कहूंगा भला। अब उनसे मैं निपट लूंगा। आप अंदर जाकर सो जाइये। बर्फ गिर रही है। तबियत खराब हो जायेगी।"

दयानिधि चुपचाप भीतर चला आया।

जवानी का राज

खिड़की के सुराख से सूर्य रश्मि दीवार पर टंगे कैलेंडर पर पड़ रही थी। निधि ने कंबल समेटा। कैलेंडर 1934 का दिसंबर महीना सूचित कर रहा था। बस अब दो दिन में 1935 आ जायेगा।

"जीजाजी! कब का सवेरा हो गया आप कंबल के पर्दे से बाहर आइये। एक कोमलांगी आपके लिए आई है।" जगन्नाथम् ने आवाज़ दी। "कौन है?"

"एक सुदरांगना विधुवदना कुंदरदना तन्वंगी लता—।"

"अभी तक नहीं उठे जीजाजी।" कहती हुई अमृतम् भीतर आई और निधि की ओर देखने लगी। निधि ने भी अमृतम् को देखा। लगता था रात भर रोती रही होगी। चेहरा मुर्झा गया था। आंसुओं में भीगने के कारण लटें चिपक गयी थीं और माथे पर लटक रही थीं।

"रात में नींद नहीं आई क्या?"

"यह प्रश्न तो मैं तुमसे पूछना चाहता था।"

"मुझे भला क्यों नहीं आती?" विषाद की छाया आंखों में लिये हंसने का प्रयत्न करने लगी अमृतम्।

"मैंने सोचा शायद अपने श्रीमान जी के लिए।"

"अरे आंख खोलते ही छेड़ने लगे। कोई सुनेगा तो क्या कहेगा? नारय्या…दांतौन और पानी ले आना वर्ना ये महाराज उठेंगे नहीं।"

"नारय्या नहीं है। बड़े सवेरे उठकर पिताजी के लिये कपड़े ले गया है।" निधि बोला।

"वाह ! क्या शुभ समाचार सुनाया है जीजाजी। दुर्वासा महामुनि के जाने के बाद आश्रम की भांति है आज अपना यह घर—अतः आज दांतौन-पानी तौलिया स्वयं ही लाने होंगे—लो मैं उठता हूं। तुम भी उठो जीजाजी।" जगन्नाथम् उठकर निकल गया।

"निधि भी उठकर बरामदे तक आया। आगंतुक उसी बस्ती में पढ़ रही एक गरीब ईसाई लड़की रोज़ थी। मां जब थी उसकी कुछ न कुछ सहायता करती रहती थी। वह निधि के पास उसकी मां के मर जाने पर संवेदना प्रकट करने आई थी। रोज़ के साथ वह सड़क पर पुलिया के पास आकर खड़ा हो गया।

"तुम यह कभी मत सोचना कि मां की मृत्यु के बाद यहां तुम्हारा कोई नहीं रह गया है। आती रहो—मुझसे जो कुछ बन पड़े ज़रूर मदद किया करूंगा ?"

रोज़ ने संवेदना भरे दुख से सिर झुका लिया।

"अभी कुछ चाहिये क्या ?"

"मैं यूं ही कैसे स्वीकार कर लूं। इसमें मुझे छोटापन महसूस होता है। आपकी मां की बात अलग थी। लोग सुनेंगे कि आप भी दे रहे हैं तो कुछ बेतुकी बातें करने लगेंगे।"

"दूसरे क्या कहेंगे इसे सोचकर डरने वाले, जीवन में कभी सुखी नहीं हो सकते। हमें अपना चाल चलन स्वयं पसंद आये, मन उसे न धिक्कारे बस दूसरे कुछ भी कहते फिरें उस पर इतना ध्यान देने की ज़रूरत नहीं। अच्छा एक काम करोगी ?"

"क्या ?"

"कामाक्षी की बेटी को जानती हो न ?"

"कोमली ?"

"जब तुम्हें फुरसत हो उसके पास जाया करो। उससे दोस्ती बढ़ाकर उसे पढ़ाओ। तुम्हें भी फीस दे दूंगा। यह बात उससे या किसी से भी कहने की ज़रूरत नहीं।"

रोज़ी ने हामी में सिर हिलाया पर साथ ही प्रश्न किया "अगर वह न

पढ़े तो ।"

"इसका भार तुम पर है । उसे किसी भी तरह समझाओ बुझाओ ।"

रोज़ चली गयी । निधि पिकनिक के लिये तैयार होने लगा । दस बज चुके थे पर पास के कमरे वाली घड़ी सात बजाकर चुप हो गयी थी । उसे ठीक करने गया । भीतर जाकर देखा कि उसके अपने ही बिस्तर पर अंक तीन की सी मुद्रा में अमृतम् लेटी हुई है । यह सोने के लिये तैयार बिस्तर नहीं था । बिस्तर पर बल पड़े हुए थे । चादर खिसक कर पलंग के नीचे लटक रही थी । एक तकिया सिरहाने और दूसरा पांयचे पर था । अमृतम् ने सिर के नीचे तकिए का सहारा नहीं लिया था । वह कुछ बदली बदली सी दीख रही थी । तकिए का सहारा न लेना उसका प्रत्यक्ष प्रमाण था ।

"अमृतम् सुना तुमने कि घड़ी ने कितने बजाये ?" निधि के प्रश्न का उत्तर भी उसने नहीं दिया ।

"अमृतम् । ऐसे क्यों लेटी हो क्या हुआ तुम्हें ?"

"कुछ भी तो नहीं ।" कहती हुई अमृतम् ने करवट ली ।

"दिन चढ़ आया है उठोगी नहीं ? मालूम है न आज पिकनिक के लिए जाना है । सुशीला, नागमणि दोनों सज-सवर चुकी हैं, बस तुम ही रह गयी हो ।"

"तुम लोग जाओ न जीजाजी । मैं नहीं आऊंगी ।"

"अरे आज ऐसा क्या ? कल तक तो तुम जाने के लिये बड़ी खुश हो रही थीं ।"

"मेरा जी उदास है । अब मेरी क्या जरूरत ? सुशीला, नागमणि तो होंगी ही । सुशीला को मेरा साथ पसंद नहीं जीजाजी ।"

"वह सब ठीक कर दिया है मैंने । अब अगर तुम नहीं आओगी तो वह भी रूठकर बैठ जायेगी ।"

"चलो भी । इन बातों से क्या होता है ? सब तुम्हारा नाटक है नाटक ।"

"सच मानो अमृतम् नहीं तो जगन्नाथम् से पूछ लो ।" कुछ देर रुक कर फिर बोला, "उतना कुछ तुमसे मांग कर भी रात जा नहीं पाया ।"

अमृतम् ने आंखें फैलाकर आश्चर्य से निधि को देखा । उसे पढ़ने की कोशिश करते हुए पूछा..."क्यों ?"

"बस यों ही ।" आधी बात बताकर असली बात टाल गया। टाल जाने में उसे अपने आप पर ग्लानि भी नहीं हुई ।

"मुझे रात भर नींद न आई । तुम्हारा भीतर आना रोशनी कम करना, दूध पीना सब कुछ मैं अपने कमरे से देख रही थी ।"

"अपने श्रीमान जी के लिए तड़पती थी न ।"

"जाओ भी फिर मज़ाक करने लगे। मुझे तो अपने ऊपर खीज हुई कि उनके बारे में बहुत सी बातें तुम्हें बता गयी ।"

"बस इतनी ज़रा सी बात के लिये इतनी बड़ी चिंता कि रात भर सो भी नहीं पाई । विश्वास करो मैंने उसका कोई दूसरा अर्थ नहीं लगाया । तुम्हारे श्रीमान जी का स्वभाव मैं जानता हूं । अब उठोगी भी ।"

"मैं हमेशा मन में प्रतिज्ञा करती थी कि उनके बारे में कभी किसी से कुछ भी नहीं कहूंगी पर जाने तुम्हें देखकर कुछ ऐसा लगा कि सब कुछ कह कर हल्की हो जाऊं ।" अमृतम् इस अंदाज़ से कह रही थी मानो उसने कोई बुरा काम कर डाला है । और अब उसके लिए अपनी सफाई पेश कर रही है ।

"तुमने जो कुछ भी कहा उसमें मुझे कोई घोर अपराध नहीं दिखा ।"

अमृतम् निधि की बात का इंगित समझ न पाई । उसके शारीरिक सौंदर्य को भोगने जितना संस्कार पति में न होने की बात स्वीकारने में पति के प्रति असंतोष से अधिक उस की सौंदर्य की भूख प्रमाणित होती थी पर अमृतम् इसे नहीं मानती थी । लटों को सुलझाती हुई वह उठ बैठी और बोली·· "घर में नरसम्मा मांसी बेचारी अकेली रहेंगी सो मैं नहीं आती तुम लोग चले जाओ ।"

"इतना सब आयोजन तुम ही लोगों के लिए ही किया गया है । अब अगर तुम्हें पसंद न हो तो चलो कोई भी नहीं जायेगा । बस ।" निधि उठकर खड़ा हो गया ।

"नाराज हो गये जीजाजी । ठहरो, दस मिनट में तैयार होकर चलती हूं ।" अमृतम् कहती हुई भीतर चली गयी । निधि बैठक में चला गया । घड़ी सुधारना असंभव जानकर वह मुड़ा ही था कि सामने अमृतम् दिखी ।

"अरे यह क्या अभी यहीं खड़ी हो ? मैं तो समझा था कि तुम स्नान कर चुकी होगी ।" अमृतम् निधि को देखकर दीवार के साथ लगकर चोटी आगे वक्ष पर डालकर आंचल संवारती बोली····"अब मैं नहीं आ सकती ।" और सिर

नीचा कर तिरछी नज़र से निधि को देखने लगी ।

"क्यों, अब कौन सी बला आ गयी ?"

"जाओ भी ।" हंसने के लिए उसके अधर छटपटाने लगे । आंखों में झलकती काली सी प्यास को दांतों से झलकती श्वेत लाज ढक न पाई ।

निधि समझ गया । देखते ही देखते विकसित हो रहे अमृतम् के व्यक्तित्व को सोचकर निधि को डर लगा । अमृतम् प्रकृति के साथ तदाम्य कर चुकी थी, और अब अपने अस्तित्व से वातावरण पर दबाव डालने लगी थी । निधि में एक प्यास जगी कि उसके शरीर को परखे । जिस बात का निषेध हो इंसान का मन उसीके पीछे दौड़ता है । सीमायें छूने के साथ साथ अनुभव में अवमूल्यन होता जाता है । वह एक कदम आगे बढ़ा ।

"दूर हो । मुझ से लग जाओगे"'छूना मना है ।"

"यह तो बेतुकी रूढ़ि है—अब तुम्हें आज भर के लिये इसे त्याग देना होगा ।"

"बाप रे ।" अमृतम् सहम गयी, बोली'''"मुझे डर लगता है ।"

"अमृतम् । मेरी बात का आदर करती हो न ?"

"हां ।"

"तो बस विश्वास करो मैं कोई गलत या अपराध की बात नहीं करता ।" वह पूरा भाषण देना चाहता था पर उसे शब्द नहीं मिले । अमृतम् से बात करना तो उसके लिए और भी मुश्किल हो गया । स्त्रियों से बात कर सकने के लिए आवश्यक मनोबल अभी तक उसमें आ नहीं पाया था । बस चुपचाप खड़ा रह गया । बातों के बिना एक दूसरे को पहचान लेने की निस्तब्धता छा गयी थी वातावरण में । मौन की भाषा—एक अनुभव था—जो उसे अमृतम् के और निकट ले गया । प्रकृति की पुकार के फलस्वरूप पंचेंद्रियों के बन उठने की एक मूक संवेदना भरा विचित्र अनुभव था ।

इतने में जगन्नाथम् कमीज और बटन लेकर पहुंचा और अमृतम् से उसने कमीज टांकने को कहा । अमृतम् बचने की कोशिश करने लगी तो दयानिधि ने संकेत से मना किया । अमृतम् ने उन्हें ले लिया और टांकने लगी । नरसम्मा और सुशीला भी आ पहुंचीं । किसी को कुछ पता न चला ।

सबने मिलकर भोजन किया । तब तक बाहर बैलगाड़ियां आकर खड़ी हो गयीं । सुशीला जार्जेट की साड़ी के चुनर अमृतम् से ठीक करवाने आई ।

अमृतम् को खादी की लाल फूलों वाली साड़ी के पल्लू ठीक न बैठने की शिकायत थी। सामने दयानिधि को देखकर पूछ ही डाला—"यह साड़ी कैसी लग रही है?"

दयानिधि जानता था कि यह प्रश्न बेतुका है। उसने समाधान प्रश्न में ही दिया—"यही मतलब है न कि इस साड़ी में तुम कैसी लगोगी?"

"चलो मत बताओ।" अमृतम् तुनक कर बोली और सामने रखे शीशे में विविध भेष में अपनी छवि आगे पीछे से देखने लगी। मुड़कर पीठ देखी तो चोली और साड़ी के बीच शरीर झांक रहा था। "उफ् कितना कस गयी है चोली—जाकर उतार आती हूं।" ऊंचे स्वर में स्वगत भाषण कर चोली उतारने भीतर चली गयी।

जगन्नाथम् बायें पैर का जूता पहनने के लिए उठना गिरता कसरत कर रहा था। बाहर भीतर जा रही नागमणि को रोककर जूते की करामात देखने की सिफारिश कर रहा था। नागमणि के जूड़े में लगी बासी फूलों की सुगंध वातावरण में फैल गयी। जगन्नाथम् ने उसके कंधे का सहारा लेकर दाहिनी एड़ी को चौखट पर रोकते हुए जैसे तैसे जूता पहना। नागमणि के सफेद रेशमी ब्लाऊज की पीठ पर चौखट पर लगी हल्दी के निशान छप गये थे।

"माफ कीजिए, नदिया में स्नान करेंगी तो ये निशान धुल जायेंगे।" जगन्नाथम् ने कहा।

नागमणि खीझती अपने घर वापस आई।

सुशीला ने यह निश्चय करके कि जार्जेट की साड़ी उसके शरीर पर टिक नहीं रही है उसे बदल डाला और कंजीवरम की रेशमी साड़ी पहन कर आईने में अपने आप को परखने लगी।

"साड़ी अपनी है या किराये की?" कुर्सी पर बैठकर उसी आईने में अपने जूतों को देखते हुए जगन्नाथम् ने लगे हाथों एक चुटकी ली।

"मार खाओगे। पीठ खुजला रही है शायद!" सुशीला मारने दौड़ी तो जगन्नाथम् बचाव करता हुआ भागा और सीधे जाकर भीतर आती हुई नागमणि से टकराया। फौरन उसने क्षमा भी मांग ली। पर इस बार नागमणि के वक्ष पर हल्दी के निशान लग गये थे। नागमणि चिढ़कर गयी। "जाने सुबह किस मनहूस की शकल देखी है।" बड़बड़ाती हुई दुबारा साड़ी बदलने अपने घर की ओर मुड़ी।

दयानिधि ने कांछ डालकर धोती पहनी, ऊपर कुर्ता पहना और अंगवस्त्र कंधे पर डाल कर गाड़ी के पास जा खड़ा हुआ। जगन्नाथम् श्रीकृष्ण तुला-भारम् नाटक के एक गीत की कड़ी दुहराता हुआ भीतर बाहर चहल कदमी कर रहा था। झेरे पार वाली लाल साड़ी पर चौड़े पाट वाली पीली चोली पहन कर अमृतम् बाहर निकली। ढीले जूड़े में लाल मंदार पुष्प खोंसे हुए थे। दयानिधि उसे देख मन ही मन मुस्कराया।

"क्यों हंस रहे हो जीजाजी। भोंगी लग रही हूं क्या? उंह जाने भी दो अब क्या करूं। इससे अच्छी साड़ियां मेरे पास नहीं हैं।"

"बहुत सुंदर है साड़ी। तुम तो साड़ी के रंगों के चुनाव में विशेषज्ञ हो।"

"चिढ़ा लो जी भर।"

इतने में नरसम्मा मौसी बाहर आई और चिल्लाने लगी—"अरे, अभी तक निकले नहीं।" उसके पीछे घड़ियाल के चर्म से बने सैंडिल पहने सुशीला भी आ गयी।

गीत की कड़ी गुनगुनाता जगन्नाथम् सबको गाड़ी पर चढ़ने का आदेश दे रहा था। बाहर सड़क पर खड़े चरवाहे कांधे पर डंडा रख कर उस पर दोनों हाथ टिकाकर तमाशा देखते खड़े थे।

"आज जगन्नाथम् क्यों इतना उछल रहा है। नारय्या नहीं है क्या!" नरसम्मा मौसी हंसने लगी।

"वे दिन लद गये मौसी। सूचनार्थ निवेदन है कि मेरे क्रोध का सामना करने का साहस न होने का कारण नारय्या स्वयं ही चला गया।"

नौकर ने कुछ सामान गाड़ी पर रखा। तब तक नागमणि भी साड़ी बदल कर आ गयी। सबसे पहले वही चढ़ी। चढ़ते ही साड़ी हिली और बैल दस गज आगे घिसट गये।

अमृतम् ने कहा कि वह नागमणि के साथ गाड़ी में बैठेगी।

"अपने राम और जीजाजी एक गाड़ी में बाकी दूसरी गाड़ी में लदेंगे।" जगन्नाथम् ने फैसला दिया।

दयानिधि ने कहा, "तुम सब गाड़ी में आओ मैं पैदल साथ दूंगा।"

"तब तो अपने राम भी पैदल ही जायेंगे।" जगन्नाथम् ने बात पूरी की।

चरवाहों के काले चेहरों में सफेद दांत चमक रहे थे। कुछ गड़बड़, धक्का-

मुक्की, उतरने चढ़ने, बैलों को जुए में बांधने, फिर लोगों के उतरने, दुबारा चढ़ने, इतना सब कुछ होने के बाद गाड़ियां चलीं। सवारों का अंतिम सिल-सिला इस प्रकार रहा। नागमणि निधि और जगन्नाथम् एक गाड़ी में, नौकर सहित बाकी लोग दूसरी गाड़ी में बैठे। गाड़ियां गली के नुक्कड़ पर मुड़ीं और दौड़ती हुई लाक पर जाकर रुक गयीं।

दो डोंगियों को बांधकर एक बनाया गया, चप्पे को गरदय्या ने संभाला। एक डोंगी में डेरे का सामान, चादरें, खाने पीने का सामान के साथ जगन्नाथम् बैठा। अमृतम् भी उसी में बैठना चाहती थी। सुशीला और नागमणि पीछे वाली डोंगी में बैठे।

नली से नहर का पानी छूटा और किनारों से लगकर डोंगियां लहराती जा रही थीं। काली छायाओं को बिखेरने लायक तीक्ष्णता रहित शीतकाल का सूर्य पानी में हीरे जैसा चमक रहा था। दिशाहीन हवा पानी को आगे पीछे ठेल रही थी। हवा के कारण चेहरे को ढक रहे आंचल को लेकर अमृतम् ने सिर पर ओढ़ा और उसके एक सिरे को चोली की बाहों में खोंस दिया। नागमणि के उड़ते हुए आंचल को सुशीला ने दांतों में दबाया। जग-न्नाथम् के बाल बिखर कर सिर पर सीधे खड़े हो गये थे। दीदी से उसने कंघी मांगी तो अमृतम् ने उसे झिड़क दिया। फिर थोड़ी देर बाद उसने नहर का पानी हाथ में लेकर सिर पर लगाया और हाथों से बाल संवारे। पानी में पड़ी छायाओं को देखता दयानिधि बाहर एक ओर चल रहा था। नौकर नहर के दूसरी ओर आगे वाली डोंगी की रस्सी को खींचता चल रहा था। नदी के घुमाव पर रास्ते की दूरी सूचक पत्थर तक जाकर वह रुक गया। लाल कपड़ा सिर पर बांधे दोनों टांगों के बीच लंगोटी बांधे काला सा एक लड़का नारियल के पेड़ पर चढ़ा नारियल उतार रहा था। नीचे दूसरा एक आदमी कमर में तोलिया बांधे कच्चे नारियल छील रहा था। दूसरे पेड़ के पास एक ऊंचे पत्थर पर बैठकर कोमली कच्चे नारियल की मलाई खा रही थी। पेड़ पर चढ़कर नारियल तोड़ने वाले को नौकर का डांटना दयानिधि ने सुना—"क्यों रे तुझे भी अक्ल नहीं, नासमझ लड़का। सरकार के पेड़ों पर से नारियल उतार रहा है तो उसे रोकने के बजाय खुद भी उसका साथ दे रहा है। जुर्माना लगेगा। तुझ पर समझा?"

"यह पेड़ हमारा है, समझे ? रंगय्या उतरना नहीं डरने की जरूरत नहीं, देखती हूं कौन रोकता है ।" कहती हुई कोमली सामने आ गयी । दो तीन किस्म के वृक्षों के तने आपस में गुंथ जाने की भांति चोटी गुंथी हुई थी और जो बाल कानों पर छूट गये थे उससे कान ढक गये थे । किनारी रहित हल्के रंग की साड़ी टांगों से चिपकी हुई थी । सीधे हाथ में एक ही हरी चूड़ी पड़ी थी । और कर्णफूल में कहीं कहीं नकली नग झड़ चुके थे । लाल धारीवाली काली चोली में कोमली अपने इस रईस वेष में नकली गुस्सा उतारने का प्रयास कर रही थी ।

काला सा लड़का पेड़ से नीचे उतर कर बोला—"हुजूर मैं चोर नहीं हूं, इसने चढ़ने को कहा सो चढ़ गया ।"

"जा ले भाग ।" नौकर ने डांटा, लड़का भाग गया ।

"ऐ । तू कौन है यह हमारा पेड़ है । हम तोड़ेंगे । तेरा क्या जाता है ?"

"तू यहां भी सर पर सवार हो गयी ?" नौकर कोमली को डांट ही रहा था कि निधि वहां पहुंचा ।

"अरे । आप भी आ गये !" कोमली सकपका गयी । क्षण भर में फिर बोली —"यह हमारा पेड़ है —देखो वह दूर वही हमारा खेत है । अम्मा भी हैं और ये तीनों पेड़ सरकार के हैं ।"

बात ठीक थी । सरकारी पेड़ों पर निशान बने थे और कामाक्षी वाले पेड़ पर ऐसा कोई नंबर नहीं था । सभी पास होने के कारण आये दिन खलासी अपना अधिकार जताते रहते । यह उनकी आदत हो गयी थी ।

"अरे वाह । बहुत से लोग हैं—रंगय्या तू घर जा और अम्मा से कह देना थोड़ी देर बाद आऊंगी ।" रंगय्या ने तौलिया सिर पर लपेटा और दो नारियल केशों से बांधकर कंधे पर लटका कर घर की ओर निकला ।

"जल्दी आ जइयो—" दूर से उसने इशारा किया । रंगय्या जाने को था ?—कोमली की विचित्र दुनिया के विचित्र प्राणियों में से एक होगा ।

डोंगी में फुसफुसाहट होने लगी । "मुझे जेल पसंद नहीं," कह कर जगन्नाथम् डोंगी को किनारे ले आया और उसमें से कूदकर बाहर आ गया ।

"उफ् । मुझसे भी बैठा नहीं जाता ।" कहती हुई सुशीला भी आ गयी । और उसके बाद एक-एक करके सब बाहर आ गये । मल्लाह डोंगी में आ गिरी

मछली को नहर में डालने की कोशिश करने लगा।

"अरे। मछली पकड़ना भी नहीं आता—वाह।" कहती हुई कोमली मल्लाह की हंसी उड़ाने लगी। खुद डोंगी पर चढ़ गयी और मछली को पकड़ने लगी। जरा सी देर में एक बड़ी सी मछली पकड़े डोंगी से कूद कर बाहर आ गयी।

"छी।" सुशीला घिनाने लगी।

"बाप रे। क्या है।" अमृतम् चिल्लाई।

जगन्नाथम् कुछ दूर खड़ा था।

"लो नागू तुम पकड़ो।" कोमली ने नागमणि के हाथ मछली पकड़ाई।

"दूर फेंक दे मुझे नहीं चाहिये। नागू क्यों कहती है नागमणि कह कर पूरा नाम नहीं पुकार सकती तू।" नागमणि चिढ़कर बोली।

दयानिधि की समझ में नहीं आया कि किसका कैसे परिचय कराए। खंखार कर बोला—"देखो। यह है अमृतम्।"

"ओ—अमुत्तेर जी लीजिये मछली अपने हाथ में लेकर देखिये।"

सुशीला हंसने लगी।

"वह सुशीला है—मेरी मामी की—"

"मैं जानती हूं।"

"और ये है—।"

"नागू, इसे भी में जानती हूं।"

"मस्ती चढ़ी हुई है पूरा नाम नहीं बोल सकती?" नागमणि रोष में भर कर कोमली पर टूट पड़ी।

"पास आई तो देख अच्छा न होगा मछली ऊपर फेंक दूंगी।" कोमली ने डराया।

"फेंक दे उसे—छिः तू अपनी गंदी आदतों से बाज नहीं आयेगी।" नागमणि ने उसे फिर धिक्कारा।

"तुम्हें ये सब जानते हैं—अलबत्ता वह देखो वह लड़का।"

"जीजाजी। क्या मैं अब भी आपको लड़का ही लग रहा हूं।" जगन्नाथम् ने पूछा।

"अच्छा बाबा लड़का न सही एक लड़के जैसा आदमी।"

"जग्गू है इसका नाम।" सुशीला ने बात पूरी की।

सब हंस पड़े और फिर एक-एक करके डोंगी पर चढ़ गये। अमृतम् ने कोमली को अपने पास बिठाया। नागमणि और सुशीला पहले की तरह अलग-अलग बैठे रहे।

"आप नहीं चढ़ेंगे?" उसने निधि से पूछा।

"नहीं।" निधि ने सिर हिलाया।

"मैं भी पैदल चलूंगी। आइये अमुत्तेर जी—बड़े आये हैं चलने वाले जवांमर्द।"

उनके उतरने के पूर्व ही मल्लाह ने डांट चला दी। जगन्नाथम् के पैर में गोखरू चुभ गये थे उन्हें निकालकर वह अपने जूतों की मांग करता हुआ डोंगी में कूदने को हुआ। कोमली ने थोड़ा सा पानी चुल्लू में लेकर उस पर दे मारा। डोंगियां पांच फर्लांग तक चलीं और फिर मोड़ पर जाकर रुक गयीं। सब नीचे उतरे।

खेतों में पतली सी पगडंडी थी और उन्हें पार करते ही हरी घास उगा मैदान था। एक फुट ऊंची ऊंची झाड़ियां हवा के कारण सिर हिलाकर स्वागत कर रही थीं। मैदान के बीचोंबीच सर्वी के पेड़ बाल फैलाये खड़े एक दूसरे से बातें करते से दीख रहे थे। उनसे लग कर आम के पेड़ों का झुंड सूरज की रश्मियों को रोकते घने फैले खड़े थे। रहस्य की निश्चलता को वे प्रमाणित कर रहे थे। उनकी शाखायें बीच के सरोवर पर झूम रही थीं। पेड़ों की नरम और ठंडी छाया में पड़ाव डाला गया। तपोभ्रष्ट तपस्वी की भांति एक मेंढक झट से नहर में कूद पड़ा। नीचे पड़ी आम की शाख ने किसी के पैरों के नीचे हल्की सी सिसकी ली वृक्ष पर पत्ते झूमे। पश्चिमी पवन पत्तों को एकत्रित कर नमस्कार के रूप में उन्हें बरसाने लगी। तोते लाज से भर कर मेड़ों पर मुंह छुपाने लगे। सीटी बजाने वाला पक्षी अलसाने लगा—प्रकृति चेतना से भर कर जंगल में मंगल का तमाशा देखने लगी।

कोमली नहर के किनारे बड़े ही विचित्र ढंग से पैर समेटे बैठी थी। आहिस्ते-आहिस्ते आकृति को पा रही लहर ने कोमली के चेहरे की छाया को एक किनारे से दूसरे किनारे तक व्याप्त किया। पानी में प्रतिमा की भांति—वह सूखा चेहरा—ठंडे पानी की गहराई में कुनकुनी गरमाहट छिपाये वह ठंडा चेहरा हिल रहा था।

पेडों के नीचे दरियां बिछाकर नागमणि ने स्टोव जलाया। कोमली और निधि सुशीला द्वारा देखे जाने की कल्पना न कर एक दूसरे को देख रहे थे। दोनों की आंख बचाकर सुशीला उन्हें देख रही थी। अमृतम् इन तीनों की हरकतें देख रही थी जिसका इन तीनों को पता नहीं था। नागमणि भी बारी-बारी से हर एक को देख रही थी। उसने देखा कि सुशीला निधि और कोमली को देख कर रह-रह कर एक शून्य दृष्टि से पास पड़े पत्थरों में अपने को खो रही है। कोमली को मालूम न था कि उसे इतनी जोड़ी आंखें घूर रही हैं। नागमणि ने सोचा कि अगर कोमली को अपने को देखे जाने की बात का बोध हो तो जाने कैसी प्रतिक्रिया करेगी। इस बात की कल्पना कर वह हंस पड़ी। ऊंचाई पर से नहर में गिरती कोई लहर यात्रा के प्रारंभ में ही हंस पड़ी।

"यही पिकनिक है ?"

"सुशीला साड़ी की छोर मुंह में दबाकर हंसी।"

"क्या कोई नहायेगा ?"

"तुम तैरना जानती हो ?"

"हां-हां क्यों नहीं ?"

"गोदावरी नदी को तैर कर पार करने वाले महाशय एक बार मेरे सह-यात्री रहे थे सो उनका थोड़ा प्रभाव मुझ में भी चिपक गया। ओह, मैं भी स्नान के लिए तैयार हूं।" जगन्नाथम् तपाक् से बोला।

"अब तक कहां था रे ?"

"नौकर भिखारी राम के साथ सैर कर रहा था।"

"हाथों में क्या है ?"

जगन्नाथम् हाथ पीछे बांधे कोमली के पास आया।

"कुछ देर पहले मुझ पर पानी डाल कर सबके बीच मेरा अपमान करने वाली ललना आप ही तो नहीं ? "जीजाजी आज तो कविता मुंह से फूटती जा रही है। रोकना मुश्किल हो रहा है।"

"क्या है रे लड़के ?" कहती हुई कोमली जरा पीछे हटी और भौंहें सिकोड़ कर सूर्य रश्मि न सह पाने वाले पत्ते की भांति आंखें बंद कर लीं।

"मुझ पर जल छिड़कने वाली अबला तुम्हीं हो न ?" कहते हुए जगन्नाथम् ने हाथ की एक डाली को कोमली की बांहों से छुआया। कोमली खुजाने लगी।

"क्या है वह डाली ? ला तो इधर।" अमृतम् चिल्लाई। कोमली की खुजलाहट बढ़ती गयी, जगन्नाथम् की ओर रोष से देखती हुई, जलन को मन ही मन रोकती हुई जगन्नाथम् के हाथ से शराब छीननी चाही। जगन्नाथम् दौड़ा उसके पीछे कोमली भी दौड़ी। दयानिधि चुपचाप चलने लगा। अब तक जाने किन किन शंकाओं से बोझिल हो मूक बना वातावरण लगा अचानक गला संवार कर बोलने लगा है। दूसरे सभी अब तक जो एक विचित्र कसाव अनुभव कर रहे थे सहज बन कर बात करने लगे थे। पानी रहित नाला फैला खड़ा था।

बिखरे बाल के बीच फंस कर मांग में से अपना रास्ता बनाते हुए चले जा रहे जुगनू की भांति कोमली झाड़ियों के बीच जगन्नाथम् का पीछा करती हुई दौड़ रही थी। दूर सर्वी के पेड़ के पीछे दयानिधि यह दृश्य देखता खड़ा था। कोमली जगन्नाथम् का हाथ पकड़ कर खींचने लगी। कोमली ने उसके हाथ की शराब छीन ली और उसे अपने पास खींचकर शराब उसके मुंह से छुआयी। जगन्नाथम् घास में छुप गया। उसने फिर कोमली के हाथ से शराब छीन ली और उसका पीछा करने लगा। हरी साड़ी में कोमली ऐसी लग रही थी कि मानो घास के तिनके ने अपने में प्राण भर लिया है और बढ़कर उसने आकर कोमली का आकार पा लिया है। काले मेघों में से चमक उठी बिजली की भांति कोमली सर्वी के पेड़ों में खोकर समस्त प्रकृति को अपने में सहेज कर प्रकट हो रही थी। आगे जाकर घनी हरीतिमा में घुल कर ओझल हो गयी, तो लगा कि नहर के किनारे खड़ी झाड़ियां, वृक्ष और पक्षी सभी उसी ओर बढ़ते से हिल रहे हैं। आकाश मूक हंसी हंस दिया और सूरज का मुख उसने हथेली जितनी बदली से ढांप दिया। दूर क्षितिज में कोमली ने नीलाकाश और हरित प्रकृति दोनों को अपने हाथ पकड़ाये।

झाड़ियों के बीच उछलती कूदती कोमली का व्यक्तित्व धरती और आकाश के स्नेह सम्मिलन को चरितार्थ कर रहा था। हरी घास उसका मायका था तो ससुराल था आकाश। पक्षी व फूल उसकी संतति थे। समाज द्वारा स्त्री के लिए निर्धारित चाहरदीवारी के भीतर रह कर भूठी थालियां मांजती, रोटी सेंकती रहने वाली स्त्री नहीं थी। कुछ व्यक्तित्व कुछ विशेष वातावरण के लिए निर्मित होते हैं। जिसके बीच उन व्यक्तियों को पूर्णता प्राप्त होती है।

स्वच्छंद प्राणियों के व्यक्तित्व को निखारने के लिए नैसर्गिक सौंदर्य साधन बनता है। इस वातावरण से उन्हें अलग करने पर जल से निकाली गयी मछली बन जाते हैं। वर्षा ऋतु में सभी वृक्षों ने जो पानी अपने में सोख लिया था आज वे कोमली को अपनी गोद में बिठाकर उससे स्नान करा रहे थे। हवा निर्लज्ज जंगली टेसुओं को जबर्दस्ती कोमली के बालों में खोंस रही थी। वर्षा के कारण वातावरण की गर्मी जो भूमि में बेहोश होकर छिपी थी अब सुगंध परिमल में प्रकट होकर कोमली के शरीर पर लेपन कर रही थी। लाल फूलों के बांधे घास की झाड़ियां धूप में सुखाई गयी हरी रेशमी साड़ी की भांति हवा की लय के साथ झूमती थिरकती कोमली परिवेष्ठित कर रही थी। कोमली भूख प्यास रहित निरीह आशा की दारुणता से अपरिचित देवत्व का अंश थी और थी यौवन साम्राज्य की एकछत्र महारानी।

अमृतम् का व्यक्तित्व दूर अति दूर हंपी के खंडहरों—भग्नावशेषों में छिपा रहने वाला व्यक्तित्व था। मग्न प्रतिमायें, एकाकी बचे खड़े स्तंभ—संवेदनशील प्रेम की प्रतीक्षा में पत्थर बन गयी राजकुमारी की मूर्तियां—सभी कुछ खंडर बने—कभी-कभी आधी रात को पदचाप और सिसकियां सुनते ही मानो जी उठने का आभास देने वाली संवेदनशील वातावरण के बीच बैठकर विषाद की हंसी हंसती, वह, अपने बीते अनुभव वैभव की स्मृतियों के भार से रो रोकर और रोने की शक्ति चुक जाने पर आसुओं के दुख में ढलकर बूंद-बूंद आंसुओं में रिस कर, आज नदी बनकर बहने लगी है। ओर वह दुःख नदियों का रूप लेकर वह पूरे देश को डुबो रहा है—नहीं, उसे रोना नहीं चाहिए—इसीलिए वह विषाद भरी हंसी हंस रही थी। आज सौंदर्य अपनी यात्रा समाप्त कर उसे शिला में परिर्वातित कर रहा था। किसी भी प्रकार पत्थर को आहों से व्यथित कर देने की कामना लिए अमृतम् आज स्वप्न में बहाये आंसुओं की भांति बहती जा रही थी।

जगन्नाथम् से बचाव करती दयानिधि के निकट जाकर उसके शरीर से पत्ते छुआ रही थी कोमली। वह अब इधर से उधर उछलती पूरी प्रकृति में फैलती जा रही थी। निधि भी कोमली का पीछा करने लगा। एक कोई छिपी शक्ति उन दोनों को अनजाने ही खींचकर ले जा रही थी। गिलहरी का एक जोड़ा यह तमाशा देखते उनका पीछा कर रहा था। वहां छोटा सा तालाब था। घास

मस्ती से पानी की ओर झुकी जा रही थी। धूल जमे धुंधले दर्पण की भांति सूरज का मुख पानी में स्थिर खड़ा था। तालाब में बसे जीवों में रंग-विरंगी गति पैदा कर रहा था। कोमली वहां फिसल गयी। उसके शरीर के अंग संतुलन खोकर गतिहीन हो गये। साड़ी के चुनटें खुल गयीं। एक छोर शरीर से चिपका रह कर दूसरा छोर घास में जाकर लिपट गया। निधि ने कोमली के दोनों हाथ पकड़े। हरी चूड़ी चटक गयी। गिलहरियां लाज से एक दूसरे से सिमट गयीं। मुंह बंद किये रहस्य को जान लेने जैसे आश्चर्य की मुद्रा में दोनों गिलहरियां एकटक देख रही थीं। उसने कोमली के हाथ से शराब छीन कर दूर फेंक दी और उसकी आंखों में ताका।

अपरिमित सहज सौंदर्य की किसी अदृश्य शक्ति ने उसे उत्तेजित कर शक्तिहीन बना डाला था। सामने की वस्तुएं नहीं दीख रही थीं। आंखें चौंधिया रही थीं। आंखें बंद कर मुंह को गोलाकार करते हुए…

"हिश—यह क्या।" कोमली ने कहा। नशे में भरी गिलहरी डाल पर से अचानक नीचे गिरी। अर्थरहित मूक वांछा उस पर हावी होती जा रही थी।

चूड़ी जहां चटखी थी वहां पर चुभकर खून निकल आया था। कोमली ने खून देखा और उठकर बैठ गयी और हाथ झटक कर खींच लिया। थकावट से हांफने लगी। पसीने की दो बूंदें मस्तक पर से फिसल कर बालों में उतर आईं। पसीना है या आनंदाश्रु यह जानने को उत्सुक गिलहरियां पास आकर बैंठ गयीं और कुछ सुनने की आशा से कान उधर दे दिये।

कई प्रश्न विधि की आंखों को व्यथित कर रहे थे। कोमली ने कहा—"खून निकल आया है।" उसने अपना रूमाल निकाल कर सुर्खी रहित थके और पतले खून की बूंद पोंछ डाली।

"हिश् ऐसे क्या देखते हो। मैया री! गिलहरी।" कहती उछल पड़ी। गिलहरी का जोड़ा उछल कर दूर भाग गया। उसने भी गिलहरियों की भांति ओंठ बंद कर लिए और अनायास ही निधि के कंधों का सहारा लेकर उठने का प्रयास करने लगी। निधि ने उसका हाथ पकड़ना चाहा पर तभी चोटी पीछे से खिलकर निधि के चेहरे से आ लगी। निधि को किसी कवि की पंक्ति याद हो आई—"तेरे मेरे बीच आ खड़ी, रजनी बन काली अलकें।"

"उं हूं, ये क्या करते हो।" लाज पीड़ित आश्चर्य भरे अंदाज से तर्जनी मुंह पर रख कर बोली। फिर सीटी बजा गिलहरियों को भगा दिया। "रात कुएं की जगत पर दीवा रखूंगी—बस रा—त को हां।" रात शब्द को खींचकर उच्चारण करती हुई कोमली ने आंखें मूंद लीं। गिलहरियां रहस्य पा जाने के अंदाज से भाग गयीं। कोमली के गिरने के कारण दबी घास उठने हिलने लगी। जलचर मुस्कराते हुए दूसरी ओर चले गये। निधि उसकी साड़ी में चिपके हुए पत्ते और तिनके अलग करने लगा। साड़ी के चुनरों के नीचे का सिरा उसके हाथों में आ गया तो कोमली उसके हाथ को झटक कर उठ खड़ी हुई पर साड़ी पैर में फंस जाने के कारण तालाब में जा गिरी। निधि ने उसका हाथ पकड़ कर बाहर खींचा। घने बालों को उसने पीछे समेटा। शरीर से चिपकी साड़ी का एक सिरा हवा में सुखाने लगी। आंचल खिसक जाने के कारण कंधों की गोलाई बड़ी ही विकृत रूप में उभर आई थी। हवा से सर्दी लग आई थी सो कोमली उकड़ू कांपती बैठ गयी।

"सरदी लग रही है जाकर कुछ ले आओ। हिश् ऐसे क्या देखते हो। मरद हो पेड़ के पास उधर चले जाओ।"

दयानिधि बगलें झांकने लगा। वह अपना उत्तरीय बाग में आम के पेड़ पर टांग आया था। निधि की धोती के सिरे से कोमली ने मुंह पोंछा। निधि ने रूमाल दिया। उसे कोमली ने सिर से बांध लिया। दयानिधि सोच रहा था जब कपड़े नहीं बने थे तो जाने लोग कैसे पोंछते थे—शायद पत्तों से पोंछते होंगे। वह केले के पत्तों को खोजने लगा।

"छोटे बाबू यहां पर हैं। सब जगह आपको ढूंढ आया। चलिये बड़े बाबू बुला रहे हैं—चलिये झटपट।" पीछे घूमकर देखा तो नारय्या खड़ा था।

"इतनी जल्दी कैसे लौट आये नारय्या ?"

"घोड़ा गाड़ी में। बड़े बाबू नहर के पास खड़े हैं। अरे तू चुड़ैल यहां क्या करने आई थी ?"

"मैंने बुलाया था।" निधि ने बताया।

"तेरा क्या जाता है। मैं अपने आप आई हूं अपने खेत पर। तू कौन होता है पूछने वाला ?" कोमली ने पूछा।

नारय्या ने अपनी हंसी रोककर सिर की पगड़ी खोली और कपड़ा कोमली

पर फेंका।

"छि:—बास आ रही है।" कोमली बुड़बुड़ाई।

"बस बस बंद कर अपने नखरे। उसे पोखर में धो ले और सुखाकर पहन ले। घर तो चल जरा तेरी अम्मा से कह कर--"

"पिताजी इतनी जल्दी क्यों बुला रहे हैं नारय्या ?"

"मैं क्या जानूं बाबू। चलो जल्दी नहीं तो मुझे डांटेंगे।"

सभी ने सामान सहेजा और वापसी की राह ली। सुशीला अकेली अलग चल रही थी।

अमृतम् के एक कंधे पर फ्लास्क और दूसरे कंधे पर तौलिया था, साथ नागमणि थी। फ्लास्क में से थोड़ी चाय गिलास में डालकर उसने निधि की ओर बढ़ायी और बोली—

"बस एक घूंट ले लो।"

"कहां गये थे ?"

"........."

"कोमली के साथ जल क्रीड़ा..." नागमणि बोली।

सुशीला ने चप्पल में फंसा कांटा निकाला और इनके साथ आ मिली। आते ही छूटी—"उस भंगिन के साथ ?"

"ऐसा नहीं कहते सुशीला। तुम चार शब्द अंग्रेजी के बोल लेती हो सो इससे क्या वह दूसरी भंगिन हो गयी ?" अमृतम् ने सुशीला से कहा।

"तू नहीं तो और कौन सराहेगा उस गंवार को। तुझे और तेरे पति को उस गांव में ढोर चमारों के बीच रहने की आदत हो गयी है इसलिए तेरी आंखों को सभी अप्सराएं लगती हैं।"

"न तो हमारा गांव सिर्फ चमारों का है और न ही हम उनके बीच में रहते हैं। हमारी बस्ती में अच्छे खासे ऊंचे कुल के साठ ब्राह्मण परिवार हैं पर तेरे जैसे हम उचकते नहीं।" अमृतम् ने गर्व से कहा।

"तू भी गंवार है—शहरियों से बात करने जितनी तमीज तुझ में कहां ?"

"सुन रहे हैं न जीजाजी—कैसी लगने वाली बात कर रही है। अब मैंने उसे क्या कह दिया जो इतना बुरा लग गया। इतना घमंड किसलिए ? पिता तहसीलदार हैं इसी लिए न। हां भई पति की आड़ में गौरव की गृहस्थी चलाने वाली मुझ जैसी औरतें तेरी तरह पैनी बातें कैसे कर सकती हैं ? हम तो दब

कर रहना ही जानते हैं ।

"एक जानवर जैसे पति को पा लिया है जैसे तैसे—।"

"तू तो उसे भी नहीं पा सकी है ।"

"उनकी क्या कमी है । दहेज की आस दिखाओ, हनुमान की पूंछ जितनी लबी कतार में लोग खड़े हो जायेंगे ।"

निधि ने बात काटी—"अब तुम लोग कोमली के लिए लड़ रही हो—कल दिन भर मुझे तंग करती रही कि कोमली को देखना चाहती हो सो मैंने उसे बुलाया । अब तुम उसके नाम से यह क्या कर रही हो ?"

"हम तो समझे थे कि कोमली कोई हूर की परी होगी या स्वर्ग से आई देवकन्या ।" सुशीला गुस्से में कह रही थी ।

"तिलोत्तमा, मेनका, रंभा, उर्वशी ।" नागमणि ने बात पूरी की ।

"तो तुममें से क्या किसी को भी कोमली पसंद नहीं आई ?"

"कोमली हमारे लिये परीक्षा का प्रश्न पत्र है क्या ?"

"मुझे तो बहुत पसंद आई जीजाजी ।" अमृतम् ने कहा ।

"ऐसा तो मैंने कुछ भी नहीं पूछा जो तुम्हारे लिये मुसीबत हो जाय ।"

"अब क्या और कुछ पूछने को बाकी रह गया है ?"

"रह भी गया हो तो बताने की जरूरत नहीं ।" निधि बोला ।

"म की आदतें कहां जायेंगी आखिर ? इसीलिए तो तुम्हें वही सबसे ज्यादा पसंद आई है ।" सुशीला ने ईर्ष्या में भर कर कहा ।

"सुशीला ।" निधि क्रोध से भर उठा ।

अमृतम् बोली—"ऐसी जली कटी बातें क्यों कहती हो सुशीला । बेचारी बुआ तो..."

दयानिधि की आंखों में पानी भर आया । इतना क्रोध हुआ कि फौरन जाकर सुशीला का गला घोंट दे । पर अपने पर नियंत्रण रख, सब कुछ पीकर उसने सिर झुका लिया । अकेला ही जल्दी से आगे बढ़ गया । सब चुपचाप नहर तक जा पहुंचे ।

गोविंदराव और दशरथरामय्या दोनों बैठे बातें कर रहे थे । अमृतम् को लक्ष्य कर दशरथरामय्या ने कहा—"तुम्हारी सास बीमार है । तुम्हें ले जाने के लिये कांताराव आया है । शाम की गाड़ी से ले जाने को कह रहा है । मैंने तो

सोचा था कि सब लोग दस पंद्रह दिन रहोगे।"

"अच्छा सास जी बीमार हैं, तब तो जाना ही होगा। आप भी हमारे गांव चलिए न फूफा जी।"

" हां हां, क्यों नहीं, जब नौकरी से अवकाश पाने पर वही तो काम करूंगा सबसे पहले। साल भर के लिये तुम्हारे घर डेरा डालूंगा।"

"चाहे दस साल रह लीजिये। हमारे लिये आप भारी नहीं होंगे।"

"मैंने तो सोचा था कि सुशीला के साथ तुम भी दस दिन रहोगे। तुम्हारा पति क्या अपनी मां की देख-भाल नहीं कर सकता।" गोविंदराव ने पूछा।

"उन बेचारे को फुर्सत कहां मिलती है दिन भर तो खेत में निकल जाता है।" अमृतम् गाड़ी पर चढ़ी और जगन्नाथम् को आवाज दी।

"वह बाद में जा सकता है।" निधि बोला।

"हम सबको रहने के लिये कहते हो जीजाजी। तुम तो आ सकते हो न। शहर वापस जाते वक्त हमारी बस्ती से होकर जाना। मैट्रिक हो जायेगा तो जगन्नाथम् को तुम्हारे पास पढ़ने के लिये भेज दूंगी।"

गोविंदराव ने कहा—"अमृतम् काफी चतुर है।" सुशीला, अमृतम्, जगन्नाथम्, गोविंदराव गाड़ी पर चढ़े। गाड़ी रवाना हुई। नागमणि, भिखारी और कोमली को पीछे डोंगी में बिठाकर ले जाने और कोमली को उसके घर पहुंचा देने का आदेश देकर.दयानिधि नहर के किनारे गाड़ी के साथ चला।

"क्यों इतनी जल्दी कैसे आ गये बापू। गोविंदराव कहां मिले आपको ?"

"बेटी और बीवी को लिवा ले जाने के लिए आया है। अच्छा तो अब अपने मन की बात बता सुशीला को तू पसंद करता है कि नहीं ?"

"यही बात पूछने के लिए आप दौरे से इतनी जल्दी वापस आ गये।" दयानिधि ने मन ही मन कहा और पूछा—"क्यों, बात क्या है ?"

"कुछ न कुछ तो निर्णय लेना ही होगा।"

"आपने कभी यह भी सोचा है कि सुशीला मुझसे शादी करने को तैयार है भी या नहीं ?"

"तुझे इसका संदेह क्यों हुआ ?"

"अभी कुछ ही देर पहले उसने एक ऐसी बात कह दी जिससे मुझे अपने प्रति उसकी भावना का पता चला है। मुझे लगता है हम दोनों में बिलकुल नहीं

पटेगी ।''

''क्या कहा था उसने ?''

''मैं फिर से वे बातें दोहराना नहीं चाहता । मुझे दुख होता है ।''

''उन्होंने नकार दिया है ।''

''चलो छुट्टी हुई ।''

''इसीलिए मैं जल्दी से वापस आ गया ।''

''मतलब ?''

''एक नये पुलिस इंसपेक्टर साहब इधर बदली होकर आये है । चार हजार तक देंगे । एक ही लड़की है और एक लड़का । कल तुम्हें लड़की देखने चलना होगा ।''

'' अब मेरी शादी की इतनी जल्दी क्या पड़ी है ?''

''तूने भी सोचा है कि अब तक तेरे लिए कोई रिश्ता क्यों नहीं आया ?''

''नहीं ।''

''तो कम से कम अब सोच कर देख । हमारे घर की बातें जानने वाला कोई अपनी बेटी नहीं देगा । अभी वह नये-नये आये हैं । उसके कानों में बातें पड़ने से पहले ही कुछ निश्चय हो जाय तो ठीक है वर्ना तेरी शादी नहीं होगी ।''

''निधि की आंखें डबडबा आयीं । बापू से छुपाकर आंसू पोंछे और बोला—''मेरी शादी का उससे क्या वास्ता ?''

''अरे । बेटी देने वाला कुल वंश की प्रतिष्ठा और गौरव भी तो देखता है । लोग कहेंगे कि लड़के की मां ऐसी थी वैसी थी तो···।''

''बस अब आगे मत कहिये बप्पा ! अब उन बातों का रहस्य कहीं खुल न जाय इस डर से मैं कितने दिन गृहस्थी चला सकूंगा । सब कुछ जानकर सिर्फ मुझे पसंद कर विवाह के लिए आने वाली लड़की के साथ ही मैं शादी करूंगा ।''

''ऐसे तो कोई भी लड़की न आगे बढ़ेगी न बढ़ी है आज तक ।''

''जब आयेगी तभी करूंगा ।''

''कोमली से···?''

''...............''

''बोलता क्यों नहीं ?''

"क्या बुराई है ?"

"मुझे जीने देगा कि नहीं ?"

निधि आंसू न रोक पाया। तौलिए से आंखें पोंछकर गाड़ी चढ़ गया। दशरथरामय्या भी चढ़ गये। गाड़ी दौड़ रही थी। सूरज—थके यात्री सा लाल चेहरा लिये धीमे-धीमे उतर रहा था। दूर नहर के मोड़ पर डोंगियां लहराती दीख रही थीं।

सब के सब घर पहुंचे। कांताराव अमृतम् के पास आया।

"जीजाजी—छुट्टी दो जा रही हूं। ये हैं हमारे वो—रहना चाहती थी पर सास जी बीमार हैं।"

"क्यों क्या बीमारी है ?"

"जुकाम हो गया है और खांसी भी।" कांताराव बोला। घने बाल और बीच की मांग काढ़े गोल चेहरा और मोटी सी गर्दन—कांताराव के होंठ मोटे और भद्दे लग रहे थे।

"हमारे साथ तुम भी चलो न। सास जी को तुम दवाई दोगे तो ज़रूर अच्छी हो जायेंगी।" अमृतम् ने कहा।

बातचीत का सिलसिला आगे न बढ़ पाया। कांताराव जल्दी मचा रहा था कि गाड़ी का समय हो गया है।

"शायद फूफाजी के साथ कुछ ज़रूरी बातें कर रहे थे। तो मैं जाऊं जीजाजी ?"

"अब बात तो तुम्हारी होगी।" सुशीला बोली।

"हमारी सुशीला नादान बच्ची है। कुछ नहीं जानती गुस्से के सिवा। अच्छा तो सुशीला जाऊं ? पगली। जरा जरा सी बात का बुरा नहीं मानते।" कहती हुई अमृतम् ने सुशीला को गले लगा लिया।

जगन्नाथम् भी आ गया। आते ही गाने लगा—"इस विरह जलधि में डूब डूबकर—" और फिर गाना रोककर बोला—"शादी के वक्त फिर आऊंगा। आपको छोड़ूंगा नहीं जीजाजी।"

"पगले, शादी किसकी है रे ?" अमृतम् ने पूछा।

"अपनी और किसकी ?" कह कर बाहर निकल गया।

"सुशीला अब जा रही हूं एक बार हंस दो न मेरी अच्छी रानी।"

सुशीला एक फीकी हंसी हंस दी।

"शाबास, अब अपना चेहरा एक बार शीशे में तो देखो। कितनी प्यारी लग रही है हंसी। है न जीजाजी ?"

सुशीला चली गयी। दयानिधि भी उठकर खड़ा हो गया। मैंने सपने में भी नहीं सोचा था कि तुम्हें इतनी जल्दी जाना पड़ेगा।

"क्या करूं। खैर, देश तो छोड़कर नहीं जा रही हूं। मुझे याद रखोगी न ?"

"तुम जा रही हो तो मेरा मन उदास होने लगा है।"

"वाह। तुम तो पुरुष हो। पढ़ना, लिखना, नौकरी बहुत सी बातों में तुम्हारा जी लग जाना चाहिए। तुम्हें उदासी क्यों भला सुनूं तो मैं भी ?"

"सब चले जायेंगे तो घर काटने को दौड़ेगा। जाकर चिट्ठी तो लिखोगी न ?" अमृतम् ने आश्चर्य से उसको देखा।

"चिट्ठी की क्या जरूरत है ? बस यादें काफी हैं।"

"तुम्हारे रुपये···।"

"तुम्हारे पास से कहां जायेंगे ? शायद इसी के जरिये तुम मुझे याद रख सको। अच्छा दे देना--जब तुम्हारे पास हों।"

अमृतम्, जगन्नाथम् और कांताराव चले गये।

रात को आठ बजते ही सबने खाना खा लिया। गाड़ी तैयार खड़ी थी। नारय्या उसमें सामान रख रहा था। नरसम्मा ने एक दो बार निधि से उसके विवाह के बारे में बात उठाई। पर गोविंदराव ने प्रसंग के प्रति रुचि नहीं दिखाई। दशरथरामय्या ने कहा—"निधि की शादी अप्रैल में करने की सोच रहा हूं। नरसम्मा को जरा दो महीने पहले ही भेज देना।"

"एक दिन की शादी होगी। दूल्हे वालों को क्या काम होगा भला।" गोविंदराव ने पूछा।

"प्रैक्टिस कहां करेगा ?"

"पता नहीं। वैसे अभी पढ़ाई कहां पूरी हुई है ?"

ये बातें घड़ी की ओर देखकर की जा रही थीं। गोविंदराव और नरसम्मा गाड़ी पर चढ़े। गाड़ी चली।

दशरथरामय्या ने बिस्तर बिछाया और समाचार पढ़ने लगे। दस बज रहे

थे । नारय्या चटाई खोज रहा था । दयानिधि ने पिछवाड़े आकर चूल्हा जलाया और पानी गरम किया ।

गरम पानी से नहा कर महीन धोती और कुरता पहना । धोबी के घर की धुएं की बू आ रही थी उनमें से । मांग निकाली । शहर से साथ लाया इत्र लगाया । कंधे पर उत्तरीय लेकर बाहर निकल आया । नारय्या बरामदे में लेटा था । किवाड़ लगाकर निधि सड़क पर आ गया । पैरों के नीचे मिट्टी ठंड का अहसास दे रही थी । जोगप्प नायुडू के घर की बत्तियां बुझ चुकी थीं । गली में आया । दो बकरियां गली के कोने में खड़ी मिमिया रही थीं । चारों ओर सुनसान ठंडक फैली थी । सर्दी को न सह पाने के कारण बादल भी चांद से दूर होते जा रहे थे । एकाकी चांद ने अनंताकाश को निर्मल बना दिया । तारों ने चमकना बंद कर दिया ।

कामाक्षी के पिछवाड़े के किवाड़ पास लगे थे । किवाड़ की दरार में से उसने झांक कर देखा । कुएं की जगह पर एक मंद दीपक दिख रहा था । कोमली ने कहा था कि रात को दीया रखेगी इसका अर्थ है कि कोई नहीं है । जाने उसकी मां कहां होगी । कैसे बुलाये खंखारे या सीटी बजाये किवाड़ खटखटाये या फिर साहस के साथ किवाड़ खोलकर धड़ाधड़ भीतर चला जाय ? कामाक्षी हो तो ? उससे डरना काहे को । आखिर किससे डरता है कोमली से ? नहीं । अपने आप से तो नहीं डरता । 'मुझे जीने नहीं दोगे ?' समाज की परंपरा ने बापू के मुंह से यह प्रश्न पुछवाया । उसका न तो कोई जवाब है और न कोई उसे सुनवाता है । उसका विवाद करना सूर्योदय को रोक लेने की बात है । 'उस भंगिन के साथ ?' सौंदर्य को ईर्ष्या के मुख से मिला विशेषण है । 'उसके साथ तुम्हें क्या आनंद मिलेगा जीजाजी ?' आनंद की प्राप्ति से मनुष्य कितना डरता है । निधि भीतर चला गया ।

एक निस्तब्धता छाई थी । इधर-उधर वस्तुओं पर पड़ी चांदनी की सफेद चादर पड़ी थी । कुएं की जगत के पास एक खटिया का आधा हिस्सा बरामदे में और आधा बाहर आंगन में दिख रहा था । कोमली उस पर लेटी थी । खटिया की रस्सियां टूट कर लटक रही थीं । ऊपर चादर भी नहीं थी । सिरहाने तकिये की जगह खटिये की चौखट थी । खुले बाल उसके पीछे से खटिया से नीचे की ओर लटक रहे थे । दाहिना हाथ सिर के नीचे और बायां घुटनों

में छिपा था। साड़ी का आंचल खिसक कर हवा के कारण लहरा रहा था। शहतीरों से छन कर आती चांदनी रेशम के तारों-सी माथे पर फैली थी। उस दिन का सौंदर्य अपनी यात्रा समाप्त कर विश्राम ले रहा था।

परिमल के बोझिल दबाव से दबकर गिरी जंगली जूही पर्वत के शिखर से फिसल कर गिरे बर्फ की निर्मलता में विश्राम ले रही थी। निधि के भीतर पूंजीभूत ज्वाला की एक लपट निकली। अर्धरात्रि की बेला मानव प्राणि के देखे स्वप्नों की मूक बाधा सर्वत्र छा गयी।

खटिया के सिरहाने बैठकर दोनों हाथ दोनों लकड़ियों पर टिकाये पीछे से निधि ने कोमली के चेहरे में झांका। विश्वसंगीत की लय की भांति साथ दे रही श्वासों ने उसे घेर लिया। अचानक जी उठी स्वप्नकांता का शरीर और उस शरीर से उठ रही गर्माहट, समुद्र की तरंगों से उठते भाप की भांति उठ रही थी। ग्रीष्म की संध्या में वर्षा के थमने के बाद भूमि द्वारा छोड़ी उसासं जैसी थी वह उसकी गरमाहट। उसे हाथ टिकाने के लिए स्थाने नहीं मिल रहा था। ग्रीष्म ऋतु में ओले पड़ने के कारण सरोवर में मछलियों के हिलने जैसी उसकी हिलती होंठों पर उठे परिमल ने उसे उत्तेजित कर दिया। किसी एक शक्ति ने उसमें प्रविष्ट होकर उसे निश्चेष्ट बना दिया। एक कोई कांति की रेखा उसके अंधकार भरे हृदय में ज्योति की भांति चमक उठी। लगा कि कोमली ने उसके भीतर प्रवेश करके सारे दरवाजे बंद कर दिये हैं। जहां भी स्पर्श करो लगता था पंखुड़ियां टूट कर बिखर जायेंगी। उंगली से सहलाये तो भी पंखुरियों के भीतर जाने का डर था।

लगा कि उसे डर लगा। वह सौंदर्य से टकरा सकता था पर उत्तम सौंदर्य मात्र अनुभव नहीं है, उसका एक हो जाना मिल जाना वो कदापि नहीं है और नहीं आगे होता है बल्कि होते रहने की स्थिति है।

अपनी इस चेतना से वह संभला। यह एक ऐसी नूतन अनुभूति की स्थिति थी कि उसके शरीर में रह रहे विविध रूप पागल और विकृत लग रहे थे। उसे अनुभूति नहीं चाहिए। निधि ने झट उठकर लिफाफे में पांच नोट कोमली के सिरहाने रख दिये और उठकर बाहर चला आया।

तीन दिन

राजभूषणम् सिगरेट मुंह में दबाये दियासलाई के लिए जेब टटोलते हुए बोला······"क्या भाई, समझौते में शायद वर के बारातियों को सिगरेट जलाने के लिए दियासलाई देने का उल्लेख नहीं है।"

निधि के भाई रामानंद ने कहा—"आप जैसे भारतीय दर्शनशास्त्र के पंडितों का सिगरेट जलाना बेतुका मालूम होता है। देशी चुरुट पीते तो भी मेल बैठता।"

"शायद आप नहीं जानते कि चुरुट भारतीय वेदांत का प्रतीक नहीं है, बल्कि वृद्धावस्था का प्रतीक है और वृद्धावस्था वेदांती बनने का। यौवन और वेदांती में परस्पर संबंध सूत्र बिलकुल नहीं। हिंदू मुस्लिम की एकता का प्रतीक बीड़ी जैसे, भाई साहब, इन्हें जोड़ने का काम कुछ हद तक सिगरेट ही कर सकती है।" राजभूषण ने विषय को चमत्कारिक ढंग से सुलझाने का प्रयत्न किया। राजभूषण निधि के साथ शहर में दर्शनशास्त्र का विद्यार्थी था। लंबा कद, चौड़ी छाती और मजबूत पुट्ठे। लंबी सुडोल बाहों को दिखाने के लिए महीन कुर्ता पहने रहता। दुनिया को चुनौती देती आगे बढ़ आई उसकी ठोड़ी, किसी को चिढ़ाने के लिए तैयार से मुड़े हुए होंठ, तीक्ष्ण आंखें कुल मिलाकर राजभूषण दर्शन शास्त्र का विद्यार्थी नहीं लगता था।

राजा में महत्वपूर्ण समस्याओं का विशद रूप से परिशीलन करने की शक्ति

थी। ताश के पत्तों वाले अस्तित्व के तर्किक महलों को नींव सहित वह गिरा सकता था, इस विषय में वह बड़ा ही प्रतिभावान था। पर इन महलों को गिराकर उस नींव पर पुर्ननिर्माण करने की शक्ति अभी उसमें नहीं थी।

विचार स्वातंत्र्य में बाधा उत्पन्न होने के डर से विवाह न करके ब्रह्मचारी बने रहने का निर्णय कर चुका था राजा।

"भगवान के अस्तित्व को झूठा प्रमाणित किया जा सकता है पर पत्नी की बात झूठी नहीं प्रमाणित की जा सकती।"

प्रेम नामक भावना के संपूर्ण रूप से नष्ट होने के बाद ही मनुष्य को विवाह करने का अधिकार प्राप्त होता।

सभ्यता और समाज मनुष्य को अधोगति तक पहुंचाने वाली शक्तियों का समूल नाश न करके पुरुष को स्त्री के साथ बांधकर विवाह नामक जेल में पहुंचा देती है।

राजा के लिए ये सूक्तियां न केवल आचरण के लिए आदर्श थीं बल्कि वह इनका निष्ठावान प्रचारक भी था। राजा को इस रोग से मुक्त कराने के लिए कई उसके मित्र और अभिभावक-गण जी जान से प्रयत्न कर थे पर उन्हें अब तक इसमें सफलता नहीं मिली थी।

राजा उनकी बातें सुनकर हंस देता था और न ही राजा में जबर्दस्ती लोगों से अपनी बात मनवाने की हठ थी। राजा के विचारों ने उसके लिए कई शत्रु पैदा कर दिये थे पर निधि इन शत्रुओं के आक्रमण से राजा को बचाता आया था।

दार्शनशास्त्र के विद्यर्थी को सिगरेट जलाने का समर्थन न दिलाने की राजा की बात सुन कर दशरथरामय्या ने कहा—"जरा सी दियासलाई के लिए तो तुमने पूरा शतक सुना डाला।"

इतने में दयानिधि भी आ गया। उसके पीछे एक लड़के ने आधी दर्जन दियासलाइयां और दो सिगरेट के डिब्बे लाकर रख दिये।

राजा ने सिगरेट जलाते हुए कहा—"देखा आप लोगों ने, निधि ससुर जी का गौरव बचाये रखने के लिए खुद ही सिगरेट का इतंजाम कर रहा है।"

"उनका गौरव बचाये रखना तो आज साढ़े नौ बजे के बाद से प्रारंभ होगा तब तक मेरे जिम्मे कुछ भी नहीं। लग्न का समय आठ बजकर अड़तीस

मिनट है।" दयानिधि बोला। अपने होने वाले ससुर का परिहास अच्छा नहीं लगा। फेरे पड़ने तक दोनों तरफ के लोग युद्ध के लिए सन्नद्ध सैनिकों की भांति शत्रुता दिखाते हैं। अंत में लड़की वाले हार जाते हैं। राजकुमार राजकुमारी को ले जाता है। 'न रे बाबा हम आज आये इस राज्य से' की मुद्रा में दोनों एकांत में उड़ जाते हैं। दोनों पक्ष की सेनाएं एक दूसरे का मुंह देखकर संधि कर लेती हैं और वियोग के लिए खेद प्रकट करती रहती हैं।

इस विवाह वाले घर में आकर रहने वाले राजकुमार को जनवासे की स्त्रियां नये-नये बहाने लेकर देखने आती हैं। देखकर टीका टिप्पणी करती हैं। दूल्हे की स्थिति उस समय पशु शाला में आये नये पशु की होती है।

"अरे वह देखो कितने लंबे बाल हैं?"

"दुबला सा सींकिया जवान है।"

"जाने कितने में आया है?"

"सुना है बहुत दूर से लाया गया है।"

"तीन जून खाना और तीन हजार पर आ गया है।"

"बहुत सस्ते में आ गया।"

"वह देखो कुछ गुर्रा रहा है।"

पड़ोस की औरतों की फुसफुसहट का सारांश यही सब कुछ होता है।

"कितने बज गये?" वेंकटाद्रि पूछते हुए बारातियों के डेरे पर आये। दशरथरामय्या ने उनका स्वागत किया। वेंकटाद्रि वधू पक्ष के नेता थे। पुलिस सब इंसपेक्टरी करके पिछले ही वर्ष रिटायर हुए थे। कार्यविधि में अपने छोटे भाई के सर्कल इंसपेक्टर बन जाते देखकर उन्हें कुछ दु:ख अवश्य हुआ पर चूंकि अब रिटायर हो चुके थे छोटे भाई के ओहदे के प्रति गर्व जता रहे थे। उन्होंने अपने पवित्र हाथों से जाने कितने विवाह कार्य संपन्न कराये थे। उनके छह लड़के थे। लगातार छह लड़कों की शादी करवाने का सामंती बड़प्पन अब भी उनमें शेष था। छह लड़कों को अन्न देकर पुलिस सेना का सुदृढ़ बनाने के कारण ये सरकार से राव साहब की उपाधि की अपेक्षा करते थे और अपने इस हक के लिए कभी एकाध बार किसी से उन की टक्कर भी हो जाती थी। बेटी के अभाव को छोटे भाई की बेटी से उन्होंने पूरा किया। उन्हीं के पास वह पली अत: इस विवाह का पूरा भार उन्हीं पर आ पड़ा था।

दशरथरामय्या बोले—"मेरी घड़ी रूक गयी है।"

"अरे अभी से, नौ बज गये।" वेंकटाद्रि ने अपनी कलाई घड़ी निकालकर देखते हुए कहा। वहां उपस्थित लोग समझ गये की वेंकटाद्रि ऊंचा सुनते हैं।

राजा ने उनके पास जाकर कहा—"अपनी घड़ी को भी नौकरी से अवकाश दिलाइये।" बात सुनकर वेंकटाद्रि पोपले मुंह से बचे खुचे दातों की प्रदर्शनी कर विचित्र हंसी हंस दिये।

"मेरी घड़ी में आठ बजे हैं।" निधि के भाई बोले।

"जमाई की घड़ी क्या कहती है?"

"उनके पास जो घड़ी है वह मेरी है। शादी तक के लिए उधार मांग कर पहनी है उसने कि ससुर जी नयी घड़ी देंगे तो वापस दे दूंगा।" राजा बोला।

"बस। फरमाइश कोई बहुत बड़ी नहीं है।"

वेंकटाद्रि और उनके भाई माधवय्या में कई बातों में समानता थी। दोनों पुलिस विभाग के नौकर थे। दोनों ने खूब पैसा कमाया। चोरों, उचक्कों के लिए दोनों ही भाले बनकर खड़े रहे। कठिन परीक्षा के समय दोनों सरकार का हाथ बंटाकर उनके कृपा पात्र बने रहे। अंग्रेजी शासन के वे दो आधार स्तंभ की भांति रहे। पर दोनों में एक बहुत बड़ा अंतर था। बड़े भाई के छह बेटे थे तो छोटे भाई की तीनों बेटियां ही हुईं। दुल्हन माधवय्या की जेष्ठ पुत्री थी। गुंटूर कृष्णा जिलों में नौकरी करते रहने पर भी बेटे को गोदावरी जिले में देने की उनकी मनोकामना आज पूर्ण होने जा रही थी। विवाह की सारी तैयारियां काफी धूमधाम से की थीं।

इंदिरा घर पर पढ़ी थी। संगीत की ओर रुझान देखकर माधवय्या ने वीणा वादन की शिक्षा दिलाई। दामाद उन्हें हर तरह से पसंद आया। सुंदर था, पढ़ा लिखा था। सास की किचकिच नहीं थी, ननदें नहीं थीं, खाता पीता घर था। एक ही बात उन्हें जो पसंद नहीं आई वह यह थी कि लड़का डाक्टरी कर रहा था। बी. ए. पास कर लेता तो पुलिस विभाग में लगवा कर "राव साहब" बनवा देते। अब इस लालसा के पूरे होने का कोई रास्ता नहीं था। इस बात का रंज उन्होंने पत्नी के सामने प्रकट किया तो पत्नी सुभद्रम्मा ने झिड़की दी —"अरे। तो क्या हो गया। बिटिया को वर पसंद आ गया है बस उसकी ख्वाहिश पूरी कर दी। अपनी ख्वाहिश दूसरा दामाद ढूंढते

वक्त पूरी कर लेना।"

भाई के दामाद के बारे में जान लेने की लालसा बाहर न प्रकट कर चला रहे युक्तिपूर्ण बातों को निधि ने ताड़ लिया।

"फरमाइश। मैंने कहा बहुत बड़ी नहीं है। दामाद चाहे तो ससुर से अपनी डाक्टरी की प्रैक्टिस के लिये पूरा सामान भी ले सकता है। मेरा भाई कभी इन बातों में आगा-पीछा नहीं करता।" वेंकटाद्रि ने पत्थर फेंक कर गहराई को नापने का प्रयत्न किया।

"तो यूं कहिये कि चाभी आपकी बिटिया के पास रहेगी सो चिंता करने की जरूरत नहीं। क्यों ?" राजा ने पूछा।

"कहां प्रैक्टिस करोगे ?"

"आपकी क्या सलाह है ?" निधि ने पूछा।

"यह तो तुम दोनों ससुर और दामाद के बीच तय होने की बात है। मेरा क्या है ?" वेंकटाद्रि ने निस्पृह भाव से कहा।

"फिर भी आप बड़े तो हैं। आपके विचार जानने में कोई बुराई तो नहीं है।" राजा ने नाक में से धुआं छोड़ते हुए कहा।

इतने में माधवय्या के दूर के रिश्ते का भाई लक्ष्मय्या ने आकर निधि को सूचना दी कि उनके कोई रिश्तेदार आये हैं। लक्ष्मय्या की बात पूरी भी नहीं हुई थी कि जगन्नाथम्, अमृतम् की ननद विशालाक्षी और उसके पति भुजंगराव भीतर आ गये।

"बाधाओं से जूझ-जूझकर, पंखहीन पक्षी से बन हम आये तेरे द्वारे" जीजा जी पक्षी का विकृत रूप है—पंछी। देखा न, अपन तो भाषाविज्ञान के पंडित हो चले हैं जीजाजी। धन्योस्मि। अच्छा तनिक क्षीर काषाय मिश्रण का सेवन कर आते हैं तत्पश्चात् पुनः कुशल क्षेम होगा।" कहते हुए जगन्नाथम् विशालाक्षी और उसके पति को बाहर ले गया।

नये आगंतुक के लिए जो कमरा दिखाया गया वह दशरथरामय्या के डेरे से लगा था। लक्ष्मय्या ने जगन्नाथम् को बहुत रोका कि नाश्ता चाय वहीं मंगवा दिया जायेगा पर जगन्नाथम् को दुल्हन को एक आंख देख लेने की जल्दी थी।

"नाथ ! तुम्हारी दीदी क्यों नहीं आई ?" निधि ने पूछा।

"बस यूं ही ।"

"यूं का मतलब ? बच्चे। सत्य को खोज निकालना तुम्हारा कर्त्तव्य नहीं था ?" राजा ने प्रश्न किया ।

"उसके पति ने आने से मना कर दिया होगा ?"

"नहीं तो । जीजाजी रोज पूछ पूछ कर दीदी को तंग करते थे कि डाक्टर साहब की शादी कब है ?"

"उनकी सास की तबियत कैसी है ?"

"वह तो ईस्ट इंडिया कंपनी वालों के द्वारा स्थापित मील के पत्थर की भांति खड़ी हैं ।" विशालाक्षी ने कहा ।

"बेचारी का दिल आने को कह रहा था पर मजबूर हो गयी ।" भुजंगराव ने कहा ।

"कह रहीं थीं बारात लौटने तक वो शायद आ जाये ।" और फिर सड़क की ओर देखकर बोला—"बाहर दरवाजे पर कोई बौद्ध भिक्षु खड़े हैं ।"

वेंकटाद्रि ने बाहर जाकर तीन संन्यासियों को आदरपूर्वक नमस्कार किया और उन्हें भीतर लिवा लाये । बरामदे में कालीनें बिछवा कर उन पर बैठने का संकेत किया ।

स्तंभ से लगकर पालथी मारे, बड़ी शान से बैठे थे अपरुपानंदस्वामी । पूर्व जिले में 'मुक्ति साधना आश्रम' के संस्थापक थे । इधर इस बीच माधवय्या को परलोक की चिंता और आध्यात्मिक दृष्टि अधिक सताने लगी थी । हर शनिवार को वे आश्रम में जाते, वहां आध्यात्मिक चिंतन से गोष्ठी चलाने या फिर किसी स्वामी जी को घर पर न्योता देकर उनसे गीता रहस्य का सार जानते रहते । बेटी की शादी के अवसर पर उन्होंने गीता रहस्य प्रवचन का विशेष कार्यक्रम भी आयोजित किया था ताकि सत्संग से नवविवाहित दंपति, भोग दृष्टि के साथ कर्म और योग दृष्टि भी प्राप्त कर सकें ।

स्वामी जी ने पुलिस स्टेशन के निकट पर्णशाला में पड़ाव डाला था । दूल्हे को आशीर्वाद देने आये थे । घुटनों तक लंबी बाहें, विशाल ललाट, गंभीर आंखें, लंबी नाक, चोड़ा चेहरा, क्षौर कर्म के बाद गंजे सिर पर हरियाली झांक रही थी । हृष्ट-पुष्ट आकार पर बैंगनी रंग का खद्दर का कुर्त्ता धारण किये थे । हर मिनट कलाई में बंधी घड़ी देखते और 'ओम' मंत्र का उच्चारण कर

रहे थे। शिष्यगण संन्यासियों की सी जटायें बढ़ाकर, गेरुए कपड़े पहने भीगे बांस का रंग लिये थे। आश्रम में इनका 'जीव संजीव' नामकरण किया गया था।

विवाहोपरांत नव दंपति को उन्होंने 'मुक्ति साधना' आश्रम आने का निमंत्रण दिया। उन्होंने कहा पच्चीस मील दूर है, बस मोटर से आधे घंटे का समय पहुंचने में लगेगा। दयानिधि ने वादा किया कि विवाह के पश्चात् अवश्य आश्रम जायेगा।

राजा ने पूछा—"स्वामी जी। 'मुक्ति साधना' का संदर्शन क्या हम ब्रह्मचारियों के लिए निषिद्ध है ?"

"बिलकुल नहीं। क्या मैं ब्रह्मचारी नहीं।" स्वामी जी ने कहा।

राजा ने पुनः प्रश्न किया, "तनिक जिज्ञासा शांत कीजिये। मुक्ति साधना के अर्थ क्या हैं ?"

"आप क्या सोचते हैं ?"

"मुक्ति और मोक्ष को मैं अर्थरहित ध्वनिमात्र मानता हूं। किसी समय इन का उच्चारण करने वालों को एक अर्थ मिलता था पर अब वह नहीं रह गया है।" 'जीवा' यह सुनकर आश्चर्य से भर गया। नारय्या एक कदम आगे बढ़ा। वेंकटाद्रि ने नास की डिबिया बंद कर दी।

"मुक्ति और मोक्ष का अर्थ है परमात्मा में लीन हो जाना।" स्वामी जी ने संयत ढंग से कहा।

"अहा हा।" सभा में से एक आनंद भरा स्वर उभरा।

"छोटी नदियां जाकर समुद्र में मिल जाती हैं न ठीक वैसे ही।" संजीव ने विषय को फैलाया।

"परमात्मा एक व्यक्ति है, स्थिति है अथवा पदार्थ ?"

"परमात्मा— ब्राह्मन् ! उसमें एकाकार हो जाने वाला, दूसरे जन्म से रहित हो जाता है। जन्मराहित्य ही मुक्ति होता है।" स्वामी जी ने बताया।

"यानि पुनः इस संसार में जन्म न लेना है। हमें ऐसी मुक्ति नहीं चाहिए। सभी लोकों में मानव लोक अत्युत्तम है, मानव जन्म महोन्नत स्थिति है। सिनेमा, राजनीति, प्रकृति सौंदर्य, भौतिक आनंद की उपलब्धियां, हम इन्हें छोड़ नहीं सकते। हमें इनके अनुभव के लिए कई बार यहीं और इसी भूमि पर

जन्म लेने की इच्छा होती है सो हमें जन्मराहित्य की स्थिति नहीं चाहिए।" निधि के इशारे को भी अनदेखा कर राजा कहता चला जा रहा था।

"जन्मराहित्य की स्थिति पाना उतना आसान नहीं है। आध्यात्मिक साधना पूर्वजन्म के पुण्य फलों से ही हो पाती है। अपने कर्मफल के अनुसार मनुष्य देवत्व की अनुभूति प्राप्त करता है। और वही मनुष्य पुण्यात्मा है।"

"इसका अर्थ यह हुआ कि पुण्य में मुक्ति है।"

"अब आप थोड़ा-थोड़ा समझ पा रहे हैं।"

"परमात्मा में एकाकार हो जाना चूंकि कर्म फल पर आधारित होता है इसलिए मनुष्य को फिर साधना की क्या आवश्यकता? और इसी आवश्यकता के कारण प्रार्थना और पूजायें भी निरर्थक हो जाती हैं।" राजा ने कहा।

"आपकी बात मेरी समझ में नहीं आई।" वेंकटाद्रि ने कहा।

"यही कि अगर आपके भाग्य में लिखा हो कि आप परमात्मा से एकाकार प्राप्त कर लेंगे तो एक न एक दिन तादात्म्य होकर ही रहेंगे। ऐसी हालत में अगर मैं कितना भी चीखूं चिल्लाऊं कि मुझे वह मुक्ति नहीं चाहिए तो भी मुक्ति प्राप्त होकर रहेगी। यही तो कर्म सिद्धांत की उलझन है, वह मनुष्य के प्रयत्न को बिलकुल सह नहीं सकती और लोगों को कर्म और श्रम करने से रोककर उन्हें सुस्त और आलसी बना देती है। इसी से हमारे देश में संन्यासी बैरागियों जैसे बेकारों की संख्या बढ़ती जा रही है और इन बेकारों को आप गौरव देने की मांग करते हैं। मेरा वश चलता तो इन लोगों को जेल में ठूंस देता।"

राजा निधि के मना करते रहने का इशारा पाकर भी आगे कहता गया—"मैं तो कहता हूं कि हमारी जाति जो इतनी भ्रष्ट हो चुकी है, इसका एकमात्र कारण यह आध्यात्मिक चिंतन ही है। हार, बीमारी, अविद्या सभी का कारण उनका पूर्वजन्म का पाप मानकर जीवन के प्रति अनासक्ति दिखाते हुए अपने पेट के लिये भी श्रम से जी चुराने वाले इन आलसी लोगों ने समाज को दूषित करके मानव जाति को घृणा का पात्र बना डाला है।"

वेंकटाद्रि के चेहरे पर की मुस्कान से लग रहा था, राजा की बातों से मन ही मन खुश हो रहे हैं। उन्होंने कहा, "तो क्या तुम उन सभी को पागल कहते हो जिन्होंने निरंतर तप साधना से परमात्मा को प्राप्त किया था? रामदास,

कबीर, त्यागराज, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद…"

"बहुत से लोग हैं…"

"वही। मैं पूछता हूं, क्या वे सब पागल थे या बेवकूफ थे, और केवल आप साहब लोग ही होशियार और विद्वान हैं ?"

"साहब केवल हम अकेले नहीं, आप लोगों ने भी अंग्रेजी पढ़ी है और वही साहब बन कर नौकरी की है।"

"माफ करना भाई बूढ़ा खूसट हूं न।"

"इसमें कोई शक नहीं, पर आप भी मान लीजिये, मैंने कुछ बचकानी बात कह दी…खैर। अब विषय को लीजिये उन साहबों में भी कुछ ऐसे महानुभाव हैं जिनका आपने जिक्र किया है। उन्होंने दुनिया को देखा और सहम गये। यह गंदगी, बीमारी, अज्ञान, पशुत्व, बर्बरता, युद्ध, मौत इनको सह न पाये और न ही इनसे जूझ पाये। इस अभागी दुनिया में संतोष भरा जीवन व्यतीत करने के लिए उन्होंने एक दूसरे प्रकार का दृष्टिकोण एक प्रशांत दृष्टि अपनाई और जीते रहने की स्थिति से समझौता कर लिया। वही रास्ता उन्होंने दूसरों को भी बताया। मनुष्य आनंद की अपेक्षा करता है यह उसका जन्मजात स्वभाव है। कई तरह से कई स्त्रोतों से वह इस आनंद को प्राप्त करता है। कुछ पीते हैं, कुछ व्यभिचारी बनते हैं, कुछ कविता करते हैं, कुछ संगीत की साधना करते हैं। तो कुछ देशभक्ति में पड़कर सर्वस्व त्याग देते हैं। चित्र खींचते हैं चित्रकार। प्रकृति के आराधक, सौंदर्य के उपासक सभी अपनी परिस्थिति, स्वभाव और प्राप्त संस्कार के अनुसार आनंद की साधना करते हैं। आध्यात्मिक जीवन के द्वारा आनंद की प्राप्ति करते हैं आप जैसे कुछ महानुभाव। उनकी बातों में और आचरण में दूसरों के लिए अपकार की भावना, स्पर्धा या दूसरों के आनंद में बाधा डालना जैसी बातें नहीं होतीं। तभी उन्हें महानुभाव कह कर उनके रास्ते को ऊंचा और आदर्श माना जाता है। पर उदाहरण के लिए यह विषय स्पष्ट कर दूं सौंदर्य के उपासक को लीजिये वह एक सुंदर स्त्री को देखता है, उसको चाहता है। उसी स्त्री को दूसरा भी कोई चाहने वाला हो सकता है। स्त्री विवाहिता भी हो सकती है या फिर वही स्त्री अपने चाहने वालों को उत्तर न देकर तिरस्कार कर सकती है, इन सब बातों में दूसरों के लिए बाधक बनना या उन्हें दुःख देने जैसा

आचरण करता है मनुष्य । पर भगवान के प्रेम में ऐसी बाधायें उत्पन्न नहीं होतीं । प्रकृति में जंगल और जंगलों में कांटे और खूंख्वार पशु होते हैं । कविता में कठोर शब्द और कह पाने वाली छटपटाहट और व्यथा होती है और समझ में न आने वाली ध्वनियां होती हैं । सौंदर्य नष्ट हो जाता है, यौवन समाप्त होने लगता है । प्रजा सेवा की तत्परता के लिए काफी धन अधिकार और नाम की अपेक्षा होती है । चित्रकार को उसके चित्र देखने समझने योग्य उन दर्शकों की जरूरत होती है जिनके पास काफी समय हो । भगवान को पाने के लिए इन सबकी आवश्यकता नहीं । वैसे तो वह दीखता ही नहीं दिखता भी है तो सपने में या किसी भूत प्रेत की शक्ति के रूप में जलथल में, यहां, वहां, वह कहां नहीं है, कहीं नहीं है । सर्वत्रव्यापी है सर्वांतर्यामी निराकार है । जितनी भी पूजा करो वह थकता नहीं, न ही कुम्हलाता है, न कोई जवाब देता है । कोई अपने को चित्रकार कहे तो दुनिया उसे पूछती है कि तुम अपने चित्र दिखाकर प्रमाणित करो । कवि से कहता है कि तुम कविता सुनाओ तुम्हारा मूल्य आंका जायेगा । भगवान के भक्त को इन सबकी जरूरत नहीं । उसके काम को देखने जांचने वाला कोई नहीं । उस भगवान को दिखाने या प्रमाणित करने की मांग कोई कर ही नहीं सकता । होने न होने को प्रमाणित न कर सकने के कारण केस को दूसरी किसी तारीख को पेशी कराने की मांग न कर पाने वाले अयोग्य वकील की भांति वह भक्त बिलकुल बुद्धू है । किसी मेधावी ने कहा था कि अच्छे और ऊंचे व्यक्तियों द्वारा भगवान की सृष्टि करना ही मानवो के इस लोक में संपादित एक महान कार्य होगा ।

"समस्त प्राणियों का प्राण, मानव कोटि का मूल पुरुष है वह परमात्मा··· 'ओम्' देवोपासना प्रार्थना···।"

स्वामी जी कुछ कहने को तत्पर हुए तो राजा ने बीच में काटा···"इसका परिणाम ?"

"दु:ख, व्यथा, पाप सभी पर से परदा हटता है, ज्ञानोदय पाकर आत्म-विकास की ओर अग्रसर होता है और जीव परमात्मा में मिल जाता है । जीवन का चरम लक्ष्य भी तो यही है । इसके लिये गीतापरायण, योगसाधना, उपासना, प्रार्थना, यात्रा, यज्ञ ये सभी साधन हैं ।"

"मुझे तो लगता है आपके उपदेशों के कारण आपके बताये रास्तों से दुःख व्यथा, पाप आदि परदा हटने जैसा अनुभव हरेक के जीवन में संभव नहीं होता। यही प्रचार हिंदू धर्म और जाति के प्रति अन्याय कर रहा है और यही कहानियां या दृष्टिकोण, उत्तेजनायें, आदेश, अच्छे बुरे की बातें उस भगवान को घेरकर बांध लेने जैसा रास्ता प्रस्तुत करती हैं। भगवान की प्रार्थना एक रिश्वत देने जैसी होती है। मुझे पास कर दो···भारी दहेज के साथ एक सुंदर सी लड़की के साथ विवाह करा दो···एक बच्चे का प्रसाद दो···तो तुम्हें नारियल चढ़ाऊं, घी का देया चढ़ाऊं या तुम्हारे लिये सोने के गहने बनवा दूं ऐसी मनौतियों के रूप में प्रार्थना संपन्न होती हैं। इन सबको भगवान के चरणों में ही आश्रय मिलता है। और वह भगवान कहता है—"तुम मन चाहे पाप करो···डरो नहीं मैं हूं "बस जीवन के अंतिम क्षणों में जरा पश्चाताप कर लेना अपनी करनी का। सब कुछ ठीक हो जायगा।" यही दृष्टिकोण पापी को प्रोत्साहित करता है। सचमुच ऐसे भगवान का न होना अच्छा है। हमें नहीं चाहिए।"

"चलो ठीक है।" स्वामी जी ने सूत्र संभाला। "आप न भी चाहेंगे तो वही आपके पास दौड़ा चला आयेगा। यही तो उसकी विशेषता है।"

संजीव अपनी खुशी को न रोक पाया और बोल उठा—"ओम श्री नारायणय नमः"। समुद्र की तरंग पर बहते जा रहे तिनके की भांति राजभूषण उत्तेजित हो रहा था। दयानिधि ने देखा कि वह लक्ष्य से भटक रहा है। निधि ने पूछा—राजा तुम किस बात का खंडन कर रहे हो। भगवान के अस्तित्व का, धर्म का या अध्यात्म का। समझ में नहीं आ रहा है।"

"इन तीनों की गठरी का · तीनों एक ही चीज हैं।"

"नहीं। मैं तुम्हारी बात नहीं मानता। एक बार मैं बरहमपुर गया वहां श्री ज्ञानानंद स्वामी से मेरी भेंट हुई। उन्होंने बताया कि धर्म के वैमनस्य का मूल कारण, इन तीनों को एक समझ लेना है। आधुनिक विज्ञान शास्त्र इस भगवान का खंडन नहीं करता क्योंकि कोई भी विषय एक नैतिक मूल्य होकर रह जाता है। इन नैतिक मूल्यों को पहचानना ही आध्यात्म होता है। तीनों एक हो ही नहीं सकते।" निधि ने लक्ष्य किया था कि जब ज्ञानानंद स्वामी का नाम लिया था तो एक अदृश्य ईर्ष्या स्वामी जी के चेहरे पर झलक आई

थी। निधि ने प्रसंग को स्पष्ट किया—"सृष्टि से असंतृप्त होना ही नैतिक मूल्यों का प्रतिपादित होना है। इस असंतोष के कारणों का समूल नाश करने का मार्ग ही आध्यात्मिक साधना है। अधिक संख्या में लोग जब इस रास्ते को अपनाते हैं तो वह धर्म बन जाता है। धर्म द्वारा निदेशित अनेक मार्गों में मोक्ष साधना परमात्मा भी एक है···"।

"हम खुश हुए कि आपने ज्ञानानंद स्वामी की बातों को सराहा लेकिन क्या आप जनता की सेवा को परमात्मा की सेवा से बढ़कर मानते हैं?" स्वामी जी ने निधि से प्रश्न किया। ज्ञानानंद स्वामी जी के मोक्ष लाभ से स्वामी जी को उतनी ईर्ष्या नहीं थी। पर वे चिंतित इसलिए थे कि वे एक पढ़े लिखे विद्वान को ज्ञानानंद स्वामी प्रभावित कर सके थे।

दयानिधि ने उत्तर दिया—"नयी रोशनी के लोग धर्म और भगवान के स्थान पर प्रकृति और कला की आराधना करने लगे हैं और कुछ प्रजा सेवा कर संतुष्ट हो लेते हैं पर ये सभी आध्यात्मिक दृष्टि से भगवान के प्रतिस्थापन से नहीं होने चाहिये। राधाकृष्णन् कहते हैं ऐसी प्रतिस्थापना से ही आज की नागरिकता खतरे में पड़ गयी है। भगवान के चिंतन-मनन से एक महत्तर आध्यात्मिक अनुभूति होती है। उस मूर्ख के तृप्त हो जाने पर उस ज्योति को एक बार देख लेने वाले को दूसरी किसी बात की आवश्यकता नहीं रह जाती। ऐसे व्यक्ति को किसी अन्य चीज को पाने की आशा, अपेक्षा, इच्छा, आकांक्षा नहीं रह जाती। उस में द्वंद्व, असंतृप्ति, असंतोष नहीं रहता, मनुष्य सबसे तटस्थ और परे हो जाता है और वह एक निश्चल आनंद पाता रहता है जिसके आगे राजनैतिक क्षेत्र में पाये महान् विजय तथा कला की महान सौंदर्यानुभूति भी फीकी पड़ जाती है।

"हममें से किसी में भी ऐसी कोई भूख नहीं है। और हम उसके योग्य नहीं हैं और न ही हमें उसकी अपेक्षा है। खाना भी ठीक तरह से खाने की तमीज नहीं। इसमें इस शुष्क हड्डी के ढांचे के लिये वह महोन्नत आनंद वर्जित है।" राजा कह रहा था।

"मुझे तो भूख लग रही है भाई लोग।" जगन्नाथम् ने बहस में चिल्लाया। जीव सजीव दोनों मुस्कुराये।

"पत्तलें बिछ गयी हैं। चलकर बैठिये तो परोसा जाय।" लक्ष्मय्या ने

कहा। लोगों ने कपड़े बदले, हाथ पैर धोये और भोजन करने जनवासे की ओर गये। उसमें निधि भी था। वेंकटाद्रि ने कहा—"आपके लिये यहीं भेज दिया जायेगा।"

"कहीं भी हो क्या फरक पड़ता है। मैं भी सब के साथ खाऊंगा।" निधि बोला।

वेंकटाद्रि हंस कर बोले—"यह निषिद्ध है। रस्म पूरी होने के बाद ही हमारे घर में खा सकते हो।"

"अभी खाऊं तो क्या होगा ?"

"हमारा रिवाज है।"

"बेतुके रिवाज हैं। मैं तो आज वहीं खाऊंगा।"

वधू के घर के आंगन में लंबे लंबे पट्टे बिछाये गये थे। सौ से भी अधिक लोग भोजन के लिए बैठे थे। स्वामी जी बीच के स्तंभ से लगकर बैठे। सामने दशरथरामय्या और रामानंदम् थे। पानी परोसने वाले ब्राह्मण इधर उधर घूम रहे थे। दूल्हे के संबंधियों को देखने के लिए काम का बहाना करके औरतें इधर उधर घूम रही थीं। परोसने में देरी हो रही थी। वधू पक्ष वाले वारातियों को बातों में उलझा रहे थे कि देरी खले नहीं।

"दूल्हा भी सबके साथ बैठकर खायेगा उसके लिए प्रबंध नहीं किया गया तो उसके साथी भी खाने नहीं आयेंगे और सत्याग्रह करेंगे।" इस समाचार को सुनकर माधवय्या के गुस्सा हो जाने की संभावना पर वेंकटाद्रि तथा दूसरे रिश्तेदार आपस में चर्चा कर रहे थे। पर जब माधवय्या ने पूरी बात सुनी तो कहा—"बस इतनी सी बात है। चलो सब एक साथ बैठ कर खायेंगे।" इस पर फिर सब में कानाफूसी होने लगी। एक बुढ़िया ने आकर पाठ पढ़ा—"हमारे घर में तो ऐसी बातें नहीं होतीं। हमने भी तो की है लड़कों की शादियां। ऐसे हठ करना तो हमारे बच्चे जानते ही नहीं थे।" युवक समूह हंसा। बुढ़िया क्रोध से जल गयी।

"यहां कैसे जीमता है देखूंगी में भी। आने दो उसे खड़ा करके पूछूंगी कि शादी से पहले तुझे यहां खाने में शरम नहीं आती ?"

"अब और पूछोगी किससे ? जीमने वाले तो आकर आधा जीम चुके हैं।" त्रिविक्रमदास बोला।

इसी बीच वेंकटाद्रि के पीछे पीछे दयानिधि, जगन्नाथम्, राजभूषणम् तथा और तीन लोग भीतर आये। लोग एक साथ बातें करने लगे। जनवासे की एक दर्जन स्त्रियां पास लगे कमरे के दरवाजे से तमाशा देखने निकल आयीं। बुढ़िया ने आंखों पर हथेली तिरछी रखकर निधि को देखा और बोली— "बेटा, तू ही है न हमारी इंदिरा बिटिया का दूल्हा। इंदरा सचमुच बड़ी भागवती है। भाग्यवती तो मैं भी हूं। इस बीच मुझे खांसी लग गयी। रात दिन खांसती रहती हूं निगोड़ी नींद ही नहीं आती। तुम्हारे जैसा इंसपेक्शन देने वाले दामाद पाना मेरे धनभाग नहीं तो और क्या? तो बेटे! यहां भोजन करना ठीक नहीं। तुम्हारे डेरे तक पूरा भोजन पहुंचा देंगे। वहीं खाना, वर्ना बम्मन रूठ जायेगा बेटा।"

इसी बीच भोजन करले गोविंदा की आवाजें चारों ओर से उठने लगीं।

"अच्छा तो तेरी सास को बुला दूं।" बुढ़िया ने पूछा।

"अजी आप भी हमारे साथ बैठ जाइये माता जी। सब मिलकर ही जीमेंगे।" त्रिविक्रमदास ने चुटकी ली। सब हंस पड़े बुढ़िया को कुछ समझ में नहीं आया। समय अनुकूल न जानकर मौका मिलने पर पुनः अधिकार जताने की सोच वह भीतर चली गयी और घी का लोटा लाकर परोसने लगी। तरकारी चावल खाकर लोग चटनी भात तक पहुंचे तो गीत गाने की फरमाइश हुई। कुछ कंठों ने दूल्हे से गवाने की फरमाइश की। निधि ने कहा कि वह गाना नहीं चाहता। "अब थोड़े ही गाओगे, बीबी के···।" बुढ़िया की बात अनसुनी कर एक शास्त्री जी ने श्लोक पढ़ना शुरू कर दिया।

इतने दूर किवाड़ के छेद में से एक सफेद पगड़ी ने और दूध की कावड़ी ने भीतर सिर डालकर झांका। माधवय्या फौरन उठकर गया और दूध वाले की मूंडी को पीछे ठेल दिया। और पास पड़ी एक लकड़ी लेकर उसे पीट दिया। पगड़ी देखते ही भोजन कर रहे शास्त्री जी उठकर चले गये। उनका जीवन अपिवित्र हो गया। दूधवाला नारन्ना पास की बस्ती से दूध की कावड़ी लाया था। उसे पता नहीं था कि उच्चकुल के सद्ब्राह्मण बैठे जीम रहे हैं। अनजाने में उसने झांककर सब अपवित्र कर डाला था। माधवय्या ने ऐसी घटनाओं की पहले से ही कल्पना करके दो द्वारपालकों को द्वार पर बिठाया था पर वे बीड़ी मुंह में ले खुर्राटे ले रहे थे। परोसी पत्तल को

छोड़कर उठ खड़े शास्त्री के हाथ पैर जोड़कर माधवय्या माफी मांगने लगे।

"दूधवाला अकेला होता तो बात थी उसके पीछे घास ढोने वालों ने भी झांककर देखा था।" शास्त्री जी कह रहे थे। उस बेचारे पर लकड़ी उठा ही रहे थे कि दयानिधि ने माधवय्या के हाथ से लकड़ी छीन ली। नारन्ना और वह दूसरा आदमी धूप में कई मील चलकर आने के कारण काले आबनूस से लग रहे थे। पसीना चू रहा था। हक्के-बक्के से खड़े थे। "हमने नहीं देखा। जानते होते कि बाराती जीम रहे हैं तो क्यों झांकते बाबू।" माधवय्या के पैर पकड़ कर दोनों गिड़गिड़ा रहे थे। दयानिधि ने लकड़ी दूर फेंक दी। शास्त्री जी जल उठे। वे उठकर चलने का उपक्रम करने लगे कि अब वे भोजन नहीं कर सकते।

"मैं भी नहीं करूंगा।" निधि बोला। जगन्नाथम् राजा भी पीछे हो लिये।

"सुना है दूल्हा फिर रूठ गया···।" बुढ़िया ने पुनः आकर पूछा। वेंकटाद्रि और माधवय्या ने निधि से भोजन करने के लिये प्रार्थना की। नरन्ना कापू ने भी कहा, "हमारे लिये आप क्यों परेशान होते हो दूल्हा बाबू—ऐसी बातों पर मार खाना हमारी आदत हो गयी है।"

निधि और राजा अपने डेरे पर चले गये।

शाम के छह बजे थे। जगन्नाथम् कुछ बच्चों के साथ बाहर खेल रहा था। दशरथरामय्या रामानंद नये कपड़े पहने सामान लेकर शादी के हवन कुंड के पास गये। दूर शहनाई बज रही थी। सिंदूरी पानी छिटके लाल घूंघट से आकाश एक-एक करके सितारा बाहर चमक रहा था। निशीथ सभी दिशाओं से झांकता हुआ बड़ी फुर्ती से छाता जा रहा था। पश्चिमाकाश अपनी सिंदूरी घूंघट छोड़कर अब नक्षत्रों के साथ मिलकर विहंस रहा था। निधि की पलकों की कोर में लाल होकर चमकी नमी अब नीली पड़ गयी। राजा ने उस के कंधे पर हाथ रखकर कहा—"उठो भाई—चलकर कपड़े पहनो।" मुहूर्त का समय आ गया है। "अरे तू रो रहा है? शुभ घड़ी आ जाने की खुशी में आनंद के आंसू तो नहीं?"

निधि ने अपनी कनिष्ठा से आंसू हटाये, जो अनायास ही भीतर छिपे किसी दुःख के कारण बह निकले थे।

"यह अभिनय तो लड़की अपनी बिदाई पर करती है, तुझे करने की क्या जरूरत आ पड़ी है ?"

"कुछ नहीं। ऐसे ही कुछ याद आ गया।"

"कोमली तो नहीं ?"

पश्चिमाकाश को ताकते हुए निधि बोला—"निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि मुझे फलां बात के लिए दुःख है।" अचानक कुछ संभलकर निधि ने पूछा—"कोमली की बात तुझे कैसे मालूम हुई ?"

"ये बातें भला छिपी रहती हैं। कैसी विचित्र बात है हम अपने सारे रहस्य मित्रों को छोड़ बाकी सब को बताते हैं और मित्र बेचारे इधर बड़ी तकलीफें उठाकर रहस्य को खोज पाते हैं।"

"इसमें रहस्य कहने लायक कुछ भी तो नहीं है। एक पुरुष द्वारा एक स्त्री की कामना करने की बात के अलावा इसमें कौन सी विशेषता भरी है कि ढिंढोरा पीटा जाय ?"

"पर स्त्री अगर किसी पुरुष की कामना करती है तो उसका अवश्य ढिंढोरा पीटा जाता है। मुझे तो पहले ही से अनुमान था कि यह विवाह तुम्हें बिलकुल पसंद नहीं। मेरा यह अनुमान गलत तो नहीं ?"

"तुम्हारे मन में ऐसी शंका क्यों उठी ?"

"लगता है कि जबर्दस्ती तू अपने ऊपर संतोष लादने का प्रयत्न कर रहा है। जरा जरा सी बातों से अगर आदमी चिढ़ जाता है तो समझना चाहिए उसमें कहीं कुछ संतुलन बिगड़ गया है। अब शादी से पहले ही लड़की वालों के यहां खाना खाने का हठ करना मूर्खता नहीं तो और क्या है। भंगी चमार को ससुर ने पीटा तो आप जनाब रूठकर उठ गये यह मूर्खता नहीं तो और क्या है ? अरे कितने सबूत चाहिये तुझे मूर्खता के।" निधि के होंठ हंसने के लिए खिल उठे। आंख के नीचे गाल पर हल्का सा गढ़ा उभर आया। वह बोला—

"चींटी के काटने पर, तरक्की न मिलने पर, सिनेमा के लिए टिकट न मिलने पर, प्रेयसी को पत्र लिखकर टिकट लगाना भूल डाक में छोड़ देने पर दुखी हो जाने की आदत डाल लेने वाले लोग, सचमुच के दुख का कारण न तो जान सकते और न ही उनकी गूढ़ता और गंभीरता को सही सही आंक

सकते हैं। आकाश में डूबते सूरज को देखकर क्या दुखी नहीं हुआ जा सकता। काल बीता जा रहा है, दांत गिरे, बाल झड़े पोपले मुंह वाली बुढ़िया को देखकर हंसना बंद कर देती है। वर्षा की धार से कांप उठा पुष्प विहंसने लगता है—इन सभी दृश्यों की कल्पना करके क्या दुखी नहीं होता? मेरा दुख कुछ इसी तरह का है।"

"यह कविता कब से लिखनी शुरू कर दी तूने। कहीं कोमली देवी तुम्हारी कविता की प्रेरणा तो नहीं। उसी से शादी क्यों नहीं कर ली। हूं। तो किस्सा कहां तक चला? वह कहां है अब?" राजा ने एक साथ इतने सारे प्रश्न पूछ डाले। निधि ने कहा—"दूसरों की प्रेम गाथायें सुनने जितनी बोरियत और किसी से भी नहीं होती अतः सुनने का आग्रह न करें।" पर राजा ने कहा वह तो सुनकर ही रहेगा और कसमें खाने लगा कि वह किसी से नहीं कहेगा।

"राजा तू विश्वास करेगा?"

"सच बात बतायेगा तो जरूर करूंगा।"

"तो सुन। मैंने कोमली से प्यार नहीं किया मैंने उसको चाहा था।"

"हूं, तो आगे क्या हुआ?"

"तुम तो उपन्यास कहानी की भांति पांच मिनट में समाप्ति चाहते हो। मैंने उससे प्रेम किया उसको क्षमा कर दिया। उसे उसी की होकर रहने दिया। मेरी दृष्टि में चंद्र, सूर्य, नक्षत्र, मेघ, हिमाचल के शिखर कोमली सब बराबर हैं। इनके बिना में जी नहीं सकता। इनकी मैं कामना नहीं करता उन्हें में प्यार करता हूं समझे?"

"तू कहता है कि एक सदाचारी बालक की तरह उसे छुआ नहीं और उसे छोड़कर चला आया और कहता है कि मैं तेरी बात पर विश्वास कर लूं।"

"तो तुम विश्वास नहीं कर पाये?"

"ऊं हुं। मैं तो मानता हूं कि तू डर गया कि अगर कुछ करेगा तो कहीं शादी न करनी पड़े। उससे विवाह करने का तुझमें साहस नहीं था। तू डरपोक बन गया और फिर मैं यह भी नहीं विश्वास करता कि तूने सपने में भी कोमली को महापतीव्रता अथक देवकन्या नहीं समझा। कुछ-कुछ द्वेष, कुछ उसकी ओर से आशाजनक प्रोत्साहन न मिलना इन बातों ने तुझे व्यथित

कर दिया। उस रात क्या हुआ था, उस सबको छुपाकर अब यह नैतिकता की चादर ओढ़ रहा है।"

"तुम्हारी बातें कुछ हद तक सही हो सकती हैं पर उस रात कोमली को मैंने कुछ नहीं किया। अपनी इच्छा का त्याग करके में चला आया इतनी बात अगर तू मुझ पर विश्वास करे तो काफी है।"

"इस बात का सबूत क्या है ?"

"वह दूसरे दिन हमारी बस्ती को छोड़कर चली गयी।" निधि ने बताया तो राजा हंसते हंसते लौट पोट हो गया। हंसने के कारण सिगरेट का धुआं नाक में चला गया फिर भी दम रोक कर वह हंसने लगा। "कोई बहुत धनवान व्यक्ति था उसके बारे में मुझे पूरा विवरण तो नहीं मालूम, पर कोमली को लेकर चला गया। उसकी मां भी चली गयी पर में जानता हूं और विश्वास भी है कि कोमली मुझे चाहती थी मेरा मन और यह खून मुझे बता रहे हैं।"

राजा ने पूछा—"अगर मैं यहां एक पान की दुकान खोलकर उसमें बैठकर पान लगाते हुए कहूं कि ग्रेटा गार्बो ने मुझसे प्यार किया था, तुझे कैसे लगेगा ?"

"कोमली का शरीर मेरे प्रेम से विकसा है। हृदय अभी अभी विकसित होना प्रारंभ हुआ है। उस दिन उसने प्रेम से मुझे देखा, मुझे लगा कि नक्षत्र माला टूटकर मुझ पर आ गिरी है। उस दृष्टि में मूक बुलावा, आशा, प्रेरणा, प्रोत्साहन, मीठी झिड़की, पत्थर से सहलाने का भाव, मानवता के प्रति अंतर्दृष्टि देने का भ्रम सभी कुछ थे। वह प्रेम था गरमी से जलता ललाट, जलते होंठ, तलवारों जैसे काट डालनेवाले उरोज। थकावट भरी आवाज, श्रृंगार रहित रुदन—ऐसी बातें कोमली के प्रेम को भांपने का प्रतीक कदापि नहीं हो सकतीं। वह कहीं भी जाय, किसी के हाथों द्वारा मसल दी जाय। उस अभागे के हाथों पड़कर शरीर के कसाव को खो दे, वह अपना हृदय, अपनी दृष्टि, मानसिक विराग सभी कुछ मेरे लिए और सिर्फ मेरे लिए संजोय रखेगी।"

'जब इतना सब कुछ हो गया तो अब यह विषाद किस बात का है ?"

"तभी तो पहले ही कह चुका हूं कि इस दुख का कोई कारण मैं नहीं दे सकता। विश्वास, आदर्श और लगाव के प्रति जब दुनिया उपहास करती है

तो उस दुनिया के प्रति दुखी होकर उससे असंपृक्त होकर रह जाने में ही कौन सी विशेषता है। संपूर्ण प्रेम से जब हृदय भर आया हो—आधे अधूरे लोगों को और उनके अधूरे-अपूर्ण अनुभव देखने वाला व्यक्ति दुखी न हो तो और क्या करे ?" दोनों कुछ देर तक मौन रहे फिर राजा बोला—"तुम्हारे दुख का कारण में जानता हूं। तुम नाराज न हो तो मैं बताऊं।"

"तेरी बातें कुछ हद तक कारण हो सकती हैं, पर ठीक ठीक कारण अगर में बताऊं भी तो कोई उस पर विश्वास नहीं करेगा। इस व्यवस्था में प्रेम के लिये कहीं स्थान नहीं है।"

"वही प्रेम अगर अपनी पत्नी से करोगे तो तुम्हें कौन रोकेगा ?"

"प्रेम रहित विवाह, विवाह रहित प्रेम दोनों में पहला तो उस व्यक्ति को खा जाता है, दूसरी बात से समाज को चिंता होने लगती है।"

"इसका मतलब है इंदिरा को तुम प्यार नहीं करते। अगर पसंद नहीं थी तो विवाह के लिए हामी क्यों भर दी ?"

"दूसरों की तरह शरीर को एक स्थान पर तथा मन को दूसरे स्थान पर रखना मुझे नहीं आता। बहुत से युवकों की तरह मुझे भी लगता है कि मैं भी समाज के लिए और रिश्तेदारों के लिए शादी कर रहा हूं। विवाह सफल होने के लिए पति पत्नी को अभिनय में दक्षता प्राप्त होनी चाहिये। मुझमें इस अभिनय की योग्यता नहीं है। कोई भी मनुष्य अपनी उत्तेजना और व्यक्तित्व भविष्य को समर्पित कर चुप नहीं रह सकता और न ही उसे ऐसा करना चाहिये। इसी भांति पत्नी के लिए भी अपने पातिव्रत्य का आडंबर करना जरूरी है। कल्पना, शक्ति, आदर्श और व्यक्तित्व रहित स्त्रियां शायद पतिव्रता बनी रह सकती हैं। विवाह नटी-नटों का स्वर्ग है। हमारा अपना आराम सुख शायद अपने को धोखा देने की शक्ति पर आधारित रहता है मुझमें वह शक्ति नहीं है।

"विवाह क्या है इसके अनुभव से पहले ही तुम उसकी कल्पना करके डर रहे हो वह बहुत बुरी बात है। हर इंसाना अपना विवाह आदर्श होने की आकांक्षा करता है अगर ऐसा न करे तो उसे किसी बात का डर भी न रहे। तुम जीने के स्थान पर 'जीते रहने' की बातों पर सोच रहे हो। और यही तुम्हारे विषाद का कारण है। कोमली में सतीत्व नहीं है और तुम उससे विवाह

भी नहीं करना चाहते। अगर चाहते भी हो तो अपने पिता का तिरस्कार नहीं पाते। तुम्हें समाज से डर लगता है। आगामी जीवन के बारे में सोचते रहना और दुखी होते रहना तुम्हारी नियति बन गयी है। अब इसे सोचना छोड़ दो और नये सिरे से जीवन जीना शुरू कर दो। अच्छा, एक बात बताओ, विवाह तो जैसा तुमने कहा कि तुम समाज के लिये कर रहे हो, तो फिर इंदिरा में सभी अच्छे गुणों की अपेक्षा क्यों करते हो। यह बात नहीं कि उसमें कोई कमी है। खाता पीता घर, औसत सौंदर्य, संगीत का ज्ञान एक पत्नी के लायक सभी गुण हैं। मेरा तो विश्वास है कि तुम्हें अवश्य सुखी बना सकेगी।" कहते हुए राजा ने निधि को पकड़ कर उठाया और उसके मुंह में सिगरेट रखकर जलाया।

निधि ने आंखें पोंछी और उससे कहा—"राजा। एक नये और बिलकुल अपरिचित व्यक्ति के साथ जीना होगा इस विचार से ही डर लगता है। आत्म-स्वातंत्र्य खो जाने के डर से ही तो तुमने भी तो ब्रह्मचारी बने रहने की कसम खायी है।"

"मेरी बात और मेरे विचार बिलकुल अलग हैं। मैं तो कहता हूं कि स्त्री को प्रेम करना आता ही नहीं और दो पुरुषों के बीच यह संभव नहीं। स्त्री और पुरुष के बीच प्रेम शारीरिक आकर्षण के रूप में ही होता है जिसे मैं प्रेम नहीं मानता।"

"अब उठो। फिर से नया विषय और विवाद खड़ा मत करो।"

दोनों उठकर अपने डेरे की ओर चले। हवन कुंड के आगे बैठे। मधु-पर्कों में लिपटे वर-वधू विवाह मंडप में बहुत आकर्षक लग रहे थे। दयानिधि ने इंदिरा की ओर डरती निगाह से देखा। उसने पलकें झुका लीं। कमान सी भौहें, सुहाग का प्रतीक चिह्न माथे पर विशेष बिंदी. कुरावदार कपोल, सिर धोने के कारण बाहों पर फैले सूखते छल्लेदार बाल। बस वह इतना भर देख सका। लाज और डर से उसके अधर कांप रहे थे। हवा का रुख न पहचान सकने के कारण पतवार उठाने को शंकित हो रहे नाविक की भांति दयानिधि असमंजस में पड़ अर्थहीन दृष्टि से इधर-उधर देखने लगा। वह अति पवित्र क्षण था। निधि कोई विशिष्ट व्यक्ति नहीं था। समाज की परंपराएं और रस्में उसके जरिये अपना मंतव्य पूरा कर रही थीं। ब्राह्मण विचित्र स्वरों में

अजनबी भाषा में कुछ पढ़ रहे थे। कुछ लोग शहनाई बजाने को कह रहे थे तो कुछ उन्हें रुक जाने का आदेश दे रहे थे। देर तक इन आवाजों और गड़बड़ के वातावरण में बहुत देर बाद उस मंडप को अचानक एक भयानक निस्तब्धता छूने लगी। रेशमी साड़ियों की फड़फड़ाहट, चूड़ियों, गहनों की खनखनाहट, अगरु, चंदन, कस्तूरी की सुगंध दिए के तेल में जलती ज्वालाओं का मौन स्वर, पैर हाथ सिकोड़े, दुलहन अक्षत फूलों की झरती हुई पंखुड़ियां, ब्राह्मणों की बातें रुपयों की खनक—सब ध्वनियां एक के बाद एक—कटते उभरते हाथ—अस्पष्ट परिमल सांप का फन उठकर, पहाड़ पर पटकने के कारण हजार टुकड़े बनकर बिखर जाने की तरह इन सभी हाथों की एक बड़ी सी लहर उठी और वातावरण में छुप गयी। लगता था कि सूर्य-चंद्र अपने स्थान छोड़कर पास आ गये हैं जिससे आंखें चौंधियाने लगीं।

विवाह का क्षण उभरता आ रहा था। लाखों धाराओं को अपने में समोकर एक बड़ी लहर की भांति, गहराइयों को चीरते आगे बढ़ रहे समुद्र के ज्वार की भांति होता है वह क्षण। इस झंझा को कोई रोक नहीं सकता। जो न रोक पाने वाले रुदन और हंसी जैसा होता है। सब अपनी-अपनी घड़ियों की ओर देख रहे थे। कुछ की पीछे थीं कुछ की आगे। कुछ लोगों की घड़ियां तो खीज कर चुप बैठी थीं। काल का निर्णय मनुष्य को आता नहीं शायद। लग्न की घड़ी नौ बजकर तीन मिनट थी, पर कौन उस क्षण से साक्षात्कार कर सकता था। कौन उसे पहचान सकता था। ब्राह्मण उंगलियां गिन कर कुछ हिसाब कर रहे थे। पुनः मंत्र पाठ पहले से और भी जल्दी और ऊंचे स्वरों में—सुगंध—हंसी के फव्वारे—अपने-अपने विवाह की स्मृतियों से बोझिल आंखों में आंसू आ जाने से उन्हें पोंछती स्त्रियां पुरुष—आनंद के आंसू, समाज का एक व्यक्ति को संपूर्ण मानव बना डालने का गर्व भरा अहसास—"अहह: अपने मनमौजीपने को छोड़ कर हमारे आदेशों के अनुसार चलना होगा।" विवाह की वह घड़ी सब को ठेलती हुई आगे आ गयी। किसी ने दयानिधि का हाथ खींचा, उठा कर खड़ा किया, आगे धकेला, बिठाया फिर उठाया फिरकी की तरह घुमाया शहनाई के तेज आवाज में डूबते यंत्र—पान सुपारी जीरा गुड़ सिर पर—अक्षतों की वर्षा, हवन का धुंआ, ध्वनि, किसी के गले में मंगलसूत्र बंधवा कर पंचों ने पटाक्षेप डाला—बस विवाह हो गया।

(शनिवार)

विवाह होते ही गोविंदराव पत्नी और सुशीला को वहीं छोड़कर चले गये। क्योंकि सगे लोगों को मुहूर्त के बाद क्षण भर भी ठहरना नहीं चाहिए। सुशीला अपने कमरे में होल्डाल खोलकर नयी साड़ी पहने कंघी कर रही थी। नौ बजे नये दुलहे के लिए काफी दुबारा भेजी गयी। निधि ने सुशीला को ताना देने के लिए बुलाया। सुशीला आकर निधि को दहेज में मिले सामान वाली पेटी पर बैठ गयी।

सुशीला का चेहरा मुर्झाया हुआ था, पहले सी रौनक नहीं थी। पिछले आठ महीनों में कुछ लंबी अवश्य हो गयी थी पर चेहरा सूख गया था। शरीर स्वस्थ, चमक रहा था मानो अभी नींद से उठी है। जैसे आंखों में असंतोष छिपा रखा हो, बार-बार भौंहें चढ़ाती सुशीला फटी फटी दृष्टि से देखती रही। मौन तोड़ने के लिए उसने कहा—"शाम को चली जाऊंगी।"

"क्यों ? यहां दिल नहीं लग रहा है ?"

"अब रह कर भी क्या करूं ?"

"गांव जाकर भी क्या करोगी कालेज भी तो नहीं खुले हैं।"

"अब मेरे रहने की जरूरत भी क्या है ?"

"शादियों में घूमने-फिरने, बोलने-चालने का शौक तो स्त्रियों को ही ज्यादा होता है तुम नहीं रहोगी तो मुझे सलाह कौन देगा ?"

सुशीला ने फीकी हंसी हंस दी। पूछा—"अमृतम् क्यों नहीं आयी।"

"चिट्ठी लिखी थी।"

"क्या लिखा था ?"

"तुम ही पढ़ लो" जेब से चिट्ठी निकाल कर उसने सुशीला को पकड़ायी। सुशीला उसे उंगलियों में लपेटती रही, पर खोलकर पढ़ा नहीं।

"दुलहन कैसी लगी ? तुम्हें पसंद आयी ?" निधि ने बातचीत को बढ़ाने के उद्देश्य से पूछा।

"मेरी पसंद से क्या फर्क पड़ने वाला है। तुम्हें पसंद न होती तो शादी क्यों करते ?"

"तुम्हारी राय जानना चाहता हूं।"

"अच्छी ही है।"

"अच्छी ही है या अच्छी है । दोनों में काफी अंतर है भई ।"

"मुझे इन बातों का अंतर नहीं मालूम ।"

"मतलब है कि तुम्हें पसंद नहीं आयी ।"

"हृष्ट-पुष्ट है । कुछ पढ़ी लिखी है क्या ?" उल्टा प्रश्न किया सुशीला ने ।

"यही कुछ बरसाती नाले जैसी पढ़ाई बस ।"

"संगीत ?"

"विवाह का संगीत होगा ।"

"तो फिर तुम्हें कैसे रिझा गयी ?"

"गाना बजाना, पढ़ाई, पैसा, सौंदर्य—इन सबके होने पर ही लड़की पसंद आने की बात हो तो जरा बताओ दुनियां में कितनी लड़कियों के विवाह होते ?"

"मैंने इसलिए पूछा था कि तुम जब भी बात करते हो तो अपने को भीड़ से अलग एक विशेष आदमी होने का अहसास देते रहते हो ।"

"अब तो सावित हो गया न कि ऐसा नहीं हूं ।"

"साबित करवाना तो तुम्हारी पत्नी के हिस्से में है ।" निधि को इसका गूढ़ार्थ समझ में नहीं आया ।

"मैं किस प्रकार की स्त्री से विवाह करता तो तुम्हें आश्चर्य होता बताओ न ।" निधि ने सुशीला से भी एक कदम आगे बढ़कर भावगर्भित प्रश्न किया । वह यह भी जानता था कि सुशीला इसका उत्तर नहीं देगी । पर उसने गलत सोचा था । सुशीला ने फौरन उत्तर दिया—"अमृतम् जैसी ।"

निधि को आश्चर्य हुआ इस उत्तर से पर उसे उसने प्रकट न होने दिया । "अमृतम् में तुम्हारी फेहरिस्त में से ऐसा क्या कुछ है जिससे तुम्हें लगा ।"

सुशीला समझ गयी कि उसके प्रश्न से निधि को चोट पहुंची है सो उसने बात बदल दी—"चलो तो फिर कोमली जैसी मान लो ।"

"अमृतम् को कोमली के साथ रखना मैं बिलकुल पसंद नहीं करता सुशीला । अमृतम् अच्छी खासी किसी की व्याहता औरत है ।" निधि कटु होकर बोला ।

"सच हमेशा कड़ुवा होता है ।"

"जाने तुम ऐसा सोचने को क्यों विवश हुयी अमृतम् सचमुच बहुत अच्छी स्त्री है ।"

"अच्छे लोगों में ही बिगड़ने का रोग होता है।" सुशीला बोली।

"अमृतम् सबसे प्यार बांट लेती है। हर एक पर जान देती है। इंसान को प्यार करना बिगाड़ना है तो मैं आगे कुछ नहीं कह सकता।"

सुशीला ने अमृतम् की चिट्ठी खोलकर पढ़ी। लिखा था जीजाजी तुम्हारी शादी पर न आ पाने का मुझे जितना दुःख हुआ, कभी मिलोगे तो बताऊंगी। जानते ही हो न मेरी सीमायें—सासजी की तबियत ठीक नहीं है तुम्हारे भाई साहब चकबंदी के कामों में व्यस्त हैं। तहसीलदार साहब दौरे पर आये हुए हैं सो जग्गू को भी बड़ी मुश्किल से भेज पायी। मुझे तुमसे बहुत सी बातें पूछनी हैं। बहुत कुछ कहना भी है। जाने कब मौका मिलेगा। हम दोनों की ओर से अंगूठी भेजी थी, तुम्हें मिल ही गयी होगी। सुहागरात के दिन इंदिरा को पहनाना। चिट्ठी पढ़कर फौरन फाड़ डालोगे न। तुम्हारी—'अमृतम्'

"चिट्ठी फाड़ डालने की क्या जरूरत है?" सुशीला ने प्रश्न चिह्न लगाया?

"ताकि तुम्हारे जैसे लोग उसका कोई दूसरा अर्थ न लगा लें।" दयानिधि ने कह दिया।

सुशीला को क्रोध तो आया पर प्रकट न कर पायी। लक्ष्मय्या ने आकर भोजन के लिए बुलाया।

उन सभी लोगों को विवाह मंडप में ही भोजन परोसा गया। नागमणि ने कहा वह वर-वधू के पास ही बैठेगी पर वर-वधू के लिए अलग-अलग थालियां लगायी गयी थीं। निधि अड़ गया कि नागमणि भी उनके साथ बैठेगी। वर पक्ष वालों में कुछ ने मनाही की तो कुछ ने हामी भरी। औरतों में काना-फूसियां हुयीं। माधवय्या को क्रोध आया और उन्होंने इसकी अनुमति नहीं दी। काफी झगड़े कहा सुनी के बाद वर-वधू, जगन्नाथम्, सुशीला, नागमणि, राजा, रामानंदम एक-साथ अलग बैठे। शादी की दावत जैसे-तैसे पूरी हुयी।

(रविवार)

शाम चार बजे मोटरों पर दोनों पक्ष के कुछ चुने लोग वर वधू को ले शांति आश्रम पहुंचे। बड़ा ही सुन्दर वातावरण था। आश्रम के बरामदे पर चटाइयां बिछाकर दोनों समधी बैठे और शिष्यगण गीता के कुछ रहस्य

प्रवचन करने लगे। सुशीला, जगन्नाथम् राजा नहर के किनारे घूमें। वर-वधू और नारय्या ने आश्रम का संदर्शन किया और फिर वे भी नहर तक गये। दूर एक पत्थर पर बैठी सुशीला राजा की बातें सुनती हुई कंकड़ पानी में फेंक रही थी। जगन्नाथम् ताड़ की लकड़ी से बनी कच्ची पुलिया पार कर दूसरी ओर आम के बागीचे में सब को आमंत्रित कर रहा था। नागमणि और इंदिरा ने भी पुलिया पार की।

आम के पेड़ के नीचे दूब पर निधि बैठ गया। इंदिरा की समझ में न आया कि क्या करे। चारों ओर ताकती खड़ी रही। आम के पेड़ के तने पर हाथ टिकाया पर चींटियों ने काटा तो फौरन खींच लिया। चींटियों के काटने से बांह लाल हो गयी थी। इंदिरा की उपस्थिति से पेड़ों की छाया में एक विचित्र कांति भर उठी। उसके पैर के नीचे की घास मोह के कारण कांप उठी। उससे लिपटी हवा हिल न पायी। सौंदर्य से इतराती लंबी लता की भांति उसने पेड़ों को घेर लिया। अपनी परिपूर्णता को व्यक्त करती प्रकृति आनंद से पुलकित हो गयी।

"चींटे हैं क्या?" निधि ने उठकर उसकी ओर देखते हुए पूछा।

इंदिरा ने आंखें फैलाकर, आश्चर्य में भर कर सिर झुका लिया। वह पास आया और बांह को गौर से देखने लगा—"दिखाओ तो जरा?"

इंदिरा ने बांह आगे बढ़ा दी। निधि ने बांह देखने के बहाने उंगली हाथ में लेकर अंगूठी पहना दी।

"जानती हो किसने दी है?"

"ऊं हूं।"

"अमृतम् ने। मेरे पिताजी की दूर के रिश्ते की भांजी है। तुम्हारे लिए भेजी है उसने। तुम्हें पसंद आई है न?"

उत्तर में सिर हिलाकर इंदिरा नहर की तरफ देखने लगी।

"उधर देख रही हो, क्या जाना चाहती हो?"

"ऊं हू—अं।"

"क्या?"

"वे लोग वहां हैं।"

"तो क्या डर लगता है कि देख लेंगे।"

"उंहु—पता नहीं" कह कर हंसने लगी।

"कल भोजन के समय मेरे हठ पर तुम्हारे संबंधियों को गुस्सा तो आया होगा।"

"क्यों गुस्सा काहे को आता ?"

"पर आया था। है न ?"

"ऊंहुं।"

"तुम्हें नहीं आया होगा पर तुम्हारी अम्मा और...।"

"मालूम नहीं।"

"तुम्हें यहां बैठने में तकलीफ हो रही है क्या ?"

"नहीं।"

"बस मैं यही चाहता हूं।"

....

"हमेशा हमेशा के लिए यहां रह जायें तो अच्छा लगेगा। है न ?"

"हां।"

"एक बात पूछूंगा जवाब दोगी ? तुम्हारे लोग मेरे बारे में क्या सोचते हैं ?"

"कुछ नहीं।"

"बताओगी नहीं।"

"मैं नहीं जानती।"

"खैर, मत बताओ।"

फिर काफी देर तक मौन रहे।

"अच्छा तुम्हें कैसा लगता हूं ?"

इंदिरा ने अपनी हंसी रोकी।

"नहीं बताओगी ?"

"पता नहीं।"

"खैर, मत बताओ।"

"अच्छा यह बताओ। मुझसे बोलना..." बात पूरी होने से पहले पेड़ के पीछे से जगन्नाथम् प्रकट हुआ और "रसभंग का भागी हूं मेरा निष्क्रमण ही उचित होगा" कहता हुआ जाने लगा तो निधि ने उसे रोका।

"इंदिरारमण···" गाते हुए जगन्नाथम् ने पसीना पोंछा और बोला।

सुशीला द्वारा फेंके पत्थरों से नहर का पानी जम गया है।

नागय्या अंबियां तोड़कर नमक मिर्च की पुड़िया निकाल सबके लिए हिस्से लगा रहा था। सबने एक-एक करके चखा और खट्टे होने के कारण मुंह बनाया और सिर पर हाथ मारने लगे। इंदिरा से जगन्नाथम् ने पूछा कि कैसी है अंबियां।"

"मीठी है" इंदिरा ने कहा।

"हां तो होगा ही। पति के हाथ का प्रसाद है न।"

सूरज इमली के पेड़ के पीछे आ छिपे। जगन्नाथम् ने सबको उठाकर खड़ा कर दिया कि वहां सब कीड़े-मकोड़े निकल आयेंगे। राजा प्रेम के लोक गीत गा रहा था, धूल झाड़कर खड़ा हो गया और बोला, "कितने भी साधु बने रहो पर साथ स्त्री न हो तो कला, प्रकृति गीत सभी कुछ फीके लगने लगते हैं। सृष्टि की नींव है—स्त्री और स्त्री का आश्रय है—विवाह। बहुत सोचने के बाद अब लगता है कि विवाह कर लेना ही ठीक होगा।

"अपने राम कभी तुम्हारा खंडन नहीं करेंगे।" कहता हुआ जगन्नाथम् मोटर में आ बैठा। ड्राइवर ने बीड़ी फेंककर हार्न दिया। उस कठोर ध्वनि से टकरा रहा शांत वातावरण काफी देर तक आपे में न आ पाया।

नीरव बंधन

आठ महीने बीते। संक्रांति के पर्व पर ससुर ने जमाई को बुलाया पर दयानिधि ने लिख दिया कि आखिरी वर्ष की पढ़ाई है, काफी मेहनत करनी है सो जा नहीं सकता। इसके पूर्व एक बार माधवय्या किसी काम से शहर आये थे, खैर दामाद से न मिल पाये, व्यस्तता के कारण और दूसरे ही दिन वापस चले गये। इस घटना के एक महीने बाद माधवय्या ने निधि के नाम सौ रुपये भेजे। निधि की समझ में नहीं आया कि पैसे किसलिए भेजे गये हैं। उसने वापस कर दिये। इस पर माधवय्या ने नाराज होकर दामाद को अंग्रेजी में एक लंबा पत्र लिखा कि उन्होंने अपनी ताक़त के अनुसार पैसा भेजा है— पहली संक्रांति में दामाद के लिए शौक़ व रस्में केवल पैसों से नहीं आंकी जातीं, दिल देखा जाता है। आजकल के युवकों का सिर तो फिर गया है सिर्फ पैसे को ही आंकते हैं···आदि-आदि। "इस पर निधि ने जवाब दिया कि आजकल के युवक बेचारे बड़े ही भोले और आर्थिक स्वतंत्रता के पक्षपाती होते हैं। गुलामी की आदत पड़ जाने वालों को जरा-जरा सी बातों पर जल्दी गुस्सा आ जाता है।" माधवय्या निधि के पत्र का आशय समझ नहीं पाया। हंसते हुए उन्होंने पत्नी को पढ़कर सुनाया तो वह पड़ोसनों से जाकर दामाद के गुण गाने लगीं कि "दामाद बहुत अच्छा लिखता है।" माधवय्या ने उसी चिट्ठी के कागज में एक दिन स्पेंसर की कुछ सिगरेटें पुलिस सुपरिंटेंडेंट को नजराने में दीं तो

उन्होंने माधवय्या को सलाह दी—"यह स्वतंत्रता का रोग पूरा उतर जायगा जल्दी से गौना करा दो।" माधवय्या ने यह बात दामाद को लिख भेजी। निधि ने उत्तर में लिखा, मार्च में इम्तहान हो चुकने के बाद अप्रैल में कोई तारीख निश्चित कर बिना टीम टाम और हंगामें के रस्म पूरी कर डालें। इस पर माधवय्या ने पुनः लिखा कि रस्म शास्त्रोक्त रूप से संपन्न होना अनिवार्य है। चूंकि यह स्त्रियों के शौक की रस्म है अतः सभी संबंधी स्त्रियों को बुलाना आवश्यक है। निधि ने अपनी ओर से किसी को कुछ नहीं लिखा। उसे राजा की बातें याद हो आई कि सुहागरात की रस्म पैर में बेड़ियां कसने की रस्म है। दरवाजे की सांकले बाहर से कोई चढ़ा देता है। वही सांकल की आवाज होती है। पर भीतर पहले कौन सांकल चढ़ाये ? वही जो गुलाब बनने को अधिक आतुर हो। निधि ने निश्चय किया कि वह सांकल की आवाज नहीं करेगा।

रोज फ्लास्क में चाय—सिगरेट का डिब्बा—बत्ती बुझाना—जम्हाई लेना किताब बंद करना करते-करते मार्च का महीना बीत गया। बीच में उत्तरी ध्रुव में रहते वक्त पढ़े पत्र की भांति राजा की पुरानी चिट्ठियां पढ़कर हंसता और किताबों के पन्ने पलटता अप्रैल भी आ गया। तीन तारीख को पिता का भेजा मनीआर्डर और चिट्ठी दोनों एक साथ मिले। चिट्ठी में लिखा था सात एकड़ जमीन बेचकर दो हजार बैंक में उसकी डाक्टरी की प्रैक्टिस के लिए जमा करके बाकी पैसा अब तक उसकी पढ़ाई के निमित्त लिया ऋण चुका दिया है। शेष तीन एकड़ जमीन बची है। गर्मियों की छुट्टियों में रसोइये को लेकर बंगलौर जा रहे हैं। सुहागरात की रस्म पूरी होते ही बहू को लेकर उसे बंगलौर आने को लिखा था।

पांच तारीख को राजा के पास से चिट्ठी आई जिसमें उसने लिखा था—हम लोग कई बार मिले पर मैं तुमसे एक बात कह न पाया। मुझे कहते डर लगा। तुम्हें याद होगा कि मैंने कहा था कि हम अपनी बातें दोस्तों से छिपाते हैं। अब मैं तुमसे छिपाना नहीं चाहता। सामने कहने का साहस नहीं है, इसलिए लिख रहा हूं।

उस दिन जब हम लोग आश्रम से वापस लौट रहे थे तो जाने क्यों मुझे शंका हुई कि सुशीला मुझसे प्यार तो नहीं करती। मेरी समझ में नहीं आता

कि उसने मुझमें क्या पाया है। नहर के किनारे हम दोनों ने काफी गंभीरता से बातें कीं सुशीला ने उसी समय मुझे विचलित कर दिया। में पसीज उठा। बहुत हद तक वह वातावरण और एकांत भी इसके कारण हो सकते हैं।

सुशीला ने तुम्हारे बारे में भी काफी बातें कीं। उसने तुम पर काफी क्रोध प्रकट किया कि तुम चोर हो, तुम में नैतिकता नहीं है। कोमली, नागमणि और जाने किसी अमृत के साथ भी तुम्हारे संबंध बताये थे उसने। कहा था, कि तुम सबको आकर्षित करते हो और फिर भूल जाते हो। उसने तुम्हारा नाटक पहचान कर तुम्हें दूर रखा था। वह तो यह भी कह रही थी कि वह आदत तुम्हारे पूरे खानदान में है। इतना कुछ कहकर वह बता रही थी, कि अगर वही चाहती तो तुम्हारा विवाह उसके साथ जरूर हो सकता था। मैं जानता हूं कि ये बातें सच नहीं है पर मैंने सुशीला को खुश करने के लिए उसकी बातों का खंडन नहीं किया। सचाई को स्वार्थ के लिए त्याग देने के कारण मैं पश्चाताप कर रहा हूं पर क्या फायदा। पश्चाताप पापी को प्रोत्साहन देता है। मुझे अपने उस पश्चाताप के प्रति भी विश्वास नहीं। फिर भी मैंने सुशीला से इतना जरूर कहा—"निधि किसी का दिल नहीं तोड़ता, सभी को प्यार करके खुश करते रहना उसका स्वभाव है, तुम्हें भी प्यार कर सकता है। ठुकराने वाले पुरुष को स्त्री कभी क्षमा नहीं करती। तभी तुम उससे इतनी ईर्ष्या करती हो।" मेरी बातों से उसकी आंखों में आंसू आ गये। अब तुम मुझे सलाह दोगे कि मैं उससे विवाह कर लूं। लौटती डाक से तुम्हारा उत्तर पाने की प्रतीक्षा करूंगा।

चिट्ठी की बातों से निधि को आश्चर्य नहीं हुआ। एक ही वाक्य ने उसे कष्ट पहुंचाया कि "यह आदत तो पूरे खानदान में है।" उसने पत्र का उत्तर दिया।

"तुम्हें विवाह के लिए सलाह देने की योग्यता मुझ नहीं है। पर एक बात पूछूंगा। तुमने अपने पत्र में लिखा है कि सुशीला ने तुम्हें प्यार किया है। मेरा तो विश्वास है कि सुशीला किसी भी पुरुष से प्यार नहीं कर सकती। सुशीला प्यार करती है तो मात्र एक अनुभूति से कि कोई उसे भी प्यार करता है। मैं गलत हो सकता हूं। ऐसा कोई अच्छा प्रमाण मिले तो मैं अपना विचार बदलने को भी तैयार हूं। तब तक मौन रहना ही ठीक होगा।"

ससुराल जाने के लिये सामान बांध रहा था कि उसे जगन्नाथम् का पत्र मिला। उसने लिखा था—"अपनेराम पढ़ायी के महासागर में हाथ पैर मार रहे हैं। अपनेराम के मन में आपके साथ रह कर शहर में पढ़ने की इच्छा बलवती हो रही है। इस वर्ष लगता है कि अपनेराम की नैया पार नहीं लगेगी। अगर पार न लगी तो बंधुवर्ग अपनेराम को मद्रास भेजना चाहता है।

अब रही दीदी की बात वह खुश है और काफी फुर्ती से काम कर रही है कारण बुढ़िया का शाश्वत रूप से खटिया पकड़ लेना है। वैसे बुढ़िया डेढ़ सौ साल जी सकती है। अच्छा खाती है अच्छा पीती है। पर काम शाश्वत रूप से बहू के सिर मढ़ देने के उद्देश्य से अब दिन भर खटिया पर ही बैठी रहती है। टु यूज़ ए पाप्युलर इडियम—कहना ठीक होगा कि दीदी अब दिन के तीन तिहाई चूल्हे चक्की में बिताने लगी है। महत्वपूर्ण विषय पर आता हूं, अभी परसों यानि इस बीच कुछ समय पूर्व स्टेशन के प्लेटफार्म पर इस अकिंचन को कोमली देवी के दर्शन लाभ हुए। दूसरे दर्जे में बैठकर कहीं उत्तर की ओर जा रही थी। साथ कोई बड़ी मूंछों वाला दीर्घ कार्य व्यक्ति भी था। यह कौन रहा होगा उसकी कल्पना आप ही कर लें उसने मुझे जब ऐंजी कह कर पुकारा और आपके बारे में पूछा कि कहां है। इतने में मूंछों वाले राक्षस ने अपनी तोंद पीछे वाली खिड़की से निकल कर इस सामने वाली खिड़की के पास ला पटकी। उस ललना ने तत्क्षण बात बदल कर पूछा कि अमरत कहां है तन्वंगी के सुडौल शरीर पर अपनी दृष्टि प्रसारित कर रहा था कि धूम्रशकट अपने में रुदन भर कर मेरी आंखों से खिसकने लगा। मैंने भी उसका साथ देते हुए कहा कि "जीजाजी का विवाह हो गया है।" तो वह बोली—"जानती हूं। बस बात हो रही थी कि धूम्रशकट मुझे छोड़कर चला गया।"

निधि ने पत्र कई बार पढ़ा, मन ही मन मुस्कराकर उसे मोड़कर जेब में रख लिया।

काकिनाडा पहुंचते-पहुंचते ग्यारह बज गये। लक्ष्मय्या स्टेशन आये और निधि को घर लिवा ले गये। किसी सगे संबंधियों को न्योता न भेजने पर निधि पर उन्हें क्रोध आया। निधि को किसी अज्ञात भय ने घेर लिया। खाना खाकर लेट गया। पांच मिनट ही हुए थे कि भारतमाता ने उसके एकांत को भंग कर दिया।

1935 के गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट लागू होने के दिन थे।

अब इस बात पर प्रश्न उठा कि क्या किया जाय। नेताओं ने जनता को उकसाया —"उठो तैयार हो जाओ" और जनता ने पूछा था—"कहां के लिए।"

कोई इसका उत्तर न दे पाया था फिर भी उकसाने पर सभी आंखें मलते उठ खड़े हुए थे। एक दुबला पतला व्यक्ति हाथ में लकड़ी लिए आगे बढ़ रहा था। सभी उसके पीछे हो लिए।

आग में लकड़ी रखो तो लड़की जल जाती है। सरकार ने अपने नौकरों के हाथ लकड़ी दे कर इस यात्रा को रोकने के लिए भेजा। कहीं भी सभा होती लाठियां चलतीं। किसी के सोने का समय नहीं था। भूख प्यास से तड़पते ये भारतीय निद्रा को भूल चुके थे। तीन लोगों ने कमरे में आकर निधि को नींद से उठाया। कुटुंबराव कम्युनिस्ट, सुंदरम् सोशलिस्ट तथा अहोबलराव अनार्किस्ट थे। ये किसी को भी सोने नहीं देते थे। यही इनके जीवन का लक्ष्य था। निधि ने उनके आदेश को समझा, वह उन्हें रोक नहीं पाया। इस नये एक्ट के कारण डाक्टरों के साथ जो अन्याय हुआ उसपर उन्होंने निधि से भाषण देने को कहा।

तीनों यह जानते थे कि उसी रात उसकी सुहागरात का मुहूर्त है, फिर भी उन्होंने जबर्दस्ती की। निधि ने कहा कि वह भाषण नहीं देगा, हां, चुपचाप सभा में जाकर बैठ जायगा।

चार बज चुके थे। सड़क के किनारे नगरपालिका की सीमा बनाती हुई एक तख्ती लगी थी पर जनता उसका तिरस्कार करके बैठ गयी। चारों ओर मानस समूह का अपार सागर लहराया था। एक कोई भाषण दे रहा था। भाषण की बातें ठीक समझ न पाने पर भी लोग रह-रह कर तालियां बजा रहे थे। बडी गड़बड थी। स्वराज्य और स्वतंत्रता अपने अस्तित्व को मनवाने के लिए शोर कर रही थी। इतने में एक दूसरे व्यक्ति ने आकर कुछ कहा उसे जबर्दस्ती खींचकर बाहर ले जाया गया। दूसरे ने उठकर भाषण देना शुरू कर दिया। दयानिधि उसे सुनकर आवेश में भर गया। तन में जोश उफनने लगा। रोम फड़क उठे। दिल कांप उठा। रक्त खौलने लगा और अब वह आदमी से एक शक्ति बन गया। समुद्र को सोख लेने वाला एक अग्नि का स्फुलिंग बन गया। अनायास ही कोई एक अजब शक्ति उसे आगे को ठेल ले

गयी। जाकर मंच पर खड़ा होकर भाषण देने लगा। वह भाषा या वादे थे या नहीं तर्क की कसौटी पर खरे उतरते थे। इन सब प्रश्नों के साथ अब उसका वास्ता नहीं रह गया था। मग्न हृदय का पत्थर के हृदय से सीधा टकराव था वर्षा के मिस, तूफान के मिस धरती को अपना रुदन सुनाने जैसा था निधि का भाषण। कीचड़ में फंसे कीड़े का चंद्र पर आंखे मारने जैसा था। यह सृष्टि का आत्मनिवेदन था। निधि ने कहा स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। मनुष्य की स्वतंत्रता साधारण भूख प्यास से भी ज्यादा महत्व रखती है। गुलामी की आदत पड़ जाने के कारण इस जनता को विद्रोह करना, क्रांति करना आता ही नहीं। अगर कहीं कोई अपनी स्थिति को जानने लगता है तो ब्रिटिश सरकार उसे खरीद लेती है। उसे बड़ी-बड़ी उपाधियां और ओहदे देकर उसे दूर देश किसी बहाने भेज देती है। इन सबके प्रलोभन में न पड़ कर उससे न लगाव रखने वाला नेता होता है उसे सरकार पकड़ लेती है। पेट के लिए बिक गये इन भारतीय नौकरों पर ही इन लोगों ने गुलामी को थामे रखने का भार सौंप दिया है। उन्होंने भारतमाता को एक रुपये में बेच दिया है, जिसमें से चार आने हमारे लिए छोड़कर शेष बारह आने वही लूट रहे हैं।

निधि के भाषण ने सभा को प्रभावित किया। निधि कह रहा था --"अपने अधिकारी के पैर तले मिट्टी की भांति जी रहा कर्मचारी, पानी बरसने की प्रतिक्षा कर रहा किसान, परीक्षा में उत्तीर्ण न हो पाने वाला विद्यार्थी, पांच महीने में भी एक बार वेतन न पाने वाला अध्यापक, निरुद्योगि पत्नी की फटकारों से त्रस्त होकर भागे पति सबके लिये आम सभायें रगमंच की भांति होती हैं। यहां आकर वे एक बार अपनी विशेष कठिनाइयां, अशांति, भूख सभी कुछ भुलाकर मानव में परिणत हो जाते हैं और आज़ादी की सांस लेते हैं।

अब डाक्टरों को ही लीजिये, चिकित्सा विभाग को लीजिये। सभी बड़े ओहदों पर गोरे हैं। हाथ पैर भी वही हैं। हम लोग तो उनके पैर के नीचे की धूल मात्र हैं। अंतर यही है कि धूल का एक कण जरा बड़ा है तो दूसरा छोटा। बस।

जनता में हलचल प्रारंभ हुई। बाहर किसी ने कुछ कहा। एकबारगी जनसमूह उठकर उस ओर जाने लगा। इसी गड़बड में नगरपालिका की सीमा लांघनी पड़ी और वो भीतर ठेले गये दूर से सोटियां, घोड़ो की टापें धूल उड़ती

दिखी। जनसमूह एक होकर पास सिमट आया मानो अपना व्यक्तित्व समौकर एक महामानव में परिवर्तित हो गया। जनसमूह को बिखर जाने के लिए चार मिनट का समय दिया गया। फिर सीटियां बजीं। सब इधर-उधर भागने लगे।

दयानिधि ने अपना भाषण जारी रखा—"मात्र राव बहादुर की उपाधि पाने के लिए मानवता, स्वतंत्रता, घर परिवार और आत्माओं को बेचकर जी रहे इन व्यक्तियों की गुलामी में जीते रहने से तो मरना बेहतर होगा।" फिर से सीटियां सुनायी दीं जन-समूह तितर बितर हो गया। चीखें—लाठियों की बौछार—आग को बुझाने के लिये प्रभुओं द्वारा खोजे गये यंत्रों की वर्षा—बस तीन मिनट लगे। स्वतंत्रता और गुलामी के बीच मूक टकराव हुआ। कुछ गिर पड़े, कुछ आहत हुए। आहत सूरज पश्चिमाकाश में लंगड़ाता हुआ उतरने लगा। गिरे हुए लोगों को रेत की बोरियों की तरह गाड़ियों में भर दिया गया।

अस्पताल के बिस्तर पर लेटा दयानिधि दुखी हो रहा था कि अपने भाषण में उसने यह क्यों नहीं बताया कि हमारे देश में उसे सरकार की दमन नीति के कारण आहत लोगों के लिए ही अस्पताल खोल गये हैं। बायें हाथ की कोहनी और बाईं आंख के ऊपर माथे पर दो चोटें पड़ी थीं। शीशे में अपना मुंह देखकर हंसी आ गयी। उसने सोचा देश के लिए त्याग का अर्थ ऐसा कुछ होगा शायद।

बाहर गाड़ी रुकने की और किसी के उतरने की आवाज़ आई। अमृतम् भीतर आई और बिस्तर के पास चौकी खींचकर बैठ गयी। उसके पति का मौसेरा भाई शंकरम् भी साथ आया था। अमृतम् बोली—"जग्गू ने बताया था। मैंने सोचा चलो शादी के वक्त भी नहीं आ पायी। तुम्हें देखने का जी चाहा तो शंकरम् को साथ लेकर चली आयी। वे भी आने वाले थे पर तहसीलदार ने वहीं डेरा डाला है सो उन्होंने मुझे देख आने को भेजा है। यह हुलिया कैसी बना रखी है। सब सुन चुकी हूं—हाय रे। समय कैसा बदल गया है अमृतम् ने तर्जनी नाक पर रखते हुए कहा। अमृतम् अब काभी हृष्ट पुष्ट दीख रही थी। बैंजनी साड़ी—बाहों से सटी लाल फूलों की छापे वाली खद्दर की चोली—बिखरी बालों की लटें—चोटी कुल मिलाकर उसके व्यक्तित्व को

पूर्णता प्रदान कर रही थी। चेहरा कुछ कुम्हला गया था पर उसमें एक सौंदर्य भरा था।"

अमृतम् को देखते ही निधि संतोष से भर गया। लगा कि उसके घाव भर गये है। खून दौड़ने लगा है पर उसमें ताजगी की कमी महसूस हुई। अमृतम् को देखकर उसे लगा भारतमाता को देख रहा है, उसे हंसी आ गयी।

"जीजा जी तुम्हारे लिए एक भेंट लायी हूं। बूझो तो क्या है ?" बड़ी ही अदा से उसने पूछा। नीले रंग के मुंह में दातों की पंक्ति नक्षत्र माला की भांति चमक गयी।

"चावल की फेरनी लायी होगी।"

"उहूं।"

"अनरसे होंगे नहीं तो।"

"बिलकुल नहीं।"

"अब तुम्हीं झटपट कह डालो—कहने की क्या ज़रूरत है हाथ में पकड़ा दो न।"

"इंदिरा को साथ लायी हूं।"

निधि ने आश्चर्य से आंखें फैलाईं और उठकर बैठने का प्रयास करने लगा पर बैठ न पाया। लेटा ही रहा।

"रेल से उतर कर सीधे तुम्हारी ससुराल पहुंचे। दस मिनट भी नहीं हुए कि पुलिस वाले ने समाचार दिया कि लाठी चली थी, तुम्हें मार लगी है और तुम अस्पताल में हो। कैसे हैं तुम्हारे ससुरजी भी ज़रा तो ख्याल करते कि दामाद है।"

"अगर ये ही सब ख्याल करेंगे तो दूसरे दिन नौकरी से हाथ धोना पड़ेगा। दौरे पर आये तहसीलदार साहब को छोड़कर तुम्हारे पति क्यों नही आ पाये ? नौकरी का मतलब ही होता है बिक जाना। कर्तव्य पालन में भाई, बेटा दामाद का कोई स्थान नहीं। स्थान देने वालों को दूसरे ही दिन नौकरी से निकाल दिया जाता है।"

"हां तुम्हारा कहना ठीक है। देखती हूं न, चकबंदी के दिनों में तो हमारे इनको खाने पीने का भी ध्यान नहीं रहता।"

"मामूली वक्त में ही नींद नहीं आती बेचारों को, तो चकबंदी के वक्त

पूछना ही क्या ?'' निधि बोला।

''उंह जाओ भी, फिर शैतानी की बातें कहने लगे। मार खाकर भी मसखरापन नहीं गया। हां, तो क्या बता रही थी—याद आया पुलिस वाले ने खबर दी तो मैंने पूछा ससुर जी कहां हैं। तो वह कोई जवाब न दे पाया। तुम्हारी सास ने भी तुम्हारी पिटायी पर जरा भी शोक प्रकट नहीं किया। मेरा दिल नहीं माना। देखने को जी तड़पने लगा। इंदिरा से भी मैंने साथ आने को कहा। उसने मां का मुंह दस बार देखा फिर आज्ञा लेकर मेरे साथ आयी है।''

''कहां है वह ?''

''बुलाऊं ? इंदिरा।'' कहकर दो बार आवाज़ दी।

बाहर से कोई उतर नहीं आया तो शंकर को उसे लिवा लाने को बाहर भेजा। शंकरम् ने बाहर जाकर चारों ओर देखा पर इंदिरा वहां नहीं थी। शंकरम् भीतर वापस आ गया ''बड़े आश्चर्य की बात है—मैंने अपने साथ भीतर आने को कहा तो वह वहीं खड़ी होकर बोली पहले हम जायें फिर वह बाद में चली आयेगी। ज़रा सी देर में न जाने कहां गुम हो गयी ?''

''शायद कोई परिचित दिख गये होंगे दूसरे वार्ड में न गयी हो।''

''ठहरो मैं देख आती हूं।'' अमृतम् बाहर गयी।

निधि को लगा वह एक सपना देख रहा है। तो क्या ससुर जी को उसके भाषण की बात मालूम थी। जान-बूझकर ही उन्होंने यह कैसा काम करवाया ? वे किसको अधिक तरजीह देते हैं, रायबहादुर के खिताब पाने को अथवा बेटी के सौभाग्य को ? निधि को लगा कि इसी प्रश्न के समाचार पर उसका भविष्य निर्भर है। आंख पर खून का एक कतरा चू पड़ा और आंसू के साथ मिल गया।

पांच मिनट में अमृतम् आश्चर्य सहित वापस आयी। इंदिरा कहीं नहीं थी, अलबत्ता अस्पताल के एक लड़के ने बताया था कि उसे कोई सज्जन आकर गाड़ी पर वापस लिवा ले गये हैं। ''बड़ी विचित्र बात है, है न जीजाजी। कौन होगा वह ?'' अमृतम् ने पूछा।

''बात बिलकुल साफ हो गयी है। ससुरजी ने पुलिस की गाड़ी भेजकर बेटी को वापस बुलवा लिया है। मुझ दामाद के साथ संबंध रखना उनकी नौकरी के लिए खतरनाक है।''

"कैसे भला ?"

"तुम नहीं जानती। सरकारी नौकरों के कोई भी दूर का रिश्तेदार अगर राजनैतिक मामलों में दखल देता है तो उन्हें सरकार को जवाब देना पड़ता है। ये सभी नौकर पेट के लिए अत्याचार करते हैं। यह जानते हुए कि वह घोर अत्याचार कर रहे हैं इसके लिए वह चुपचाप भगवान की प्रार्थना करते हुए पूजादान करके अपने पाप का परिहार कर लेते हैं।"

"मैं नहीं मानती कि ऐसे भी लोग होते होंगे।" अमृतम् बोली।

"मैं भी नहीं मानता था पर अब उसका अनुभव हो रहा है।" कुछ देर तक दोनों मौन रहे ? अंधेरा हो चला था। दवाइयों की विचित्र महक भर उठी थी चारों ओर। शंकरम् दीवार से लगकर बैठा ही था कि अमृतम् ने उसे बाहर भेजा कि जाकर कैरियर में खाना और फ्लास्क में दूध ले आये। अमृतम् एकांत में निधि से कुछ कहना चाहती थी, शब्द गले तक आकर अटक गये। दयानिधि आंखें बंद कर सोचने लगा। इतने में सुंदरम और कुटुंबराव आ गये। कुटुंबराव ने पूछा—"जाकर माधवय्या के मुंह में चारा डाल आऊं ?" इस पर सुंदरम् ने कहा—"सूखी घास देना ताकि मैं जाकर उसमें आग डाल सकूं।"

निधि बोला—"मेरे लिए अब तुम लोग बंदरों-सी हरकतें मत करो। अब मुझे अपनी हालत पर गर्व और आनंद हो रहा है। दुख सहने में स्वार्थ का त्याग हो जाता है, तभी मुझे लगता है कि मनुष्य दुख को सह लेता है।"

दुख में अगर वैराग्य की भावना हो तो उसमें से कुछ अंश अपने ससुर को दे देना तुम्हारा कर्तव्य है। ऐसा कोई रास्ता ढूंढो कि उन्हें भी तकलीफ पहुंचे।" कुटुंबराव ने व्यंग्य किया।

सुंदर ने कहा—"तमाशा तो देखो भाषण देने वालों में से बहुतों को पकड़ कर जेल में डाल दिया गया, पर उस फेहरिस्त में निधि का नाम नहीं था।"

"अब पर्दे के पीछे लड़ने और दिल की भड़ास निकालने से कुछ फायदा नहीं। जो कुछ पूछना है चलो वहीं चलकर सामने खड़े होकर के पूछेंगे उनसे।" कुटुंबराव ने कहा।

इंदिरा के आने और उसे बिना देखे ही पुलिस द्वारा लिवा ले जाने की बात निधि ने मित्रों को बतायी। सुंदरम जल उठा। वह बोला—"इंदिरा

को अक्ल नहीं थी क्या ? जबर्दस्ती उसे कौन ले जा सकता था उसकी इच्छा के विरुद्ध ? लोग उनके मुंह पर थूकेंगे कि…"

निधि ने पलकें झुकाकर कहा—"मुझे किसी से पूछकर जानने की आवश्यकता महसूस नहीं होती और न ही मुझे कोई शंका रह गयी है। सब कुछ साफ हो गया है। मुझे तो लगता है कि मैं हल्का हो गया हूं। एक बोझ मेरे सिर से उतर गया है। लग रहा है निर्मल प्रशांत हृदय वनप्रांत में पेड़ के नीचे एक सरोवर जैसे सब कुछ दिख रहा है अब उसमें पत्थर क्यों फेंकते हो ?"

"भाई साहब, सरोवर में मेंढक और मछलियां भी हैं और तुम्हारा बेचारा मन सरोवर में उठती लहरों के बीच हिचकोले खाये बिना नहीं रह सकता।" सुंदरम ने उपमा देकर दृष्टांत पूरा किया। दोनों माधवय्या से मिलकर फिर वापस आने का वायदा करके चले गये। डाक्टर और नर्स आये, जांच की और वे दोनों भी चले गये। अमृतम् आकर पास बैठ गयी और पूछा, "जीजाजी, मैं घर जाकर इंदिरा को देख आऊं ?"

"देख तो आयी हो।"

"वह अलग किस्म का देखना था। बेचारी तुम्हारे बारे में घबरा रही होगी। सास जी से बात करके—।"

"कौन सी बात करने को रह गयी है ?"

"क्या है जीजाजी, कैसी बातें करने लगे हो। सुहागरात के लिए क्या कोई दूसरा मुहूर्त रखोगे ?"

"अमृतम् ! हमारे रास्ते अलग-अलग हो गये हैं। मुझे नहीं लगता कि अब ये जुड़ेंगे।" कहता हुआ निधि आहिस्ते से बैठ गया।

"ऐसी अशुभ बातें मुंह से मत निकालो।"

"मां-बाप की इच्छाओं को पूरी करती हुई इंदिरा पलकर बड़ी हुई है उसका अपना कोई व्यक्तित्व नहीं है। उनके सुख के लिए वह अपना स्वार्थ बलि चढ़ा देगी—यही नहीं, हमारे संबंध टूट जाने के और भी गहरे कारण हैं उसके परिणाम अभी सब समझ नहीं पायेंगे।

"मतलब ?"

"हमारे आदर्श परस्पर भिन्न हैं। उन्हें सिर्फ चाहिए पैसा, ऊंचे ओहदे

वाली नौकरी और उससे प्राप्त गौरव—उपाधियां—दुनिया में नाज, यश कमाना, घर-बार, जमीन-जायदाद, बैंक-बैलंस ।"

"इन्हें कौन नहीं चाहता । सभी इनकी चाह करते हैं ।"

"मानता हूं कि सभी इसकी चाह करते हैं और चाह करनी भी चाहिए । पर इन्हें पाने के लिए कुछ लोग आत्मविश्वास, न्याय का पक्ष और सच्चाई को नहीं छोड़ सकते । सरकार द्वारा किये जा रहे अत्याचार अन्याय के इतिहास को जानने वाला कोई भी युवक इस अत्याचार का सहभागी नहीं हो सकता । सत्याग्रह में शामिल होकर अकिंचन और गरीब व्यक्ति की भांति रह जाना वह पसंद करेगा और जरूरत पड़े तो मर भी जायेगा, पर अत्याचारी की गुलामी स्वीकार नहीं करेगा । माधवय्या का दक्षिण मार्ग है तो हमारा उत्तर मार्ग, इसलिए परस्पर विरोधी दिशाओं में जा रहे रास्ते कभी मिल नहीं सकते ।"

अमृतम् काफी सोचने के बाद बोली—"इन सबकी कल्पना करना ही दुखद है । सब अगर तुम्हारे जैसा सोचते रहें तो सोचो एक दिन भी जिंदा रह पायेंगे ।" दोनों एक दूसरे को देखकर रूखी हंसी हंस दिये और फिर मौन हो गये । कहीं-कहीं मतभेद होने पर भी प्रधान विषय पर एकमत वाले वार्तालाप की भांति उनकी बातचीत थी । वह जहां से निकली वहीं जाकर रुक गयी । इतने में शंकरम् टिफिन कैरियर लेकर आ पहुंचा । अमृतम् ने कोने में बैठकर खाना खाया और हाथ धोकर वह माधवय्या के घर जाने को तैयार हुई । निधि ने उसे रोका । दोनों में फिर वादविवाद शुरू हो गया । तभी एक व्यक्ति ने आकर निधि को एक चिट्ठी पकड़ाई और दूर जाकर खड़ा हो गया । निधि ने पत्र लेकर उसे भेज दिया । अमृतम् ने पत्र देखा तो उसकी समझ में नहीं आया । अंगरेजी में लिखा था । निधि ने रोटी खाते हुए कहा—"बहुत मुश्किल से आ पायी हो तो उसका मज़ेदार स्वागत हुआ ।"

"ये सब तकल्लुफ तो पराये लोग अपेक्षा करते हैं, मैं परायी थोड़े ही हूं ।"

"गौरव-सम्मान ठीक तरह से न हो तो अपने ही पहले नाराज हो जाते हैं ।"

"ऐसे लोग पूरे अपने नहीं होते, अधूरे अपने होते हैं ।"

"तुम मेरा इतना ख्याल रखती हो अमृतम्, मैं उसके बदले में कुछ भी

प्रतिफल देने में असमर्थ हूं।"

"बस मैं एक ही प्रतिफल चाहती हूं कि तुम हमेशा-हमेशा सुखी रहो।"

"मेरी समझ में नहीं आ रहा कि एक व्यक्ति के सुख के लिए क्यों इतनी तकलीफ उठाये। वह अपने सुख की परवाह क्यों नहीं करता ?"

"अपने सुख से वंचित लोगों को क्या दूसरों के सुख से सुखी होने का अधिकार नहीं है ?"

निधि अमृतम् की बातों को तौलने लगा। उसके जीवन में उसे शायद सुख न मिला हो। जाने क्यों नहीं मिला। तो क्या जो संतोष और तृप्ति वह प्रकट करती है, सब झूठा है ? मात्र दिखावा है ? जाने वह किस चीज को पाना चाहती है और क्या खोज रही है ? पूछूं क्या ? पर निधि को पूछने का साहस नहीं हुआ।

"चिट्ठी किसकी थी बताया ही नहीं तुमने।"

"माधवय्या ने लिखी है। उन्होंने मुझे क्या लिखा है ? मुझे फौरन कहीं दूसरी जगह चले जाने को कहा है।" निधि ने कहा कि यह चिट्ठी वह पुलिस के ऊंचे अधिकारी के पास भेज देगा।

"अगर तुम यह काम करोगे तो उनकी नौकरी चली जायेगी ?"

"यही तो मैं चाहता हूं।"

"ऐसा मत करना, जीजाजी।"

"अमृतम्। माधवय्या देश की भलाई तो कर नहीं पाया और आत्म-वंचना भी। कम-से-कम मुझे पकड़वा कर अपना कर्त्तव्य निभाते, तो मैं खुश होता। सचमुच कुछ दिन तक जेल में रहने का मन करता है।"

"उनके पेट पर लात मारने से तुम्हें क्या मिल जायेगा ?"

"न्याय की रक्षा होगी। दामाद को छुड़ा लेने के पक्षपात की निंदा से तो नौकरी जाना अच्छी बात होगी।"

"लगता है सचमुच ही चिट्ठी तुम पुलिस में दे देने को उतारू हो गये हो। ऐसा मत करना, हां।"

"तुम्हें उन पर इतनी सहानुभूति क्यों हो रही है ?" निधि जानना चाहता था कि इसमें अमृतम् अपनी अच्छाई साबित करना चाहती है अथवा कोई महत्वपूर्ण कार्य कर डालने का समाज सुधार करने वाले व्यक्ति का सा

अभिमान पाना चाहती है।''

"कुछ नहीं, इस दुनिया में लोगों के स्वभाव विचित्र प्रकार के होते हैं, इतने कि तुम उनकी गिनती भी न कर पाओ। उन सबको सुधारने मात्र से न्याय की रक्षा हो जायेगी ? कई लोग हमें धोखा देने की कोशिश करते हैं, पर अंत में स्वयं धोखा खा जाते हैं। कोमली की ही बात लो न ?''

"कोमली ने किसी को धोखा नहीं दिया। कोमली यह भी नहीं जानती कि अच्छा आचरण क्या है ?''

"जीजाजी, मैं तुमसे एक बात बहुत दिनों से पूछना चाहती थी। अन्यथा न लो तो पूछूं ?''

"जरूर पूछो—तुम जो पूछना चाहती हो मैं जानता हूं।''

अमृतम् ने आश्चर्य किया और बोली, "अच्छा, प्रश्न से पहले समाधान दे दो।''

अमृतम् तुम्हारे पास मेरा कोई रहस्य छुपा नहीं है। हर कोई अपनी अंतरंग बातें किसी एक से तो कहता ही है। वह आज तुम्हारे सामने रखना पड़ा।''

"बातें मत बनाओ। पुरुष अपनी अंतरंग बातें स्त्रियों से क्यों कहने लगे ? क्या मैं इतना भी नहीं जानती।'' अमृतम् ने कह तो दिया। निधि की ओर एकटक देखकर फिर आंखें दिवाल पर कीड़ों और छिपकली की ओर फेर लीं।

"नहीं अमृतम्, ऐसी बात नहीं। वह इसलिए नहीं कहता कि सुनने वाला उस पर विश्वास नहीं करता। बतायी हुई बात की टीका टिप्पणी न करके पूर्ण संवेदना के साथ समझकर उसको सहभागी बनाने वाला जब तक नहीं मिलता हमारे भीतर के सत्य को छिपा कर रखना पड़ता है। ऐसे व्यक्ति जीवन में कभी मिलते ही नहीं हैं। सहभोक्ता न मिलने वाले का जीवन विषादमय हो जाता है।''

"अब देखो असली बात को टाल गये न ? कोमली के प्रति तुम ऐसे क्यों हो गये हो ?''

"ऐसे का मतलब ?''

"मैं नहीं जानती ?''

"अच्छा यह बताओ कि तुम्हारा प्रश्न क्या है ? यही न कि कोमली के साथ मेरा शारीरिक संबंध है या नहीं ? तुम जानती हो कि मेरा उसके साथ ऐसा

कोई संबंध नहीं है। फिर भी तुम मुझे तंग करने के लिए पूछ रही हो। और मुझे उसकी सच्चाई प्रमाणित करने के गुर नहीं आते।" निधि ने कहा।

अमृतम् का चेहरा विषाद से भर गया। स्त्री की असहायता उसकी आंखों में झलक आयी।

"ऐसा मत सोचो, जीजाजी। मैं यह जानना चाहती थी कि तुम कोमली को कितना चाहते हो। तुम्हारा दिल दुखाने का तो सच मानो बिलकुल मेरा उद्देश्य न था। अब अगर बुरा लगा तो माफ कर दो। ये बातें पूछूंगी नहीं।"

स्त्री जब इस प्रकार बोलने लगती है तो वह पर्दे के पीछे हो रहे नाटक का पात्र बन जाती है। हम उसे सुन सकते हैं, जान सकते हैं पर उसको समझ नहीं सकते।

"ऐसे वक्त अगर बुआजी होतीं तो तुम्हें थोड़ा धीरज दे सकती थीं।" अमृतम् ने बात को दूसरा रुख दिया। अपने अनुभव से जानकर अमृतम् ने इस अस्त्र का प्रयोग किया था। उसके बाद अब वस्तुस्थिति के प्रति कर्तव्य पर विचार विमर्श हुआ। निधि को अमृतम् ने अपने साथ अपनी सुसराल आने को कहा।

"तुम्हारे वो कुछ अन्यथा न सोचेंगे?"

"जाओ भी कैसी बातें करते हो?"

"मैं पिताजी के पास बंगलौर जाऊंगा और तुम कल सुबह अपने घर की गाड़ी पकड़ना।" निधि के लिए माधवय्या ने जो कमरा दिया था उसमें अमृतम् और शंकरम् के सोने की व्यवस्था हुई। गाड़ी सुबह पांच बजे जाती थी।

स्टेशन जाते वक्त एक बार फिर देख जाने का वादा कर अमृतम् और शंकरम् घर चले गये।

दूसरे दिन सुबह चार बजे जब अमृतम् अस्पताल आयी तो निधि सो रहा था। अमृतम् धीरे से सिरहाने माधवय्या की चिट्ठी ढूंढ़ने लगी। चिट्ठी लेकर उसने चोली में खोंस ली और फिर निधि को जगाया और उससे विदा ली। "हमारे घर जरूर आओगे। पिताजी को भी लेते आना। जग्गू भी दस दिन में आ जायेगा। याद रखना हमें।"

निधि उठा उसने आंखें पोंछीं। बाहर गाड़ी वाला जल्दी कर रहा था। निधि ने कहा—"जरूर आऊंगा पर मैं अगर न भी आ पाया तो जब मैं तुम्हें

बुलाऊं तुम आ सकोगी न ?"

अमृतम् ने शंकरम् को गाड़ी पर चलने का आदेश दिया और उसे भेजकर धैर्य से बोली—"हां हां।" फिर हंस दी और जाकर गाड़ी में बैठ गयी। भारतमाता के हाथ में बंधी जंजीरों की खड़खड़ाहट की तरह बाहर से अमृतम् की चूड़ियों की खनक सुनायी दी।

बिस्तर के नीचे उसने ढूंढ़ा। पत्र नहीं था। निधि को हंसी आई। मन-ही-मन बोला—"बड़ी विचित्र औरत है अमृतम्।"

असुंदर

दयानिधि ने एलूर में प्रैक्टिस आरंभ की। जमीन बेचकर जो रुपये दशरथ-रामय्या ने भेजे थे उससे निधि ने दवाखाने के लिये आवश्यक सामग्रियां और दवाइयां खरीदीं। किराये पर जो घर लिया था, वह काफी बड़ा था—एक बड़ा हाल, पीछे बरामदा और दो कमरे। बरामदे में से छत पर जाने के लिए सीढ़ियां थीं, पिछे काफी चौड़ा और खुला आंगन था जिसमें फूलों की क्यारियां थीं। केले के पेड़ थे और चारों ओर चाहरदीवारी थी। सरे बाजार में न होकर, उससे लगी गली में था। एक कमरे में दवाइयों की अल्मारी, मेज, सोफासेट और आराम कुर्सी पड़ी थी। रामदास नामक एक व्यक्ति को कंपाउंडर नियुक्त कर लिया था। खाना होटल से मंगाकर खाता था।

निधि जानता था कि उसका जीवन अधूरा है। माधवय्या के पास से कोई पत्र नहीं आया इंदिरा के बारे में पूछताछ का जो पत्र लिखा उसका भी कोई उत्तर नहीं मिला। अलबत्ता खबर अवश्य भेजी कि स्वयं आकर लिवा ले जाय। एक बार उसने इसी आशय की चिट्ठी भी लिखी। स्वयं जाकर ससुर से वादविवाद करके शोर मचाकर इंदिरा को लिवा लाने के लिए न तो उसमें साहस था और न ही इच्छा थी। बहुतों ने पूछा कि पत्नी क्यों नहीं आई तो उसने झूठ बोल दिया कि वह मायके में पढ़ रही है, उसे बीमारी है। लोग अब उसके बारे में तरह तरह की बातें करने लगे। विलायत जाकर पढ़ने के

लिए इसने ससुर से दस हजार मांगे थे । ससुर न दे पाये सो गुस्से से वह पत्नी को नहीं लाया, और अब उनसे अपना संबंध भी तोड़ लिया है । कुछ ने कहा विवाह से पूर्व किसी दूसरी स्त्री से उसका प्रेम था । सभी अपने अपने अटकल को सच प्रमाणित करने के लिए आधार खोज रहे थे, पर उन्हें कोई लाभ न हुआ तो उदासीन हो गये । कुछ लोग तो सच्चाई जानने के लिए शोध भी करने लगे । समाज उस व्यक्ति को बिलकुल जीने नहीं देता जो सबकी तरह न जीकर एक अलगाव रखता है । सबकी भांति बीवी बच्चों के साथ गृहस्थी चलाना आवश्यक है । हां, वह संन्यास ले ले तो और बात है । वह आदमी को एक समाज के औसत व्यक्ति आचरण के बाहरी चिह्न दिखाते रहने पर दबाव डालती है । एक रोज क्लब में निधि का प्रकाशराव नामक एक व्यक्ति से परिचय हुआ । दोनों के पिता भी कभी मित्र रहे थे । प्रकाशराव ने वकील का लाइसेंस लिया था पर प्रैक्टिस अभी शुरू नहीं की । अभी उसका विवाह भी नहीं हुआ था । बातों बातों में प्रकाशराव ने अपनी बहन श्यामला का जिक्र छेड़ा । 22 वर्षीय बहन श्यामला का ससुराल जूजवीडु में था पर पति के साथ वह बंबई में रहती थी । पति वहां की फैक्टरी में नौकर था । श्यामला के मां बाप ने उसके पति को कई बार लिखा कि एक बार उनकी बेटी लाकर उन्हें दिखा दे, पर लगातार पांच वर्षों से वह कुछ न कुछ बहाना बना देता था । पत्नी को उसने मायके नहीं भेजा । प्रकाशराव एकाध बार बंबई जाकर उसे देख आया था । इस बीच प्रकाशराव के पिता बीमार पड़े और उन्होंने बेटी को देखने का आग्रह किया तो प्रकाशराव बंबई जाकर उसे लिवा लाया । आने के दूसरे ही दिन से श्यामला के व्यवहार में एक विचित्र परिवर्तन दिखने लगा ।

दुबली पतली तो थी ही पर खाना भी उसने छोड़ रखा था । जबर्दस्ती खाना खिलाने पर फौरन कै कर लेती थी । बड़ी ही विचित्र काम करती थी । कोयले को देखकर डर जाती थी पर गरम पानी वाले चूल्हे पर रखी देगची में खौलते गरम पानी को और नीचे जलते कोयलों को घंटों देखती रहती थी । कभी कभी बीच में चूल्हे को बुझा देती । अधजले कोयलों की पीस कर उसका काजल लगाती या उसे पाउडर की भांति मुंह पर पोत लेती या फिर पानी में मिलाकर उस पानी से नहाने लगती । कोई पूछे ऐसा क्यों करती है तो वह जवाब देती—"भूल से कर जाती हूं । ऐसे काम ।" पूजागृह में देवता

की मूर्ति घंटों लगातार देखती बैठती या फिर मिट्टी पानी में मिलाकर मूर्ति को लेप करती। जूजवीडु के वैद्यों में किसी ने कहा पिशाच चढ़ा है तो किसी ने कहा ओझे को बुलाओ तो दो मिनट में ठीक कर देगा। कोई बात करे तो बड़ी चतुराई और होशियारी से जवाब देती थी। प्रकाशराव को ओझाओं की बातों पर विश्वास नहीं था।

निधि ने पूछा—"बंबई के बारे में, पति के बारे में कभी उसने कुछ चिट्ठियों में लिखा था?" प्रकाशवराव ने बताया कुल मिलाकर गत पांच वर्षों में उसने चार पत्र लिखे थे जिसमें यही लिखा था कि सुखी है।

"पति के बारे में······।"

"विशेष तो नहीं। बस यही तो लिखती थी कि अच्छे हैं।"

"तुम बंबई गये थे वहां तुमने कुछ विचित्रता पायी थी?"

"मतलब?"

"तुम्हारे बहनोई का स्वभाव कैसा है?"

"मेरा अनुमान है कि कभी कभी पिया करते थे। श्यामला से मैंने पूछा तो हंस कर बोली थी नहीं तो, वह सब खाली बोतलें हैं।"

"उसका स्वास्थ्य कैसा था?"

"काफी हृष्ट पुष्ट और तंदुरुस्त था।"

"बच्चे हैं?"

"ऊंहूं।"

"गर्भ तो नहीं गिर गया?"

"मैंने पूछा तो नहीं।"

निधि ने श्यामला को देखने की इच्छा प्रकट की। दोनों को दूसरे दिन सुबह घर आने का निमंत्रण दिया। बोला—"यह न सोचना कि मैं कोई उपचार करूंगा—बस यों ही देखना चाहता हूं कुतूहलवश।"

दूसरे दिन सुबह प्रकाशराव श्यामला को ले आया। उसे देखते ही निधि को आश्चर्य हुआ पर उसने प्रकट नहीं किया। उसके लिए गये रिश्तों में श्यामला एक थी। प्रकाशराव इस बात को नहीं जानता था और श्यामला शायद पहचान नहीं पायी। सांवले रंग की थी और कद नाटा था दांतों की पंक्ति बहुत सुंदर थीं, बातें करती थी तो बहुत भली लगती थी पर वह चुप थी।

घर में आते ही शहतीरें और दीवारें देखने जांचने लगी । मेज पर रखी दवात खोलकर थोड़ी सी स्याही उसने अपने ऊपर डाल दी । पीले फूलों की छपी काली साड़ी गुजराती ढंग से पहनी थी पर सिर पर पल्ला नहीं लिया था । चोटी आगे करके उस पर स्याही लगायी और सूंघते हुए बोली "बहुत सुंदर खुशबू है ।"

निधि ने जांच की और बगल के कमरे में प्रकाशराव को बिठाकर फिर श्यामला के पास आकर पूछा—"बंबई तुम्हें कैसा लगा ?"

"मुझे अच्छा लगे तो तुम क्या करोगे ?"

"शहर सुंदर है ?"

"श्यामला हंसने लगी और चोटी को अपने गले में लपेट लिया । फिर उठ कर कमरे में चारों ओर घूमकर सूंघने लगी । निधि ने पूछा—"तुम्हारे घर का किराया कितना है ?"

"एक आदमी का एक रुपया ?"

"क्या मतलब ?"

"कुल चालीस लोग हैं ।"

"तो कुल चालीस रुपया किराया है । तुम्हारे खाने पीने पर क्या खर्च होता है ?"

"घोड़े के लिए जितना होता है ?"

"खैर । तुम्हारे पति कितने बजे काम पर जाते हैं ?"

"घर में इतवार को एक घंटा ।"

"रोज कितने बजे घर आते हैं ?"

श्यामला ने इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया । निधि ने फिर पूछा—"तुम्हारे पति कैसे हैं बताओगी नहीं ?"

"कारखाने के भोंपू जैसे ।" कहकर हंसने लगी और फिर बोली—"आप नहीं जानते उन्हें शरीर से कोयले की बू आती है—कोलतार सी बातें करते हैं । लगता है कारखाने का भोंपू बज रहा है । हंसते हैं तो लगता है पत्थर के कोयले लुढ़क रहे हैं ।"

निधि ने श्यामला के करीब जाकर पूछा—"क्या तुम्हें नींद आती है ?"

"मैं जगती ही नहीं ।"

"सपने देखती हो ?"

"बंबई के सपने ।" धीमे से बोली ।

"एक सपना कह सुनाओ न ?"

"बंबई चलिए तो सुनाऊं ।"

"जाकर कहां रहूंगा । तुम्हारे घर में चालीस तो पहले से मौजूद हैं । मेरे लिए कहां होगी जगह ?"

"मेरे कंधों पर ।" विकृत हंसी हंसने लगी । इतने में प्रकाशराव पीछे से आ गया । उसे देखते ही श्यामला चिल्लाई—"बाप रे । वह देखो बंबईय्या आ गया है ।" कहती हुयी भीतर जाने को उद्यत हुई । निधि धीरे से जाकर सीढ़ियों पर बैठ गया । प्रकाशराव ने उसकी ओर प्रश्नार्थ दृष्टि से देखा—"क्या कहते हैं ?"

"अभी नहीं बताऊंगा । बताऊंगा तो तुम हंसोगे और विश्वास भी नहीं करोगे । सो पहले मैं सोचकर एक निर्णय पर आ जाऊं तब तुम्हें बताऊंगा । वह पहले जैसी पूर्ण स्वस्थ्य स्थिति में आ सकती है । जान का कोई खतरा नहीं है, निश्चिंत रहो ।

"हमारे घर आकर उसकी दवाई कर सकोगे ?"

"नहीं उसे यहीं रहना होगा ।"

"अच्छा रख तो दूंगा पर किसी से कहना नहीं । क्या बात है, मुझे नहीं बताओगे ?"

"जरूर बताऊंगा लेकिन किसी से कहना नहीं । यह असुंदरता का रोग है जिससे वह दुखी है ।" दोनों भीतर गये । प्रकाशराव उसे निधि के घर दस दिन रखने को राजी हो गया । पिछवाड़े की तरफ आधा बरामदा छोड़कर उसके पीछे का कमरा श्यामला को दे दिया । पूरे कमरे की सजावट उसने बदल डाली । दीवारों पर आधे तक नीला रंग पुतवाकर नीचे हरे रंग का कागज चिपकवाया । चारों ओर सुंदर चित्र टांग लिए । दीवारों के पास ऊंची बेंचे डालकर उन पर फूलों के गमले रखवाये । जमीन पर नीले रंग की कालीन बिछवायी । एक कोने में पलंग डलवाया ताकि खिड़की में से पेड़ दिखते रहें । बरामदे में बैठने के लिए कुछ कुर्सियां रखवायी और उनके बीच में गोल मेज । पास एक छोटी सी अल्मारी

में पुस्तकें रखवाईं । श्यामला इनके बीच एकांत में अपना समय बिताती थी.। दोनों समय खाना दिया जाता । सिलायी कढ़ायी की चीजें कमरे में रखवाईं। रंगों के डब्बे ब्रुश, प्लास्टर आफ पेरिस की कुछ मिट्टी। मोम की एक लोई बनाकर एक ओर मेज पर रख दी । बीच में आकर श्यामला की हरकतें देखता उससे दो चार बातें करके चला जाता था । पहले दिन वह आंगन से मिट्टी उठा लायी और उसे पलंग पर फैला दिया । निधि ने पूछा—"पलंग बाहर डलवा दूं ।"

श्यामलाल ने जवाब नहीं दिया और पलंग के नीचे जाकर लेट गयी और तकिया छाती पर रख लिया ।

"यहां तुम्हें अच्छा लग रहा है ना ?"

"यानि ?"

"तुम्हारे मन को आनंद मिलता है ?"

"..............."

"तुम्हारे पति को यहां बुलवा लें । दोनों यहीं रह जाना ।"

"बाप रे ।" घबराकर उसने आंखें मूंद लीं ।

"क्यों—क्या हो गया ?"

"सुनिये सुनिये तो उसे ?"

बाहर कारखाने का भोंपू बज रहा था । श्यामला उसे सुनते ही कांप उठी थी । निधि ने पूछा—"श्यामला ! तुम्हें गाना आता है ?" उसने सिर हिलाया तो निधि ने गाने को कहा तो वो गाने लगी—"मट्टी में बसने वाले हो रामय्या..."

"अरे । तुम तो बहुत अच्छा गा लेती हो । ग्रामोफोन मंगवाऊं ?" कह कर निधि ने नारायणराव के यहां से ग्रामोफोन भी मंगवाकर रखा ।

एक दिन श्यामला ने पूछा—"आपकी पत्नी कहां है ?" निधि को सूझा नहीं क्या जवाब दे । उसने यूं ही कह दिया बंबई गयी है ।"

"बंबई गयी है ? तो वह अब वापस नहीं आयेगी ?"

"क्यों ?"

"वह स्वर्ग है, वहां जाने वाले वापस नहीं आना चाहते ।"

तीसरे दिन श्यामला ने तोते की मांग की तो निधि ने एक तोता खरीद कर

पिंजड़े में रखकर कमरे में लटकाया। पर श्यामला एक तोते से खुश नहीं हुई तो निधि ने और दो छोटे तोतों को मंगवाकर उन्हें अलग पिंजड़े में रखा। श्यामला ने सबको एक ही पिंजड़े में रखने का हठ किया। यह हठ भी पूरी की गयी। तोते पहले तो चोंचें मार कर लड़ते रहे पर धीरे-धीरे एक पिंजड़े में रहने के अभ्यस्त हो गये। श्यामला नें फिर एक विचित्र जिद पकड़ी कि एक पिंजड़े में चालीस तोते रखे जायं। तव जाकर निधि श्यामला के आग्रह का कारण समझ पाया। उसने श्यामला से कहा कि तोतों को पकड़ने लोगों को भेजा है। कुछ ही दिनों में आ जाएंगे। श्यामला उस पिंजड़े से खेलती और उसमें मिट्टी डालती। कभी मिट्टी में पानी मिलाकर पोतती, स्याही उड़ेल देती और कभी कभी तोतों को सलाइयों और सीकों से कोंचने लगती।

पांचवें दिन उसने रंगों से विचित्र शक्लें बनानी शुरू कर दीं। फैक्ट्री के भोंपू, मशीनें, लोहे की छड़ें, ये थीं उसकी बनाई तस्वीरें। फिर उसने कपड़े पर कुछ ऊट-पटांग काढ़ कर उसे पिंजड़े पर ढ़क दिया। उस दिन शाम को पांच बजे आकाश में चंद्रमा उग आया तो उसे देखती बैठी रही। इतने में निधि ने आकर पूछा—"चांद कैसा लग रहा है।"

श्यामला ने कहा—"अरे देखिये न चांद में भी कारखाना है। अरे वह रही लंबी सी उसकी चिमनी। उसमें से धुआं क्यों नहीं आता?"

"पहले आता था पर अब चिमनी खराब हो जाने के कारण नहीं आता।" निधि ने बताया। लेकिन श्यामला! एक बात बताओगी। तुम तोतों को कोंचती हो, मर नहीं जायेंगे।

"मैं तो उन्हें मार डालने के लिए ही कोंचती हूं—क्या आपको इतना भी नहीं मालूम।"

"तुम्हें उन पर इतनी ईर्ष्या क्यों?"

"उनके मरने से मुझे आनंद होगा।"

"उन्हें छोड़ दूं?"

"न न ऐसा मत करना, उनके बिना तो मेरा समय नहीं बीतेगा।"

"तुम्हारे पति को बुला भेजूं?" तुम्हारे लिए वे घबरा रहे हैं?

"सचमुच?"

"हां।"

"अच्छा बुलवा लीजिये।"

"देर हो रही है, उठकर पहले खाना खा लो, श्यामला।"

"आप भी मेरे साथ खाइये न ?"

दोनों बरामदे में बैठकर खाना खाने लगे। खाना खाकर निधि बाहर आया ही था कि रोज उसे दरवाजे पर खड़ी दिखी। रोज को नौकरी पर से हटा दिया गया था। निधि ने उसे अपने पास कंपाऊंडर की हैसियत से काम करने को कहा। उसने सोचा वह श्यामला की देख भाल भी कर सकेगी। रोज़ ने निधि के प्रस्ताव को मान लिया।

अपने कमरे में जाकर बैठा ही था कि रोज़ ने एक चिट्ठी दी जिसे कोमली ने पहुंचाने को कहा था। रोज ने विस्तार से कह सुनाया कि वह उससे कब, कैसे और कहां मिली ? कोमली ने लिखा था—

"आपको देखने की इच्छा हो रही है। अब मैं पहले की सी कोमली नहीं हूं मुझे जिसने अपने पास रखा है वह एक अध्यापिका रखकर मुझे पढ़ा रहा है। आशा है आपकी अमृतम् अच्छी होंगी। मैं आपके पास आऊं तो क्या अपनी पत्नी दिखाएंगे ? मुझसे आप बातें करेंगे ? मुझे रातों को नींद नहीं आती। नींद में हमेशा आपके ही सपने देखती हूं। पता नहीं ऐसा क्यों होता है। क्या आपको मैं याद आती हूं ? हां, अब याद क्यों आने लगी ? मैं फिलहाल ज़रा मुसीबत में हूं। जमीदार बिना बताये कहीं चला गया है। एक महीना बीत गया लौटकर नहीं आया मुझे आप कुछ रुपये भेज सकेंगे ? क्या मैं आपके पास आ जाऊं। कुछ सूझ नहीं रहा। आपको देखकर वापस चली जाऊंगी, नहीं तो मुझे बुखार आ जायगा।"

"तुम्हारे द्वारा पैसे भेजने के लिए कहा था ?"

"मनीआर्डर से भेजने को कह रही थी ?"

"किस मामले में फंसी है, तुम्हें कुछ खबर है ?"

"मुझसे नहीं बताया।"

"दवाइयों के लिए तो नहीं मांगा ?"

"मुझे नहीं मालूम।"

दूसरे ही दिन निधि ने दो सौ रुपये मनीआर्डर किये। उसे आ जाने के लिए लिखने का साहस नहीं कर पाया। फिर भी उस रात एकांत में बैठकर

कोमली के प्रति अपने भावों को जानने के लिए उसने एक लंबा सा पत्र लिखा। दूसरे ही दिन सुबह उठकर उसे पढ़ा पर उसे पत्र में लिखे अपने सत्य के प्रति शंका होने लगी। आखिर वह चाहता है क्या है—कोमली का शरीर। अपने आप से साक्षात्कार करने पर उसे उत्तर मिला। उसका शरीर पवित्र नहीं है, इस सत्य को भी वह सह नहीं पा रहा था। कोमली एक सौंदर्य है जो उसके शरीर को पवित्रता प्रदान करती है। वह माया है, भ्रम है। इस भ्रम की आकांक्षा करने के अलावा और कोई चारा नहीं। इस संसार को पकड़कर लटकने वालों के लिए भ्रम यथार्थ है। परलोक की चिंता करने वालों के लिए यह यथार्थ एक भ्रम है।" उसने अपने लिखे पत्र को फाड़कर फेंक दिया।

श्यामला कमरे में ग्रामोफोन पर बजते रिकार्ड के साथ खुद भी गा रही थी। वह उठकर उसके कमरे में गया। तोते चैं चैं कर रहे थे। श्यामला से उसने कहा—"अच्छा गाती हो, संगीत सीखोगी ?"

श्यामला गर्व से हंसी और बोली—सीखूंगी।"

"यहां तुम्हें अच्छा लगता है ?"

"यानि ?"

"यहां रहना चाहती हो या जाना चाहती हो ?"

"मुझे यह कमरा अच्छा नहीं लगता। कुएं की जगत पर एक कमरा बनवा दोगे ?"

दोपहर को ताड़ के पेड़ों की लकड़ियां मंगवाकर कुएं की जगत पर एक मंडप बनवा कर वहां कुर्सियां और चारपाई डलवा दी। श्यामला वहीं रहने लगी। नीचे घास पर लेटकर अपनी रामकहानी सुनाने लगी—कि बंबई नगर, वहां के लोग, भीड़ भाड़, शोर शराबा, मिलें इन सबसे उसे बहुत डर लगता है। पति उसे नैसर्गिक वातावरण नहीं दे पाया। पांच माह का गर्भ गिर गया। वह अपने अंतर का दुख किसी को सुना नहीं पाती। पति को सुनाया तो वह उसे समझता ही नहीं। उसे अपने जीवन के प्रति अधिक मोह था पर वह अपने आप पर अत्याचार करने लगी थी।

भोजन के बाद निधि अपने कमरे में चला गया। मानसिक ग्रंथियों और मनोविकारों पर उसने कभी किसी डाक्टर के भाषण सुने थे। तत्संबंधी किताबें

अल्मारी से निकालकर पढ़ने लगा। श्यामला का मानसिक रोग वह कुछ कुछ समझ पाया था। घड़ी ने नौ बजाये। दवाई बनाने वाले कमरे का दरवाजा बंद करने की आवाज आयी। शायद रामदास जा रहा था। रोज अपना बिस्तर ठीक कर रही थी। श्यामला के कमरे में निस्तब्धता थी। बाहर गाड़ी के रुकने की आवाज आयी। किसी ने दरवाजा खटखटाया। उसने जाकर दरवाजा खोला। वेंकटाद्रि सामने खड़े थे बोले—"इंदिरा आयी है।"

"भीतर बुला लीजिये।"

इंदिरा भीतर आयी और तख्त पर बैठ गयी। निधि ने सामान भीतर रखवाने को कहा। तो वेंकटाद्रि बोले "सामान कुछ नहीं लाये हैं।"

"भोजन करेंगे?"

"मैं रात को भोजन नहीं करता। बिटिया ने फल खा लिये हैं।"

रोज़ को कैरियर और फ्लास्क देकर होटल भेजकर नाश्ता और काफी मंगवाया। वेंकटाद्रि ने फलहार किया। "घर अच्छा है किराये पर लिया है न?"

"हां।"

"क्यों जी, मैं तुमसे बड़ा हूं इसलिए पूछता हूं ससुर के पास जाकर समझौता कर लेते और गौना करवाकर पत्नी को ले आते तो क्या बिगड़ जाता?"

"लड़ाई भी पहले मैंने कब की थी कि अब समझौता करूं?"

"तो फिर तुम क्यों नहीं जाते?"

"उन्होंने मुझे बुलाया कहां?"

"तुम्हें अपनी पत्नी लिवा ले जाना हो तो किसी के बुलाने की क्या जरूरत है?"

"वह भेजें तब न।"

"क्यों नहीं भेजते हैं, कभी सोचा है?"

"वह उन्हीं से पूछिये मैं क्या जानूं, अब आप ही बताइये अपनी बात। उन्होंने भेजा था या आप ही जबर्दस्ती ले आये।"

"वह मेरे पास थी। उसने कहा चाचा जी मुझे मेरे पति के पास ले जाओ सो ले आया हूं।"

"देखा न आपने। सब कुछ जानकर भी आप मुझी से क्यों प्रश्न करते हैं?"

"मान लिया कि मेरा भाई जरा पागल है। अब तुम पढ़े लिखे हो। बिगड़ती बात को संभाल लेते तो ?"

"मुझे क्या करने को कहते हैं ?"

"सुना है कांग्रेस के मेंबर हो। बस उसमें से नाम कटवा लो। अब उसमें रहकर भी तो क्या मिल जायगा तुम्हें ? लाठी की मार ही तो मिलेगी।"

"उसका इंदिरा की गृहस्थी के साथ क्या नाता है मेरी समझ में नहीं आता। बड़े हैं ससुर जी खुद ही अपना हठ छोड़कर कांग्रेस के सदस्य बन जाते तो झगड़ा ही नहीं रहता।"

"दोनों ही अपने जिद पर अड़े रहोगे तो काम कैसे चलेगा ?" वेंकटाद्रि बुड़बुड़ाये। इतने में रोज़ काफी ले आयी। निधि ने प्याली में काफी डाल दी। वेंकटाद्रि ने लेने से मना कर दिया—"अभी हम यहां तक नहीं पहुंचे हैं। तुम दोनों सेवन करो।" इंदिरा और निधि ने काफी पी।

"हमें कल सुबह पांच बजे की गाड़ी पकड़नी है। तुम भी हमारे साथ चलोगे तो तुम्हारे ससुर खुश होंगे। अब आपस में बात कर लेना।" वेंकटाद्रि बोले।

"आप उनकी तरफ से दूत बनकर आये हैं या फिर आप तमाशा देखने आये हैं ?" निधि ने पूछा।

"ब्याहता बीवी को छोड़कर अकेले रहने वाले को घर में क्या तमाशा देखने को मिलेगा" वेंकटाद्रि ने तिरस्कार के भाव से कहा।

"तो आप भी यही सोचते हैं कि आप भी बिलकुल गलती पर नहीं हैं।"

"अब पिछली बातों को क्यों कुरेदते हो। आगे की बात सोचो। पुरुष का क्या है ? वह तो जैसे भी रह लेगा पर इंदिरा की बात तो सोचो।"

"आपका आशय स्पष्ट रूप से मेरी समझ में नहीं आया ?"

"स्पष्ट तो है और अधिक स्पष्ट कहने की आवश्यकता नहीं।"

"आप बड़े हैं। सचाई न जानकर जो मुंह में आये कह देना आपको शोभा नहीं देता।"

मैं मुंह भी बंद कर लूं तो दुनिया चुप नहीं रहेगी।"

"चाचाजी, चुप भी हो जाइये। और बातें करेंगे तो तकलीफ होगी।" इंदिरा ने वेंकटाद्रि को झिड़क कर उनके लिए बिस्तर बिछाया। खांसी रोकते हुए वे उस पर जा लेटे।

"तुम कहां सोओगी ?"

"चाहो तो वह दूसरे कमरे में चारपाई है।" निधि ने कहा। इंदिरा ने जम्हाई ली और उस कमरे में जाकर खटिया पर बैठ गयी। कमरे के बाहर बरामदे में निधि ने एक और खटिया बिछाई और उस पर एक तकिया डालकर स्वयं अपने कमरे में आराम कुर्सी पर बैठ कर किताब पढ़ने लगा।

"आप यहां सो जाइये मैं बाहर सो लूंगी।" इंदिरा बोली।

निधि ने कहा—"कोई बात नहीं, तुम वहीं सो जाओ सुबह जल्दी भी उठना है।"

इंदिरा ने अपना बिस्तर खोलते हुए पूछा—"तो क्या आप हमारे साथ नहीं आयेंगे ?"

"किस लिये आऊं ?"

"हां, आप क्यों आने लगे ?"

पास के कमरे में तोते आवाजें करने लगे। निधि ने किताब बंद कर रोशनी कम की। इतने में श्यामला चौखट पर आ खड़ी हुई और पूरे कमरे की परीक्षा की—"अभी आप सोये नहीं ? मेरे कमरे की बत्ती बुझ गयी है। मुझे डर लग रहा है। आइये न आप मेरे कमरे में।" कह कर श्यामला ने बत्ती जलाई और अचानक इंदिरा को वहां देखकर चौंकी, फिर चिल्लाती हुई बाहर चली गई। निधि ने लालटेन जलाकर श्यामला के कमरे में रखी। फिर उसे ले जाकर सुला दिया और वापस अपने कमरे में आ गया। इंदिरा तख्त के साथ लगी खिड़की के पास खड़ी थी।

"अभी सोई नहीं ?"

"नींद नहीं आयी, आप सो जाइये।"

"तुम क्या करोगी ?"

"बस यूं ही देखती रहूंगी।"

दो क्षण दोनों मौन रहे। वेंकटाद्रि खुर्राटे लेकर सो रहे थे। इंदिरा ने जाकर उस कमरे के किवाड़ पास लगाये और वापस आकर उसने निधि से पूछा—

"तो आप मुझे भविष्य में कभी भी लेने नहीं आयेंगे ?"

"..............."

"यह अंगूठी आप ही ने पहनायी थी उस दिन नहर के पास बागीचे में—याद है न ?"

"मैं दुष्यंत नहीं हूं।" इंदिरा फीकी हंसी हंस दी।

"हां—अब आपको मेरी क्या जरूरत रह गयी है।"

"तुम्हारा मतलब क्या है ?"

"आपको जिनकी जरूरत है वे सब अब आपके पास हैं।"

"अपने मन की कहो ; यह तुम्हारे मन की बात है या तुम्हारे चाचा रास्ते भर तुम्हें इस तरह कहने का पाठ पढ़ाते रहे ?"

"चाचाजी तक जाने की क्या जरूरत है। भगवान ने मुझे भी तो दो आंखें दी हैं ?"

निधि हंस दिया—"वह मेरी मरीज है बड़ी विचित्र कहानी है उसकी। तो यही एक शंका थी या और कुछ बाकी है ?"

"डाक्टर को अपने कमरे में बुलाने वाली को मरीज कहें तो कौन विश्वास करेगा ? खैर। अब तो दूसरी पुरानी मरीज भी तो आने वाली है।"

"मुझे गुस्सा दिलाने को कह रही हो या हंसाने के लिए ?"

"डाक्टर के पास से पैसा वसूलने वाली मरीज के बारे में कह रही हूं।"

"मेज पर पड़ी चिट्ठी पढ़ी होगी तुमने ?"

"क्यों इसमें क्या बुरा है ?"

"हां, बुरा है, असभ्यता की निशानी है।"

"इसके बारे में इस चिट्ठी को पढ़कर ही जानकारी नहीं मिली। शादी में भी सुनी थी बड़ी मजेदार बातें।"

"अब चुपचाप मुंह बंद कर सो रहो।"

"नागमणि, सुशीला कुछ कह रही थीं—सुना था कि तुम्हारी मां के भी यही हाल थे।"

निधि उठकर बाहर गया और सीढ़ियों पर बैठ गया। दूर एक लड़का गा रहा था—"कहां है किनारा, किधर कूल मेरा" निधि को दुःख हुआ। अपने आप पर तरस आया। "जीते समय और मर कर भी स्त्रियां पुरुषों को जाने क्यों सताती हैं ? सताना उनके हिस्से में और दुःख सहते रहना पुरुषों के हिस्से में आता है।"

कुछ देर तक यों ही सीढ़ियों पर लेट गया और फिर भीतर जाकर खटिया पर लेट गया। नींद नहीं आई तो उठकर आराम कुर्सी पर बैठ गया। चार बजने लगे। वेंकटाद्रि उठकर दांतून करने लगे। गाड़ी आकर खड़ी हो गयी। इंदिरा सीढ़ियों पर खड़ी थी, बोली—"हमारे साथ आ जाइये न ?"

"अपने पिता से भी गालियां दिलाओगी ?"

"माफ कीजिये आगे कभी नहीं कहूंगी।"

"तुमने कहा इसलिए मुझे दुःख नहीं पर तुम उन दूसरों की कही बातों पर विश्वास करती हो इसका दुःख है।"

"अब नहीं करूंगी तो आओगे न ?"

"कौन-सा मुंह लेकर आऊं ?"

वेंकटाद्रि गाड़ी पर चढ़ने की जल्दी कर रहे थे। श्यामला भी आकर देखने लगी। इंदिरा ने उसे परखा, फिर बोली—"चाचाजी, मैं यहीं रुक जाती हूं। तुम चले जाओ न ?"

"तुम्हारा बाप मेरा गला काट देगा। बस, अब चढ़ो गाड़ी। चाहे तो फिर लौट आना।"

इंदिरा गाड़ी पर चढ़ गयी। गाड़ी चली। दयानिधि कमरे में जा बैठा और उसने आंखें बंद कर लीं। आठ बजे रामदास ने आकर उठाया तो उसने उठकर स्नान किया। काफी पीकर कमरे में आया तो श्यामला ने उसे अपने कमरे में बुलाया। रात में उसने जो दृश्य देखा था उसे बताकर पूछा कि वह औरत कौन थी, क्यों आई थी। निधि ने सारी बात बता दी। श्यामला की बीमारी ठीक हो रही थी। पर निधि को इस बात का विश्वास न था कि वह पहले जैसी बिलकुल स्वस्थ हो जायेगी। उसका अपना जीवन ही ठीक न था। ऐसी कितनी उसमें खामियां थीं जिसका उसे पता ही नहीं। इस बात से ही वह डरने लगा और इसी डर के कारण वह किसी कार्य के लिये अपना संतुलन खो बैठता था।

"रात भर तुम दोनों लड़ते रहे, मुझे नींद नहीं आयी।" श्यामला बोली।

"एक पिंजरे में मिलकर रहने पर भी, वह हम लोगों जैसे अलग-अलग रहते हैं। यह समाज एक भग्न मंदिर है और हम सब उसके स्तंभ हैं जो कभी आपस में नहीं मिलते। तोते पिंजड़े में और हम लोग अपने-अपने स्थानों में खालों में जकड़े हैं।"

श्यामला ने आश्चर्य से देखा और उसके माथे पर बल पड़ गये। दयानिधि को अपने ऊपर आश्चर्य हुआ कि आज वह ऐसी असाधारण बातें क्यों कह गया है ?

"बैठिये न---आज आप जाने कैसी बातें कर रहे हैं।"

"अब तुम पहले से अच्छी हो न ? तुम्हें अपने आप कैसा लगता है ?"

"हां---पर मैं क्या जानूं ?"

"बंबई आओगी ?"

"ऊं हुं।"

"क्यों ?"

"पता नहीं ---।" श्यामला भय से डरती हुई कुर्सी पर बैठ गयी और अचानक रोने लगी। उसकी समझ में कुछ नहीं आया। प्यार से उसने श्यामला के कंधे पर हाथ रखा। उसकी आंखों से आंसू पोंछने लगा। इतने में पीछे से किसी की आहट सुन पड़ी तो निधि ने पीछे घूमकर देखा। प्रकाशराव खड़ा था। प्रकाशराव ने निधि को बाहर बुलाकर कहा कि वह अपनी बहन को ले जायेगा। निधि ने बताया कि वह अब रास्ते में आ रही है। एक पखवाड़ा और रहे तो ठीक हो जायेगी।

"क्षमा करो, मुझे लगता है कि बीमारी यहां ठीक न होगी।"

"तुम्हें पहले से अब अंतर नहीं मालूम पड़ता ?"

"पता नहीं---मुझे यह सब पसंद नहीं।"

"क्या मतलब ? लगता है तुम्हारे मन में कहीं कुछ है। कह दोगे तो मुझे संतोष होगा।"

प्रकाशराव दीवार की ओर मुंह कर कुछ कुड़मुड़ाया---"मुझे कहते अच्छा नहीं लगता। उनकी बातों पर मैं यकीन तो नहीं करता पर उनका कहना मुझे अच्छा नहीं लगता।" निधि को क्रोध आ गया---वह बोला---

"प्रकाश। तुम पढ़े-लिखे हो। श्यामला की बीमारी के बारे में मैं तुम्हें सब कुछ बता चुका हूं। और तुम उसे मान भी चुके हो। श्यामला में कुछ अच्छे होने के लक्षण भी दिख रहे हैं। वह अब धीरे-धीरे सुंदरता को पहचानने लगी है। टूटी हुई कड़ी जोड़ने की कोशिश कर रही है। अब अपने दुःखों को समझने लगी है। अब तो वह दुःखों के प्रति सहानुभूति भी दिखा रही है।

इसको समझने के लिए तुम्हें मुझे अपनी जीवन गाथा सुनानी होगी। जो मेरे बस की बात नहीं।"

"अब बताने की क्या जरूरत? हाथ कंगन को आरसी क्या?"

"तुम्हारे मन में क्या है, साफ साफ क्यों नहीं कह देते?"

"मुझे तुमसे बहस नहीं करना मैं अपनी बहन को ले जाना चाहता हूं। बस।"

"तो इसी क्षण ले जाओ।"

"मैं भी चीख सकता हूं। पत्नीहीन के यहां अपनी बहन को अकेली छोड़ देना मेरी ही गलती है।" प्रक शराब की बात पर निधि का हाथ उसे मारने के लिये उठता उठता रह गया। प्रकाशराव भीतर गया और श्यामला का हाथ पकड़ कर बाहर खींच लाया। श्यामला रोती हुई हाथ छुड़ाकर भागने लगी। कुछ देर तक मिट्टी में लोटती रही। प्रकाशराव ने उसे फिर पकड़ा और उसे बाहर गाड़ी में बिठा दिया। श्यामला छुड़ाने की कोशिश करते हुए रोने लगी—"नहीं जाती मैं तुम्हारे साथ। मुझे यहीं छोड़ दो।"

"हां हां, नहीं आयेगी, यहां पर नाटक खेलने को जो मिल जाता है। चल उठ अब मुंह बंद कर। प्रकाशराव ने उसे भीतर धकेल दिया। निधि गुस्से में दांत पीसता रह गया। पर कुछ कर न पाया। श्यामला अपना पिंजड़ा मांगने लगी।

"तुम्हें पिंजड़ा चाहिये या तोते?" निधि ने पूछा। श्यामला ने सोचकर पिंजड़े की मांग की। निधि ने पिंजड़े को खोलकर तोतों को उड़ा दिया। दो तो उड़ गये एक वहीं लंगड़ाता फुदकता रहा। निधि ने उसको पिंजड़ा ले जाकर दे दिया। श्यामला ने उसे कसकर पकड़ लिया। गाड़ी नुक्कड़ पर ज्योंही घूमी तो किसी ने पिंजड़े को सड़क पर फेंक दिया।

संस्कार जाग उठे

दो महीने बीते। निधि के पास आने वाले रोगियों की संख्या घट गयी। प्रेक्टिस मंद पड़ने लगी। श्यामला के लिए उसने अपनी जेब से चार पांच सौ खर्च किये थे। प्रकाशराव ने कुछ भी नहीं दिया। जब कभी वे दोनों क्लब में मिलते तो अपना मुंह फेर लेता था। प्रकाश राव ने जो बातें कहीं थीं, निधि उन्हें भुला नहीं पा रहा था। उन बातों का असर क्लब में दिख रहा था। निधि के आते ही क्लब के दूसरे मेंबर अपनी बातें बंद कर देते या खुसर पुसर करने लगे। निधि को शंका थी कि बातें उसके ही बारे में होती थीं उसके आते ही लोग बंद कर देते थे। निधि उन्हें जानना चाहता था कि वे लोग क्या बातें करते हैं? वह जानने के लिए पागल हो उठा था। समाज की परवाह न करने वाला समाज द्वारा की जाने वाली बातों को जानने के लिए जाने क्यों इतना लालायित होता है। और समाज किसी के दुःख से ही संतोष पाता है। समाज द्वारा बनायी गयी सड़क पर अब पगडंडी बनाकर चलने वाला व्यक्ति अगर उस समाज का इतना मनोरंजन करता है तो उसे मनोरंजन करने वाले के प्रति कृतज्ञता जता कर उसकी एक प्रतिमा बनवाकर सड़क के बीचों बीच क्यों नहीं खड़ा कर देती? उसे अपने प्रति गर्व भी होता कि लोग उसी के बारे में सोच रहे हैं। अच्छा या बुरा कुछ करने में हार नहीं हो जाती। हार तो तब होती है जब वह कुछ न करे। समाज कुछ नहीं करता। नौकरी

पर जाता है, भोजन करता है, ताश खेलता है, बच्चे जनता है, कोई कुछ करे तो उसे विचित्र पशु मान उसे बुरा बताकर उससे आनंद और तृप्ति पाता है।

क्लब में निधि के मित्र भी कभी उस पर फब्तियां कसते, कभी विचित्र बानगी में उससे बात करते, कभी-कभी श्यामला का प्रसंग छेड़कर उसकी अवहेलना करने लगते। संगमेश्वरराव ने तो निधि को डाक्टर सौंदर्यराव की उपाधि तक दे डाली। निधि ने अपने इस नये संबोधन से एक बार पीछे मुड़कर भी देखा तो मित्रगण आपस में एक दूसरे का मुंह देखकर मुस्कराने लगे। मित्र-गण बातों में इंदिरा का प्रसंग उठाते। एक बार तो उसने सोचा कि जाकर इंदिरा को ले आये। क्लब के परिचितों द्वारा छेड़े गये व्यंग्यवाण अधिक तीखे हैं या माधवय्या के आदर्शों की विषैली वायु अधिक पैनी है वह निर्णय कर न पाया। पर आदत हो जाने पर मित्रों के व्यंग्यवाणों का सामना करना उसे सुलभ जान पड़ा। पर तीर एक तरफ से नहीं फेंके जाते जिसमें फेंकने वाले के ऊपर वार करना संभव नहीं हो पाता। तीर सभी ओर से फेंके जाते हैं। माधवय्या अकेले व्यक्ति थे लेकिन उनके आदर्शों की नींव वह अच्छी तरह जानता था और यह भी जानता था कि वह विषैली वायु कहां तक जा फैली है। उससे वह बच निकल सकता है। लेकिन फिर समाज। कहां तक उसकी सीमायें—एलूर के टाऊन हाल तक ही सीमित है क्या? अखिल अनंत विश्व में इसकी सत्ता ही कितनी हैं—पर कहीं भी जाये, परछाईं की भांति यह समाज उसके पीछे-पीछे लगा है। सामाजिक व्यक्ति समाज से असंपृक्त नहीं हो पाता। अगर वह क्लब जाना छोड़ दे तो? उसके रोगी भी उसी समाज के अंग थे। धीरे-धीरे उन्होंने आना बंद कर दिया। एलूर से भागकर वह किसी दूसरे शहर में डाक्टरी की प्रैक्टिस करे तो? कैसा रहे। पर उसे पहचानने वाले तो पूरे आंध्र प्रदेश में फैले हैं? इन सबकी हत्या करके उसे क्या इनसे छुटकारा मिलेगा? निधि सोचता हुआ अपने अस्पताल में वापस आ गया। दो दो कंपाउंडरों को वेतन देकर रखने की क्षमता अब उसमें नहीं रह गयी थी। दोनों में से एक को छुट्टी दे देनी होगी पर किसे? रामदास पुराना था और होशियार भी। पर रोज़ स्त्री थी और गरीब भी। उसके बारे में सब जानती थी।

रोज़ ने कहा वेतन न सही खाना कपड़ा मिले तो वह रह जायेगी। रामदास

ने अपने आप ही काम छोड़ दिया कि वेतन के बिना वह काम नहीं कर सकता।

चार महीने बीते। दयानिधि ने अपने हिस्से की बची तीन एकड़ भूमि भी बेच दी। खर्चा कम कर दिया। माली को हटा दिया। निधि स्वयं पैदल ही बस्ती में आने जाने लगा। अब तो उसे सौ रुपये की भी आमदनी होनी मुश्किल थी। गरीब रोगियों को वह अस्पताल में ही रखकर उनकी चिकित्सा कर रहा था। जमीन बेचकर मिले रुपये भी धीरे-धीरे समाप्त हो चले थे। उसने किताबें भी मंगाना छोड़ दिया। अब तक पिता जरूरत पड़ने पर पैसे भेज देते थे, पर अचानक उन्हें लकवा मार गया और वे मर गये। पिता को देखने वह गया था पर तब तक वे इस लोक की यात्रा समाप्त कर चुके थे। अंतिम घड़ियों में वह पास नहीं था। पहले तो निधि कुछ समझ नहीं पा रहा था। उसे रोना आ गया। उसने आइने में अपना चेहरा देखा तो उसमें से पिता का चेहरा झांकता नजर आया। अपने में वही खून—वही चेहरा—वही स्वभाव दिखे। लगा कि पिता ने ही उसमें दूसरा अवतार ले लिया है। उसने बहते हुए आंसू पोंछे और पुनः शीशे में देखा तो इस बार अपने चेहरे में मां का रूप दिखा—मां का स्वभाव—बुभुक्षा—विचार सभी कुछ मां के जैसे थे। दो विपरीत स्वभाओं का आकार था वह स्वयं। बिलकुल एकांकी—उसे जीवन से बांधकर छोड़ जाने वाले लंगर थे उसके मां बाप। उनके जाने के बाद वह लंगर भी टूट चुका था। अब वह महासमुद्र में एक छोटी सी डोंगी में बैठा पाल और चप्पू के बिना यात्रा कर रहा था। उनका बल—उनका व्यक्तित्व अभी तक उस पर छाया था तभी तो वह इस यात्रा के लिए आगे बढ़ रहा था। अब वह उससे वंचित हो गया। अब उसकी डोंगी डूबने को थी—अंधकार गया तूफान आ गया—हवा का शोर ऊपर से—लहरों का प्रलय तांडव हो रहा था—खाइयां और भंवरों में घिर गया था। किसी ने उसे मशाल पकड़ाई। मां ने उसे तेल में भिगोया और पिता ने उसे जलाया था। उस मशाल को लेकर वह चला जा रहा था। वह चलते-चलते थक गया था—मशाल अब वह किसे पकड़ाये ? उसके तो कोई संतान थी ही नहीं—क्या समुद्र में फेंक दे। युगों से जलती आ रही है मशाल। जीवन को वह अब विराम चिह्न लगा दें।

वह मशाल नहीं थी। दूर कुछ जल रहा था। श्मशान से लौट रहा था। ज्वाला को घेरे लोग खड़े थे। वह चिता नहीं थी विदेशी कपड़ों के अंबार की

जलती लपटें थीं। भीड़ में कुटुंबराव भी था। उसका जीवन ही राजनैतिक जीवन था। सभी अपने कोट, पेंट, कुर्ते उस ज्वाला में झोंक रहे थे। वह महा-नाश का यज्ञ था। कपड़ों को तो जला रहे थे पर नौकरशाही शिक्षा-दीक्षा को आत्मसात् करने वाले स्वभाव की होली कहां कर पाये थे? उसकी नींवें, व्यक्तित्व की जड़ें सुदूर छह हजार मील दूर बसी धरती की गहराई में थी। उसे लगा कि जाकर उस होलिका में स्वयं भी बैठकर दग्ध हो जाये। व्यक्तित्व प्रकर्ष, स्वेच्छा, स्वातंत्र्य की भूख—ऐहिक मूल्य, भौतिकानंद इन्हें कोई भी आग और ज्वाला जला नहीं सकती। एक ही एकड़ ज़मीन बची थी उसे भी वेच आया। इस बार नारय्या उसके साथ हो लिया।

1937 का अप्रैल था। बड़ी मुश्किल से दयानिधि घर का किराया भर रहा था। उसके पास चिकित्सा के लिए आने वाले गिनती भर के रोगियों में से आधे तो फीस देते ही न थे। निधि उनसे फीस वसूल नहीं कर पाता था। वह चाहता था कि घर में कोई मंगल कार्य हो पर इसके लिए वह क्या करे। बच्चे तो थे नहीं, पास पत्नी भी नहीं थी। घर बनाने की बात ही नहीं सोच सकता था। अपना जन्म दिवस मनाये तो डर था कि लोग हंसेंगे। आधे रोगी फीस देना चाहते थे, पर उनके पास देने को कुछ भी नहीं था। उसने सोचा, कुर्सी मेज आदि को वेच दे, या नहीं तो उधार ले ?, पर रोगियों के पास से उधार लेना उसे पसंद न था। अचानक उसे कृष्णमूर्ति याद आया। इस बीच वह बंबई गया था और अभी हाल ही में लौटा था। उसके घर जाने की सोची, पर नौ बज चुके थे। उसने सोचा शाम को क्लब में जाकर मिलेगा। पर अब वह क्लब का सदस्य नहीं था—कैसे मांगे। सोच ही रहा था कि कृष्णमूर्ति आ गया। दोनों बैठे इधर उधर की बातें करने लगे और फिर वह चला गया।

कृष्णमूर्ति उसका रोगी था। उसका खून बिगड़ गया था। निधि ने कहा कि छह महीने तक इंजेक्शन लेने होंगे और इस बीच शादी की बात को सोचे भी नहीं। कृष्णमूर्ति ने हामी भर दी और हर हफ्ते आकर इंजेक्शन लेता रहा पर उसके चाल चलन में कोई अंतर नहीं आया। वह रोज़ के साथ छेड़छाड़ करता जिसे दयानिधि सह नहीं पाता था। कृष्णमूर्ति की बात भी कुछ ऐसी ही थी। मनुष्य अगर अपने अनुभव के आधार पर सुधर सके तो एलूर शहर

की सारी सड़कें योगी वेमना जैसे लोगों से भर जाती। मनुष्य का स्वभाव वह समझ नहीं पा रहा था। सत्य से साक्षात्कार नहीं करना चाहिये, अगर किया भी तो उसको कोई सह नहीं पाता। इस कारण धर्म, भगवान, भूत, प्रेत, पुराण, वेदांत आदि का सहारा लेकर अपने आपको छलते रहना चाहिये तभी कोई जिंदा रह सकता है।'' उसे हंसी आयी कृष्णमूर्ति अच्छा व्यक्ति है। वह अपने को भले ही धोखा दे, पर दूसरों को वह नहीं छलता और न ही अपने से संबंधित सत्य को वह ढंकने की कोशिश करता है। कृष्णमूर्ति में ''पाप'' या अपराध बोध नहीं होता। पर क्या वह सचमुच पाप है? कुछ लोग खुले तौर पर स्वीकार कर लेते हैं। अधिकांश लोग पर्दे के पीछे नाटक खेलते हैं। नाटक करते रहना ही समाज द्वारा अपनाई जा रही नैतिक दृष्टि है। कृष्णमूर्ति अपनी करनी पर पाश्चाताप नहीं करता। करे भी क्यों? टाईफाईड का रोगी क्या अपने लिए पश्चात्ताप करता है? रोग चाहे कोई भी हो बुरा ही होता है। रोगों की चिकित्सा करना डाक्टरों का काम है। एक रोग को अच्छा और दूसरों को बुरा कह कर मूल्य आंकना नादानी है। समाज ऐसे मूल्य आंकता है तभी साहस की कमी के कारण लोग आत्महत्या करते हैं। यह बुरी बात है। कृष्णमूर्ति के प्रति उसे संवेदना होने लगी उससे निधि प्यार करने लगा। कृष्णमूर्ति की निजी विशेषताएं, उसकी हास्यप्रियता, आनंद और उत्साह के कारण रोग उसका कुछ बिगाड़ नहीं पाया। मनुष्य के आत्मबल का यही गुण है।

दो महीने बीते। उस दिन रविवार था। कृष्णमूर्ति उस दिन नहीं आया था। सोमवार को भी उसकी प्रतीक्षा की। वह उस दिन भी नहीं आया। निधि ने कई बार कहा था कि इंजेक्शन बीच में बंद करना ठीक नहीं। निधि ने उसके बारे में पूछताछ की तो पता चला की शहर से कहीं बाहर गया हुआ है।

डाकिये ने आकर चिट्ठियां दी। एक ही विवाह के दो अलग-अलग निमंत्रण पत्र उसे मिले। एक कृष्णमूर्ति की ओर से आया था वधू थी गोविंदराव की बेटी सुशीला। दूसरा निमंत्रण पत्र गोविंदराव के पास से आया था। विवाह के लिए बीच में दस दिन थे। निधि को आश्चर्य हुआ और साथ ही एक विचित्र आवेश ने उसे घेर लिया। उसने गोविंदराव को चिट्ठी लिखी, जिसमें कृष्णमूर्ति के रोग के बारे में पूरा विवरण देकर शादी रुकवाने को कहा।

दो ही दिन में उसका जवाब आ गया। जिसका सारांश था कि कृष्णमूर्ति पढ़ा लिखा है, सुशीला ने उसे पसंद किया है। हां, बचपन में एकाध गलती सबसे हो जाती है, जो बाद में ठीक हो जाती है। अव्वल बात तो यह कि उन्हें निधि के डाक्टर होने में कोई विश्वास नहीं। वह अपना घर पहले संभाल ले तब दूसरों की बात सोचे तो ज्यादा अच्छा होगा। अंत में यही लिखा था। "तुम्हारे वंश में, इतिहास ने तुम्हारे विवाह को किस प्रकार प्रमाणित किया है उसे याद करो। तुम कितने दुखी हुए थे। सब कुछ देखकर घर का रिश्ता छोड़ दूसरे खानदान की लड़की से विवाह किया। अब उसका क्या फल पा रहे हो। अभी तुमको बिलकुल अक्ल नहीं आयी। आगे से ऐसी बेवकूफी की बातें लिखना और यों बेतुकी बातों का प्रचार भी बंद कर दो।"

अमृतम् के पति से भी एक चिट्ठी आयी थी जिसमें लिखा था वह अमृतम् के साथ सुशीला की शादी में जा रहा है। निधि को भी आने को लिखा था। शादी में पांच दिन और थे। निधि ने सोचा कि जाकर कृष्णमूर्ति को समझाये--पर कैसे और क्या समझायेगा अपने ससुर को समझा नहीं पाया था। गोविंदराव की चिट्ठी में लिखी बातें कि पहले अपनी 'बात सोच लो' उसके मर्म को बेधने लगीं। वह दिन बीत गया। दूसरे दिन उसने शादी में जाने का निश्चय किया। होल्डाल लेकर स्टेशन तक गया। गाड़ी खड़ी थी। दस मिनट गुजर गये। उसके पांव लड़खड़ाने लगे। शरीर से पसीना छूटने लगा। बुखार हो आया था। बैंच पर बैठ गया। माथा गरम हो गया। सांस भारी हो उठी। गार्ड की सीटी—गाड़ी का आवाज—रेल सरकने लगी। जिस गाड़ी में आया था उसी में घर में वापस चला गया।

एक हफ्ता बीतने पर अमृतम् को उसने चिट्ठी लिखी "मुझे तुमने याद रखा और अपने पति से चिट्ठी लिखवायी, धन्यवाद। सुशीला की शादी की बातें सुनने की इच्छा हो रही है। रहस्य जानकर सत्य को मथ कर निकाल डालने की अपूर्व शक्ति तुम में है।" पत्र पूरा न कर पाया। चार पांच बार लिखी पंक्तियों को पढ़ा तो कुछ शब्द लगे कि उनका परिणाम बुरा होगा। उन्हें पढ़कर उसका पति दूसरा अर्थ न लगाये। लगा कि वह कुछ पाप कर रहा है। अपने आप पर दुख हुआ। तो क्या उसमें कहीं बहुत गहरे कुछ पाप करने का संकल्प तो नहीं छिपा है? या वह उससे पलायन करने का प्रयत्न

तो नहीं कर रहा है ? उसका मन खराब हो गया। लगा कि वन का एक पुराना पेड़ भरभराकर गिर पड़ा है। उसने चिट्ठी फाड़ दी।

एक महीना और निकल गया। अब प्रैक्टिस नाम मात्र के लिए भी नहीं रही। दो महीने का किराया चढ़ गया था। बड़ी मुश्किल से खाना खाने के लिए पैसा पूरा पड़ता था। अब वह भाई से भी नहीं मांग सकता था आत्म-गौरव और संकल्प उसे मांगने नहीं देते थे। बेचने के लिए भी कुछ नहीं बचा था। उसने सोचा--पत्नी पास होती तो कितना अच्छा होता। कम से कम गहने बेचकर कुछ दिन काटे जा सकते थे। क्लब में उससे संबंधित चर्चा का नया रूप ले रही थी कि उसने बीवी को छोड़ दिया है।

इन अफवाहों को सुनना और उन पर चिंतित होते रहना भी छूटा नहीं था। बिना सुने और सुनकर बिना चिंतित हुए भी नहीं रह पाता था। यही दुख-दैन्य उसके साथी बच गये थे। बीच में एकाध क्लब के दोस्त बीमारी के बहाने आते और अपनी खोज के लिये नया मसाला लेकर जाते।

कृष्णमूर्ति घर जमायी हो गया था। एक महीना और बीता। गोविंदराव के पास से एक और चिट्ठी आयी—"कल रात सुशीला एक बच्चे को जन्म देकर मर गयी बच्चा भी चल बसा।"

विवाह को आठ महीने भी नहीं हुए थे। बच्चा कृष्णमूर्ति का नहीं था। बस पिता बने रहने की जिम्मेदारी उसने ले ली थी। दयानिधि दुख से कांप उठा। उसे लगा कि सुशीला की मौत का कृष्णमूर्ति ही कारण है। उसके लिखे अनुसार सुशीला का विवाह रुक जाता तो सुशीला का क्या होता ? जहर पी लेती। सुशीला के अपने रचाये चक्रव्यूह से उसको केवल मौत ही छुड़ा सकती थी। उसे लगा कि कहीं उसके भीतर भारी सा कुछ खट से टूट गया है। आंसू भी सूख गये थे। एक जीव के इस दुनिया से ले जाने के बाद सृष्टि एक प्रशांतता छोड़कर जाती है—जैसे एक बड़ी सी लहर समुद्र में लीन होते समय तट पर झाग छोड़ जाती है ठीक उसी भांति।

रात के ग्यारह बज चुके थे। किताब बंद करके पिछवाड़े कुएं की जगत पर निधि आराम-कुर्सी पर बैठा था। आकाश में चांदनी भारी होकर झूम रही थी। वृक्षों के पत्ते स्तब्ध थे दूर हवा बुला रही थी। पेड़ किसी के आकर उठाने की प्रतीक्षा में रुक गये थे। निधि की आंखों में इंद्रधनुष सा

कुछ चमक आया। उंगलियों से उसने आंखें पोंछीं। उंगली भीग गयी। छिः, उसने तो सोचा था कि रोयेगा नहीं। उसे किसके लिए दुख है ? वह चाहता क्या है ? किस पर है उसका आक्रोश ? समाधान शून्य था। दम रुकी हुई स्थिति की घुटन—कारण रहित दुख का जिसका कहीं न ओर था न छोर। सृष्टि को देखकर मनुष्य का करुणार्द्र होना कभी संभव हो पायगा ? दुनियां में सभी दरवाजे बंद हो जाते हैं, एक के बाद एक बंद हो जाते हैं—सब कुछ अंधेरा—सुनसान—एक भीषण दारुण सुनसान—दूर किसी खिड़की के खुलने का आभास हुआ। खिड़की खुली—रोशनी कांप उठी—उसे लगा कि उसने जीवन का स्पर्श करके उसे पकड़ लिया है।

अंधेरे के घेरे में

कुछ महीने और बीते।

शाम के पांच बज रहे थे। दयानिधि क्लब की तरफ गया। इस बीच उसने अखबार पढ़ना भी छोड़ दिया था सो उसे बिलकुल पता नहीं था कि देश में क्या हो रहा है? समाचार पत्र पढ़ने लगा, लेकिन ध्यान नहीं टिक रहा था, कुछ अजीब से विचार उठ रहे थे।

अचानक एक समाचार ने उसके विचारों पर रोक लगा दी। रायलसीमा में हैजा और प्लेग फैला था। हजारों लोग मर रहे थे। यहां आकर रोगियों को दवा देने वाले डाक्टरों की संख्या बहुत कम थी। नेतागण विज्ञापन दे रहे थे कि चिकित्सा विभाग द्वारा किये जा रहे कार्यक्रमों में देश के डाक्टरों को साथ देना बहुत जरूरी है। अनंतपुर और कर्नूल जैसे शहरों में तो रोग तीव्र हो चला था। निधि के मन में समाचार पढ़कर फौरन यहां जाने की इच्छा बलवती हो उठी। विचार आया कि जाकर वहीं बस जाय फिर वापस न आये। गोदावरी जिले के इलाके स्मृतियों को झकझोर देते हैं। यहां के लोगों में जन्मजात बुरे स्वभाव की गंदगी चालें, तंत्र—झूठी बातें—झूठे स्तर इन सबसे वह पीछा छुड़ाकर भाग जायगा हमेशा के लिए।

इतने में सोडा बेचने वाले लड़के ने आकर सोडा लेने का आग्रह किया। निधि ने कहा वह उधार नहीं लेता और फिलहाल उसके पास पैसे भी नहीं

हैं। लड़के ने कहा, कोई बात नहीं यों ही ले ले। उसकी आंखों में निधि के प्रति अपार करुणा झलक रही थी।

ताश खेल रहे दूसरे खिलाड़ियों ने निधि को देखा नहीं। सो बातों का आधार कृष्णमूर्ति था—"आज भवानी शंकर क्यों नहीं आया ?"

"शहर से वापस तो आ गया है ?"

"सुना है, उसकी बीवी ने आत्महत्या कर ली थी।" तीन आवाजें एक दूसरे के पास खिसक गयी।

"अजी, उसकी तो पहले ही किसी से आखें लड़ गयी थीं। कृष्णमूर्ति को पता चला था कि विवाह के समय उसे तीन महीने का गर्भ था। चलो कृष्णमूर्ति को ऐसे ही बाप बन जाने का सौभाग्य हुआ।"

असल में जो कुछ घटा सो भगवान ही जाने। पर उसने आत्महत्या कर ली थी। बात इस तरह मोड़ दी गयी कि बच्चे को जन्म देकर वह मर गयी और बाद में बच्चा भी। बच्चा पुण्यवान की कमाई था ?"

"और कौन हो सकता है सिवाय हमारे डाक्टर सौंदर्यराव के।"

"भई, कुछ प्रणाम तो होने चाहिये, वर्ना इसे सच कैसे मान लिया जाय ?"

"शादी से पूर्व इसने विवाह रोक देने के लिए लिखा था।"

निधि इतना सुन पाया था कि सोडेवाले ने बोतल पकड़ाई। निधि ने पुनः एक बार लेने से इंकार किया कि वह पैसे नहीं दे सकता। पर लड़के ने कहा—"कोई बात नहीं, यहां पर सोडा पीने वाले अगर पैसा चुकाते होते तो उनसे मैं स्टेशन पर एक अच्छा सा होटल खोल सकता था।"

"तू मुझ पर इतना रहम क्यों दिखाता है रे ?"

"आप अच्छे आदमी हैं।"

"मैंने तेरे साथ कौन सी अच्छाई की ?"

"मेरी मौसी को मुफ्त में दवा देकर आपने उसकी जान बचा ली साहब, पंजाब मेल—।"

निधि ने यूं ही अपने जेब में हाथ डालकर टटोला तो अचानक एक अठन्नी पड़ी मिली। उसे लड़के के हाथ पर धर दिया। लड़का अठन्नी उछालता गाता निकल गया—"चल मेरे बेटे मेल को चल। मेरे मौला बुला लो मदीने मुझे।"

ताश मंडली अपनी बातों में लीन थी।

"यार मैं लाख रुपये की बात कहता हूं। वंश परंपरा से रोग की तरह विरासत में मिलती हैं ऐसी बातें। निधि की मां का इतिहास एक महा-पुराण है"

"तुम तो यार बम फेंक रहे हो।"

"ऐसी बातें कितना भी छिपाओ छिपती थोड़े ही हैं। वह तो एक महान ग्रंथ की एक विशिष्ट नायिका थी—सुना है इसी कारण निधि के लिए कोई रिश्ता नहीं आता था।"

"तो अब इनकी महासती का क्या हाल है ?"

"दोनों में अनबन है।"

"क्यों भला ?"

"ये भी तो दक्षिण नायक है"—फुसफुसाहट होने लगी।

"विषय को विस्तार से समझाया जाय।"

"कृष्णमूर्ति की पत्नी भी तो इसकी…"

"भाई गाड़ी आगे बढ़ाओ।"

"शादी के पहले किसी भगोड़ी औरत की लड़की के पीछे लगा—उसके लिये मां का प्रोत्साहन था।"

"सचमुच आश्चर्य में डाल देने वाली बातें हैं।"

"अब मां जो नाटक खेलती बेटा उसे प्रोत्साहित करता और बेटे को मां।"

निधि को लगा कि एक एक करके कुर्सी उठाकर उन सब पर दे मारे। दोनों हाथों से कुर्सी के पाये कस कर पकड़े। ये बातें क्लर्क सोमय्या सुना रहा था। वह सुनते हुए उठा और पेंट की जेब में से सौ का नोट निकालकर उसने दूसरों को दिखाया और फिर कुर्सी से लटके कोट की निचली जेब में रख दिया और जाकर खेल में लग गया। इतने में टेनिस के खिलाड़ी आ गये और उन्होंने मेज को दूर हटाने को कहा। नौकर ने उसे खींचकर बरामदे में लगाया। मंडली पुनः खेल में लग गयी। कुर्सियां खींचते समय सोमय्या ने कोट दीवार में लगी कील पर टांग दी। निधि को उसे देखकर अचानक एक विचार आया। वह उठकर बरामदे तक गया। नौकर लालटेन पोंछ रहा था। कोट जहां लटका था उस ओर दीवार की तरफ रोशनी नहीं पहुंच रही थी। निधि को कर्नूल जाने के लिए सौ रुपयों की सख्त जरूरत हुई। कोट की जेब

से हरा कागज उड़ा लेना बहुत आसान था ।

"कहां है मेरा कोट ।" सोमय्या कोट के लिये उठा । खेल में नोट तुड़वाने की नौबत आ गयी थी ।

"यह लीजिये आप ही का है न ।" निधि ने उसे पकड़ाया । उसे लेते हुए सोमय्या बोला, "अरे निधि यहां हो—आओ दो हाथ हो जायें ।"

"भाई रो मत—तुझे अपना नोट तुड़ाने की जरूरत नहीं बस बैठ ।" ये लो ।

"अरे भैया तब तो अपना तुरुप बच गया ।" कहता हुआ सोमय्या बैठ गया उसे यही ख्याल था कि अपना नोट उसने पुनः अपनी कमीज के जेब में रख ली है । निधि भी यही चाहता था । नोट का चोरी हो जाना सोमय्या अप' झूठी बातों के लिए भगवान का दंड मान लेगा । पर क्या—वह चुप हो जायगा ? पुलिस—खोज—गवाही—अदालत—यह एक और नया अनुभव होगा ।

पर सोमय्या एक अति साधारण व्यक्ति है । जिसका अपना कोई अलग व्यक्तित्व नहीं—समाज का एक अणुमात्र—परंपरा के दलदल में फंसा । ये परंपरायें, झूठी बात हटाये पर नहीं झड़तीं । हमारा संघर्ष आदर्शों के मूल्यों से है न कि मामूली अति साधारण व्यक्ति से । ये अति साधारण व्यक्ति अपने लिये तैयार सांचों में ढल जाते हैं—किसी के द्वारा बनाये सिद्धांतों पर आचरण करने लगते हैं । उसका खंडन कर अवहेलना करने की ताकत उनमें नहीं रहती और अगर कोई खंडन करता भी है तो समाज में उसके लिए कोई स्थान नहीं रहता । सोमय्या जब तक जीवित है उसके जीवन का मूल्य है, पर जाने पर उसके मृत शरीर को बाजार में बेचो तो धेले में भी कोई नहीं लेगा ।

निधि को हंसी आ गयी । सोमय्या को मन ही मन क्षमा कर वह बाहर निकल आया । उसने सोचा जिंदगी का कोई एक ठिकाना न हो शायद वह व्यक्ति से ऐसे ही कुछ काम कराती है । सौ रुपयों के लिये आत्मा को बेचने के लिये तैयार हो गया था ? बहुत से लोग बेच भी तो देते हैं । सौ के लिये हजार, लाख और करोड़ के लिये । इन्हें कोई चोर नहीं कहता । रायसाहब रायबहादुर का खिताब देकर इनका आदर किया जाता है । अगर यही काम कोई अशक्त आदमी करे तो वह चोर कहलाता है । आत्मा की कीमत रुपये

से गठबंधन कर चुकी है । इसकी जड़ें बहुत गहरे तक जाकर समा गयी हैं । उसे इन्हीं सब से लड़ना है ।

अचानक आसमान में बादल छा गये । सड़क पर छाई धूल चेहरे पर जम रही थी । छुपी बदली हवा में फैलकर गुदगुदी मचा रही थी । दुकानों पर लटकती लालटेनों पर बुझने से बचने के लिए आड़ रख दिये गये थे । नहर के पानी में लैंप पोस्टों के रंग बहते जा रहे थे । निधि घर की ओर कदम बढ़ा रहा था । निधि तेज हवा, उड़ती धूल, उफनते आते अंधकार इन सब के साथ अपने एकाकीपन से कांप उठा । लगा कि उसे अकेला छोड़कर यह पृथ्वी ब्रह्मांड से कहीं दूर भागती जा रही है । दुनिया से उसे अब कुछ लेना देना नहीं फिर भी जाने यह दुनियां उससे किस जन्म का बैर साध रही है । वह उसे अपने साथ दौड़ते रहने को ललकार रही है । वह नहीं भागता तो उसे लंगड़े लूले की उपाधि दे रही है । उसके हृदय में निशीथ की भांति एकांत अहसास केंद्रीकृत हो गया जिसे देखकर वह सहम गया । कहां भागकर जाये ?

घर पहुंचा । पड़ोस की घड़ी ने आठ बजाये । सीढ़ी चढ़कर बरामदे में आया । चौखट के पार कमरे में चौकी पर बैठी अमृतम् फूलों की माला गूंथ रही थी ।

"अरे जीजाजी तुम आ गये । तुम्हारे लिये मैंने नारय्या को भेजा था । तुम्हें मिला नहीं ।" अमृतम् ने बिखरे फूलों को सहेज कर टोकरी में रखा और लालटेन की बत्ती को ऊपर उठाया । रोशनी में उसका मुंह चमकने लगा । चोटी खोलकर बालों को गूंथकर पीछे ढीला सा पीठ पर झूलता सा जूड़ा बना लिया था । सूर्योदय को एकटक देखती सी उसकी पवित्र आंखें चमक रही थीं । मांग के दोनों ओर उठे बालों की परछाई ललाट पर पड़ रही थी । होठों के संगम स्थान पर लगे अर्द्धचंद्राकार में कपोलों की परछाइयां झलक रही थीं । भरा पूरा आकार, दर्द भरा चेहरा, लहर के पीछे डूबते सूरज की सी छिपी हास्य मुद्रा, करुणा की आकांक्षा से भरी उन आंखों की निश्चलता छिपी हुई स्थिरता पाये उन अंगों की गति में कुछ जान लेने की आतुरता इसके पहले कभी भी अमृतम् में यह सब कुछ उसने नहीं देखा था ।

"ऐसे क्या एकटक घूर रहे हो ।" फूलों के टोकरे को उठाकर नीचे रखा और तख्त पोंछने लगी ।

"मैं तो तुम्हें पहचान भी नहीं पाया।" कहते हुए निधि तख्त पर बैठ गया।

"क्या मैं इतनी मोटी हो गयी ? ये भी कहते थे कि ताड़का सी लगने लगी हूं। तो तुम मुझे बिलकुल भूल चुके हो न ?"

"भूल तो नहीं गया, पर कल्पना नहीं की थी तुम यहां आओगी, अचानक तुम्हें देखकर आश्चर्य होना भी स्वाभाविक है।" कहता हुआ निधि उठकर भीतर गया और अंदर से एक कुर्सी लाकर बैठ गया। अमृतम् तख्त पर बैठ कर फूलों का गजरा अपने जूड़े में सजाने लगी। निधि ने पूछा—"हां तो अब बताओ कैसे और कहां से आना हुआ ?"

"ठहरो अभी बताती हूं। अरे ये बाल जमते ही नहीं।" कहती हुई चार पिन लेकर बालों को जूड़े में सहेज कर उन्हें लगाया इस पर भी कुल लटें गर्दन पर, कानों पर और कपोलों पर लहराने लगीं जैसे पानी से बाहर निकाल दी गयी छोटी छोटी मछलियां तड़प रही हों—"उफ् कितनी तेज हवा है। शायद बूंदा-बांदी हो—तुम तो बिलकुल दुबले हो गये हो। आंखें तो देखो कितने गढ़े में फसी हैं। बीमार तो नहीं थे ?"

"यों बातों का सिलसिला जारी रखना था इसलिए तुमने यूं ही पूछ लिया। मैं तो अच्छा खासा हूं।"

"नहीं जी बिलकुल झूठ बोलते हो। कनपटी तो देखो कितनी भीतर चली गयी है, पूरी नसें उभर आई हैं।" कहती हुई अमृतम् उसे सिर से पैर तक उसकी जांच करने लगी।

"अब हम बूढ़े नहीं होंगे ? हमेशा जवानी कैसे कायम रह सकती है ?"

"हां—भाई, समय रुकता थोड़े ही है।" हवा की तेजी को सह न पाने के कारण अमृतम् ने पल्लू उठाकर कानों से सिर पर लपेटकर सीधी कनपटी तक लाकर सीधे हाथ से पकड़ कर खींचा और आंखें मटका कर हंसने लगी।

"तो फिर खाना परोसा जाय—क्यों जी—आपके लिये तो पूरा बाजार छान आया—उठिये पानी गरम हो गया है नहा डालिए झटपट।" शंकरम् ने भीतर से आते हुए कहा।

"नारायण कहां है शंकरम् ?" अमृतम् ने पूछा।

"वह नहर तक घूमने गया है।"

"जौजा जी शंकरम् और खेत का रखवाला नौकर नारायण को लेकर

तेनालि जाकर वापस आ रही थी। हमारे ससुराल में किसी के लिए रिश्ता देखने आई थी। सास जी पहले ही देख चुकी थीं। इनको तो तुम जानते हो वक्त ही नहीं मिलता। उधर किसानों से पैसे भी उगाहने थे इसलिए इन्होंने नारायण को भी साथ भेज दिया। काम पूरा हो गया तो मैंने सोचा रास्ता ही तो है चलो एक दिन का पड़ाव डालकर तुम्हें भी देखती जाऊं। शंकरम् जरा जीजाजी को दुलहन के नख शिख का वर्णन तो कर के बता, कैसी थी?"

शंकरम् दुलहन का वर्णन कर रहा था तो अमृतम् हंसी से लोट पोट हो रही थी। निधि की समझ में कुछ नहीं आया, फिर भी उसका साथ देने के लिये वह हंसने लगा।

"अच्छा अब उठो और नहा आओ। खाना खायेंगे। पूरे सर में धूल भर गयी है, जल्दी करो।" कहती हुई अमृतम् भी उठ खड़ी हुई। निधि जाकर स्नान कर आया। कंघी कर, बनियान और लुंगी पहन, ऊपर ले अंगोछा डालकर आ गया। नीची जात होने के कारण नारायण के लिये पिछवाड़े कुएं की जगत पर परोसा गया। रोज़ होटल में खा चुकी थी इसलिए वह सामने के कमरे में बिस्तर बिछाने लगी। निधि, अमृतम् और शंकरम् तीनों ने एक साथ बैठकर खाया। शंकरम् दोस्तों के साथ सिनेमा देखने चल दिया। उसने कहा कि वह रात के शो के बाद मित्र के यहां जाकर सोयेगा और सुबह वापस आयेगा?

"पानी पड़ रहा है। सर्दी में सिनेमा क्या देखोगे। दोस्त को भी यहीं बुला लो और रात भर बातें करते रहना।" निधि ने कहा।

"एक कप चाय पी लेगा तो सर्दी छू मंतर हो जायेगी, है न शंकरम्।" अमृतम् ने कहा "पर जी कोई बात नहीं, सर्दी-वर्दी कुछ नहीं।" कहता हुआ शंकरम् चल दिया। नारायण भी उसके साथ हो लिया। उसने डिस्पेंसरी में अपना बिस्तर लगा दिया था। नारय्या ने निधि का बिस्तर बाहर के बरामदे से लगे हाल में ही बिछाया था और अपनी चटाई पीछे के बरामदे में। नारय्या भी शंकरम् के साथ चला गया।"

अमृतम् पान में चूना लगाती हुई पिछवाड़े आंगन की ओर देख रही थी। "यहां बड़ा अच्छा लग रहा है बिलकुल हमारे गांव का सा वातावरण लग रहा है।" दोनों कुएं के जगत तक गये। बदली चांद को छोड़ दूर भाग रही

थी। आसमान साफ होने लगा था। तारे स्वच्छंद चमक रहे थे। रह रह कर सफेद मेघ की एक टुकड़ी, सुहागरात के प्रथम मिलन पर घूंघट डालती पति को उत्तेजित करती जा छिपती थी। लगता दुलहन की भांति चांद को ढक-कर फिर विलग होती जाती थी। हवा में ठंडक तेज धारवाली तलवार है और शरीर में चुभती जा रही थी। वृक्ष के कंठ अपने में स्वर भर रहे थे। सर्प का तिरस्कार करते हुए कहीं पक्षी भीतर की वेदना को पंखों की फरफराहट से व्यक्त कर रहे थे। तपोभंग के प्रयास में जीतने वाले ऋषि की भांति प्रकृति मौन साधना कर रही थी।

"अरे जीजाजी। तुम चुप क्यों हो गये। मुझ पर गुस्सा तो नहीं आया? कुएं पर दोनों हाथ टिकाकर भीतर झांकते हुए अमृतम् ने पूछा।

"मुझे क्रोध आ भी जाये तो दुनियां का कुछ नहीं बिगड़ता और तुम पर मुझे अकारण क्रोध क्यों आने लगा?"

"उफ्! सर्दी लग रही है।" कहकर अमृतम् ने पल्ला खींचकर ओढ़नी की तरह लपेट लिया। पीले रंग पर हरे फूलों की छापवाली खद्दर की साड़ी पहने थी। बाहों के घेर को कस कर चौड़े पाड़ की जरी वाले काले खद्दर की चोली जिस पर काढ़े गये सफेद फूल चांदनी में बड़े विचित्र लग रहे थे।

"मैं एक बात पूछूं बुरा तो नहीं मानोगे?"

"हां-हां" पूछो। मैंने तुम्हें अपने बारे में जितनी स्वतंत्रता दी है उतनी और किसी को नहीं दी। तुम्हारे पास इतना अपनापा है कि मैं तुमसे निर्भय सब कुछ कह सकता हूं। हां, तुम अलबत्ता अपनी सभी बातें मुझसे कह नहीं पाती होगी। तुमसे छुपा रखने लायक मेरे पास कोई बात नहीं है।"

अमृतम् ने एक मीठी हंसी हंस दी और अनायास ही पेड़ की शाख को हिला कर पत्तों को उंगलियों से छूने लगी। वहीं झींगुर बोल उठा। "उफ बहुत सर्दी है चलो उठो भीतर चलें यहां रहेंगे तो बुखार आ जायगा, और मुझे तुम चांदनी में ठीक दिख भी नहीं रहे हो।" कहती हुई अमृतम् बरामदे तक पहुंची। फिर दोनों बैठक में आ गये। दोनों पुरानी बातें सोचने लगे।

जगन्नाथम् मद्रास में पढ़ रहा है। नागमणि ने शादी कर ली है। फिर सुशीला का प्रसंग आया। अमृतम् ने कहा—"मुझे लगता है कि सुशीला तुम्हें चाहती थी।"

निधि को इस बात पर हंसी आ गयी—बहुतों को जीवन में प्रेम का अनुभव नहीं होता सपनों में, किताबों में और कला में इस प्रेम के बारे में ब्यौरा पाकर तृप्त होना पड़ता है।

"तो क्या यह बात तुम पर लागू नहीं होती ?" अमृतम् ने गहराई जाननी चाही।

"प्रेम की आकांक्षा करना पुरुष के हिस्से में है तो स्त्री को उसे बांटना होता है।"

अमृतम् ने जम्हाई लेकर आंखें पोंछी और कमरे में जाकर पलंग पर बैठ गयी। उसने पूछा—"तुमने अपनी पत्नी के साथ गृहस्थी क्यों नहीं चलायी ?"

दयानिधि आराम कुर्सी डालकर बैठ गया ओर बोला—"प्रेम करने वाले विवाह नहीं कर सकते ओर विवाह करने वाले प्रेम नहीं कर सकते। यह इस देश के युवकों का इतिहास है।"

"तुम्हारे सभी विचार बड़े विचित्र होते हैं।" कहती हुई अमृतम् अंगड़ाई लेती हुई लेट गयी। "उफ् ये पिन चुभ रहे हैं।" कहकर उठी उन्हें हटाकर तकिये के नीचे रखकर फिर लेट गयी।

"तुम्हें नींद आ रही होगी—सो जाओ।" निधि उठकर अपने पलंग की तरफ जाने लगा।

"बैठो न जाने कितने दिन हो गये यूं बैठकर बातें करने को जी ललचाता है। मैं भी चलूंगी तुम्हारे ससुराल। दोनों जाकर इंदिरा को ले आयेंगे।"

"………."

थोड़ी देर बाद वह जाने के लिये उठा और जाकर चौखट के सामने बिछे पलंग पर लेट गया। कुछ देर तक दोनों मौन रहे। फिर अमृतम् ने आकर संदूक खोला जिससे कस्तूरी की सुगंध हवा में भर गयी। उसके बाद रुपयों की खनखनाहट—जाने अमृतम् क्या कर रही है—किवाड़ लगाने को कह दूं ?—चूड़ियों की खनखनाहट—बिस्तर झाड़ कर तकिये लगा रही—एक जम्हाई —फिर नीरवता।

"नींद आ गयी क्या जीजाजी ?"

"हां।"

"झूठे कहीं के।"

"बस अब आने लगी है।"

"जरा हालत ठीक-ठीक तो बताओ।"

"आंखें बंद करना—फिर एक आंख खोलना देखना उसे बंद कर दूसरी आंख खोलना देखना। दाहिना हाथ गर्दन के नीचे से निकालकर बायां हाथ रखना, करवटें लेना, चित्त सोना फिर पट हो जाना—तकिये में मुंह छुपा लेना।" अमृतम् हसते हंसते लोट पोट हो गयी। लग रहा था कि मृदंग की प्रतिध्वनि सुनाई पड़ रही है। फिर नीरवता छा गयी। सामने की छत वाली घड़ी ने ग्यारह बजाये। अचानक बिजली कौंधने लगी जैसे चमकती तलवारों को तोड़कर फेंक दिया हो। हवा के कारण खिड़की के किवाड़ आवाज करने लगे। बिछे पत्ते ऊपर उठ उठकर भीतर आने लगे। दीपक नृत्य करने लगा। बिजली की भयंकर कड़क सुन पड़ने लगी। दीवार पर टंगी निधि की मां का चित्र नीचे गिर पड़ा और शीशा टूट गया। अमृतम् ने उठकर शीशे के टुकड़ों को बीनकर एक कटोरी में डाला। दिया बुझ गया।

"मुझे डर लग रहा है, जीजाजी।"

निधि उठकर भीतर आया और दियासलाई ढूंढ़ने लगा। खिड़कियां बंद हो गयी। घुप अंधेरा छा गया। बाहर प्रकृति का भयंकर रुदन था। अमृतम् ने दिये पर हाथ रखा तो जलने के कारण चीख कर उछल पड़ी। निधि का हाथ उसके कंधे पर जा पड़ा। उसकी बांह पर अमृतम् ने अपना सिर रख दिया। निधि ने हाथ खींच लिया और जाकर खिड़की खोली। दियासलाई लेकर बत्ती जलाई। जाकर फिर पलंग पर बैठ गया।

"तुम्हें डर नहीं लगता ?" अमृतम् ने पूछा। निधि उठकर खड़ा हो गया। अमृतम् खटिया पर बैठी तकिये को गोद में रखकर दोनों पैर हिला रही थी। बिना किनारी वाली पीले रंग की रेशमी साड़ी और लाल रेशमी चोली। खद्दर की साड़ी में नींद नहीं आती रेशमी साड़ी से सर्दी लगती है। यह साड़ी तुम्हें कैसी लगी ? अच्छी है न ?" निधि की ओर उसने बड़ी दीनता से देखा।

"अमृतम्···।"

"क्या है जीजाजी ?"

"तुम यहां क्यों आयी हो ?"

"क्यों ऐसे क्यों पूछ रहे हो ?"

"दुनिया भर को कोई लगाव नहीं तो तुम अकेली को मेरे लिये इस विशेष लगाव का क्या कारण हो सकता है ?"

"दुनिया भर को क्यों होने लगा लगाव ? वह तो एक या दो को ही होता है। कैसे पगले हो तुम भी ?" अमृतम् की आंखें भारी होकर चमक रही थीं। आंख के नीचे झाईयां चांदनी में चंदन के वृक्ष सी झलक रही थी।

"अमृतम् ..।" उसकी समझ नहीं आ रहा था कि वह क्या कहना चाहता है। मुंह पर शब्द आते आते फिसलते जा रहे थे।

"क्या है जीजाजी ?"

हवा का एक झोंका आया, लहर की भांति पूरे कमरे को उसने समेट लिया दिये की लौ अंतिम नृत्य कर मूर्छित हो गयी। अमृतम् के हाथ उसके कंधों का सहारा लेने लगे मानो समुद्र में डूब रहे व्यक्ति को एक छोटी रबर की गेंद मिल गयी हो। उसके भीतर की कोई शक्ति उसे नीचे ठेलती जा रही थी। वह पलंग पर पायताने जाकर बैठ गया। घुप्प अंधेरा था उसकी आंखें अमृतम् के शरीर में जाकर खुलने लगीं। अमृतम् के पेट ने उसके ललाट को शीतल ज्वाला की तरह जला डाला। उसकी पलकों को अमृतम् के वक्ष काटे ले रहे थे। अमृतम् के दोनों हाथ उसे कहीं दूर बहुत दूर ले जा रहे थे। एक महान सौंदर्य की ज्योति में वह अपनी सुध बुध खो बैठा। अमृतम् का जूड़ा खुल गया। बालों ने उसे घेर लिया। निशीथ की भांति आंसुओं से साड़ी भीग उठी। अमृतम् की जांघे उस ठंडक में गरमाहट भर रही थीं। लगा कि आसमान उस अकेले पर निश्चित होकर बरस रहा है। उसके पीछे की गरदन पर आंसू फैलकर इंद्रधनुष की भांति छा गये। "ऊंह जी ..जा...जी।" टूटे स्वर में वह लय को खोजने का प्रयास करने लगी। धरती घूमने लगी। लग रहा था कि अखिल विश्व ही घूमता जा रहा है। बहुत गहरे—दूर—भीतर और करीब जाकर मिलकर एक हो—सारे रहस्यों को भेद कर—गहराईयों को नाथ कर शिखरों को जीत कर ये दोनों एक जीव होकर छटपटाते हुए विश्व के रहस्य को साधकर उसमें आज्य डाल दिया है। विचार—आलोचना—तर्क—चेतना सभी उत्तेजनाएं ज्वार पर चढ़े फेन की भांति बहती जा रही थी। दो प्राण सृष्टि की शक्तियों को केंद्रित कर जूझ रहे थे, पता नहीं क्यों

—शायद कहीं वह यथार्थ रही होगी। खून अपनी गति खोकर लोहे की पिघलन सा उफन कर शरीर को धोकर पवित्र कर रहा था। सभी इंद्रियों ने खुलकर जीवकण बनकर दो शरीरों को बदल डाला। शरीर अनुभव में आत्मा बन गया।

एक क्षण के लिये निधि का मन हल्का हो गया। आग में जली जूही के परिमल को अमृतम् की सांसों ने घेर लिया था। अलसकर, सूरज की गरमी से ओस की बूंद बन कर अमृतम् बिस्तर पर लुढ़क गयी। उस शरीर को कोई अपना नहीं कह सकता था। अनादि काल से सृष्टि में स्थिर रहती आ रही और तभी सोकर उठे अपनत्व भुला बैठने वाला तन था वह। दयानिधि बिस्तर से नीचे आ गिरा। अमृतम् के हाथ के नीचे का तकिया गिर पड़ा। उस पर सिर रखकर लेट गया। शक्तिहीन वर्षा रुक गयी। प्रकृति भी अवश, अशक्त होकर विश्राम लेने लगी। चांदनी विषाद पूर्ण विदा ले रही थी। घड़ी ने एक बजाया। निधि धीरे से उठकर अपने पलंग पर जा लेटा। तभी नारय्या और नारायण के लौटने की आवाज सुनायी पड़ी।

निधि की नींद उचट गयी। उठकर खड़ा हो गया। पर धरती पर पैर नहीं पड़ रहे थे। लगा कि उसमें परकाया का प्रवेश हो गया है। अमृतम् के शरीर की सुगंध उसे घेर रही है। तौलिये से उसने अपना मुंह पोंछा। कमरे में जाकर दिया जलाया। उसे डर लगा। लज्जा होने लगी।

दीपक ले जाकर अमृतम् का मुंह देखने की कोशिश की, पर देख न पाया लगा कि निद्रादेवी ही आकर सो गयी है उसने बत्ती रख दी और सीधे सड़क पर आ गया। आकाश की ओर देखकर पुलिया पर बैठ गया। पीछे गर्दन पर कुछ चुभने लगा। हाथ डाल कर निकाला तो एक बाल था। उसे डर लगा। अपने आपको ही वह एक विचित्र आदमी लगने लगा। पुराने विचार आदर्श और उद्देश्य और अपने आचरण अपने निज स्वभाव में परस्पर अंतर देखकर उसे डर लगने लगा। बड़े आश्चर्य की बात थी। अपना यह रूप उसे अभी तक पता नहीं था। अब वह उस वातावरण में नहीं रह सकता। सब कुछ दूषित हो गया है। भोर होते ही वह अमृतम् का मुंह कैसे देख पायेगा। अमृतम् ने बड़ी ही युक्ति से उसका असली रूप उसे दिखा दिया था और स्वयं आराम

से सो गयी थी। अब वह अपनी आंखों से उस स्थान और वहां के व्यक्तियों को नहीं देख सकता। चांद भी बड़ी विचित्र गति से भागा जा रहा था। घड़ी ने दो बजाये। भीतर जाकर उसने अमृतम् का संदूक खोला और बटुये में से 200 रुपये निकाल लिये और ताला बंद करके चाबियां अमृतम् के सिरहाने रख दीं। उसका एक बाल लिफाफे में सहेज कर रखा। होल्डाल बांधा। घड़ी ने तीन बजाये। अमृतम् अलसाकर करवट लेकर सो गयी। एक चिट्ठी लिखकर उसने नारय्या के सिरहाने रखी दूसरी चिट्ठी अमृतम् के तकिये के नीचे रख दी।

"तुम्हारा ऋण चुकाने का साहस करने वाला मैं कौन होता हूं।" इसे पढ़ कर अमृतम् जाने क्या सोचेगी? शायद कहेगी—"ऊंह जाओ भी, कैसी तमाशे की बातें करते हो?" दीवार पर टंगा कोट पहना। एक बार दीपक लेकर अमृतम् का मुंह देखा। सोचा कितना पवित्र और निर्मल हृदय है तभी इतनी शांति से सो रही है।

दीपक रखकर किवाड़ लगा दिये। होल्डाल लेकर बाहर सड़क पर आ गया। घड़ी ने चार बजा दिये। विजयवाड़ा की गाड़ी पकड़ने के लिये आधा घंटा था। उसने सोचा सूर्योदय से पहले ही छूट जायेगी।

प्रस्तर-प्रांत

दयानिधि को कर्नूल आये दो हफ्ते हो गये। सरकारी अस्पताल के पास ही एक कमरे में रह रहा था। किराये पर साईकिल लेता दवाइयों का थैला लटकाकर शहर के आसपास फैले सुदूर गांवों तक जाकर रोगियों की चिकित्सा करता। साथी डाक्टरों, हैल्थ इंस्पैक्टरों के साथ दोपहर वहीं भोजन, कर फिर आसपास के गांवों में घूमता और काफी रात ढले घर वापस आता। जरूरत पड़ती तो मरे हुए रोगियों की लाशों के अंतिम संस्कार में सहायता भी करता। होटल का मालिक मुफ्त में खाना दे देता था। कभी कभी तो वह रात को भी घर नहीं लौट पाता था।

कर्नूल का इलाका बड़ा ही विचित्र था। मीलों तक कहीं पेड़ का निशान नहीं तो उसके आगे मीलों रेत के मैदान और उसके बाद लगातार चट्टान ही चट्टान दीख पड़ते और उससे आगे कठोर भूमि पर उगी घास की कालीन। ये तीन पत्थर तीनों ओर और उन्हें ढकता हुआ एक और चपटा पत्थर बस इसी का नाम घर था। कुछ घर तो पत्थर में सुरंग करके बनाये गये थे। ऊपर ढके पत्थर में एक सुराख होता बस सूरज की रोशनी भीतर पहुंचने का वही एक रास्ता होता था। तालाब, नदी नाले, पोखर, कुएं, कुछ भी नहीं थे। दूर दूर तक इंसान भी नहीं दिखते थे जहां दस भेड़ें तीन बैल दो मुर्गियां हों उसे बस्ती की संज्ञा मिल जाती थी। एक बुढ़िया बैठी कुछ कर रही होती।

काली साड़ी शरीर की एक लपेट के लिए भी काफी नहीं होती थी। बुढ़िया की बाहें थैलों सी झूलती, सन जैसे सफेद बाल, झुर्रियों में छिपी आंखें लटकते ओंठ और झुकी कमर, यह रूप रेखा भी आदम की संतान में गिनी जाती थी। बूढ़ा घुटनों तक धोती का टुकड़ा लपेटे कमरे में काली पेटी बांधे मटमेला सा एक टुकड़ा सिर पर बांधे लकड़ी चीरता। वहां बुढ़ापा ही बुढ़ापा था।

युवापन की अल्हड़ता चिराग लेकर ढूंढने पर भी नहीं मिलती। मां बाप की कोख से बूढ़े ही पैदा होते। पत्थरों के बीच खेलते, सीपियां बटोरते बच्चे भी बूढ़ों की सी हंसी हंसते दीखते थे। उनके चेहरों पर संतोष, चेतनता, यौवन, उत्साह कुछ भी नहीं था। अकाल देवता की संतानें, भूख, प्यास मानो इस रूप में अपने आपको प्रकट कर पैदा होतीं और मर जातीं थीं। उस इलाके से किसी दूसरे इलाके के मनुष्य का कोई वास्ता नहीं था सिर्फ भगवान के अलावा। वहां बस रहे लोगों का अपना कोई अस्तित्व नहीं था हरकत करते से शव थे—पत्थर ही पत्थर बुत लगते थे—वह चलते फिरते पत्थर थे। इस प्रदेश का रायलसीमा के स्थान पर (प्रस्तर प्रांत) नामकरण किया जाता तो अधिक उपयुक्त होता।

अनंताचारी से निधि का परिचय हुआ था मुनिमडुगु नामक बस्ती में। उनकी बड़ी बेटी लक्ष्मी को बीमारी लगी थी तो निधि उसकी चिकित्सा करने गया। लक्ष्मी को प्लेग होने की बात सुनकर पति और ससुर उसे वहीं छोड़कर दूसरी बस्ती चले गये। अनंताचारी के आने के दो दिन के भीतर ही लक्ष्मी की चार वर्षीया बेटी इसी बीमारी के कारण चल बसी थी। बच्ची का शव छोड़कर वापस आते आते अनंताचारी और निधि को आठ बज गये थे। पूरी रात लक्ष्मी को धीरज देने में बीत गयी। भोर तड़के दोनों ने कुलियों को साथ लेकर दो मील दूर एक झोंपड़ी बनवा दी और सुबह होते ही लक्ष्मी को भी वहां ले गये। चार पांच दिन तीनों वहीं रहे कि इतने में लक्ष्मी का पति आकर उसे कर्नूल लिवा ले गया।

अनंताचारी अनंतपुर जिले के वज्रकरूर शहर से छह मील दूर न्यायामपल्ली गांव के रहनेवाले थे। उन्होंने कांग्रेस के कार्यकर्ता बनकर काफी सेवा करके आसपास के गांवों में काफी ख्याति आर्जित की थी। आचारी अपना

खानदानी पेशा यायावरी छोड़ अब खेती करने लगे थे। और प्रतिदिन रात को भोजन के उपरांत कथावाचन करते थे। चार लड़कियां और तीन लड़के कुल उनकी सात संतानें थीं जिनमें दो बेटियों का विवाह हो चुका था। अब कात्यायनी शादी की लाइन में थी। बड़ा बेटा राघवुलु इंजीनियरिंग पढ़ रहा था। दोनों छोटे लड़के स्कूल में पढ़ते थे। राधा सबसे छोटी थी। जमीन जायदाद न होने पर भी परिवार को खाने पीने की कमी नहीं थी। दिन कट जाते थे लोगों को आश्चर्य होता था कि इनके पास पैसा कहां से आता है। समाजसेवक और पंडित होने के नाते तालुके भर के लोग आकर कुछ न कुछ नजराना देते रहते थे। अनंताचारी के बड़े भाई बल्लारी में काफी स्थापित प्राप्त वकील थे पर दोनों भाईयों में स्नेह संबंध दृढ़ नहीं थे। अनंताचारी जब जेल गये तो उनके पीछे परिवार की देखभाल मित्रों ने ही की थी। भाई चुपा गये। पर उसी भाई के घर में कोई बीमारी हो या कोई मंगल कार्य संपन्न होता हो तो अनंताचारी जाते और अपना कर्तव्य निभा आते थे। उनकी पत्नी को यह सब अच्छा नहीं लगता था लेकिन वह अपना असंतोष व्यक्त न करके पति का साथ देती और मर्यादा पूर्वक गृहस्थी चलाती।

अनंताचारी ने निधि को अपने घर आने का निमंत्रण दिया। उन्होंने कहा कि उनके गांव में डाक्टर की सख्त जरूरत है वहां उनके खाने पीने का भी प्रबंध कर दिया जायेगा। जहां उनके मित्र और संबंधी कोई नहीं, इससे तो अच्छा है परिचित व्यक्ति जहां हों वहीं रहा जाय। निधि को समझा बुझाकर उन्होंने तैयार कर लिया। कर्नूल जाकर बेटी को भी लिवा लाये। निधि और लड़की को लेकर हफ्ते के भीतर वे अपने गांव न्यायमपल्ली लौट आये। तब तक हैजा वहां भी पहुंच चुका था। अनंताचारी ने निधि के लिए एक साईकिल खरीद दी। उस पर थैला लटकाये निधि पुन: गांवों का चक्कर लगाकर रोगियों की चिकित्सा करने लगा। कभी कभी तो किसी गांव की पुरानी फूस झोंपड़ी में या टूटे मंदिर में उसे भूखे ही रात बितानी पड़ती थी। मंदिर के खंडहर के भग्न देवता की मूर्ति के समक्ष ही जाने उसने कितने ही नरकंकालों का दाह संस्कार किया था।

तीन हफ्ते में बीमारी का प्रकोप कम हुआ और निधि को कुछ विश्राम

मिला। अनंताचारी ने अपने घर में ही एक कमरा निधि को दे रखा था। घर उतना बड़ा नहीं था, पर पिछवाड़े काफी खुली जगह थी। कमरे में पुरानी आराम कुर्सी और पुराण ग्रंथ रामायण, भागवत, भगवद्गीता, भट्टि-विक्रमार्क की कहानियां, कांग्रेस के कार्यक्रमों की पुस्तकों से भरी पुरानी अल्मारी थी। अब निधि की दिनचर्या इस प्रकार हो गयी थी सुबह उठकर काफी लेते ही साईकिल पर वज्रकरूर और आस पास के गांवों में जाकर रोगियों को देख आना, घर लौट कर भोजन करना और फिर बस्ती के रोगियों को देखना और शाम को पुराण श्रवण या रामायण कथा सुनना।

एक दिन निधि पिछवाड़े स्नान के लिए रसोई में से होकर जाने लगा तो अनंताचारी के दूसरे पुत्र शेषु ने उसे रोका और दूसरे कमरे से होकर जाने को कहा। अब तक निधि को भोजन भी रसोई में नहीं बल्कि बाहर कराए जाता था। निधि ने अनंताचारी से बात की जिसके परिणाम स्वरूप रसोई में से जाने की अनुमति अनंताचारी की पत्नी ने दे दी, खाना बाहर ही होता रहा। इन्हीं दिनों दूसरी बेटी माधवी मायके आई। घर में किसी को कुछ न कुछ बीमारी होती और निधि दवाइयां देता ही रहता। वह उस दिन दवा-इयां खरीदने बल्लारी जाकर सौ रुपये की दवाइयां खरीद एक हफ्ते बाद घर लौटा था। उसके पहले ही दिन माधवी के लड़की हुई थी। उसका कमरा सौर गृह बन गया था सो उसने अनंताचारी से सलाह की। पिछवाड़े दूर ठूंठ से एक वृक्ष के नीचे पत्थर बिछवाकर लकड़ियां चारों कोनों में गाड़कर ऊपर ताड़ के पत्तों की छीजन डालकर अपने लिए एक कमरा तैयार कर लिया था और उस कमरे का नाम उसने शांति कुटीर रखा। अपना होल्डाल, बिस्तर दो तख्त कुर्सियां बिछवा लीं और वहीं रहने लगा। भोजन और पुराण श्रावण के लिए अनंताचारी के घर जाता था, बाकी समय अपने कमरे में पड़ा रहता।

निधि अपने विवाह की बात राजम्मा से छुपा न पाया। राजम्मा को उस पर दया आ गयी! उसने स्वयं जाकर इंदिरा को लिवा लाने का प्रस्ताव भी रखा। पर निधि फीकी सी हंसी हंसकर चुपा गया। उसने कोई रुचि नहीं दिखायी। अनंताचारी के साथ कभी कभी वह सभाओं में भी जाता और कभी कभी खुद भी भाषण देता। लोग उसका आदर करने लगे और कई

एक तो मित्र भी बन गये। कुछ दिन तो वज्रकरूर में एक निःशुल्क अस्पताल खोलने के लिए चंदा इकट्ठा करने में बीत गये। इसके बाद वह दो हफ्ते तक बुखार से तड़पता रहा।

उस दिन इतवार था। उसका सिर भन्ना रहा था। शीशे में उसने अपना चेहरा देखा। दाढ़ी बढ़ गयी थी, बनाने की ताकत नहीं थी। तभी कुछ पुरानी स्मृतियों ने उस पर दबाव डाला। मनुष्य में दिमाग न होता तो अच्छा था या फिर वह सिर के ऊपर अधकटी नारंगी का गोल, जैसा चिपका रहता ताकि जब चाहे उसे निकाल कर उसमें जमी बैठी धूल को फूंककर उसे साफ करके लगाया जा सकता। इंसान के पास भूत और भविष्य होने ही नहीं चाहिये क्योंकि ये दोनों सतत वर्तमान को मारने और उसकी हत्या करते रहते हैं। भूत अपना निर्णय देता है और भविष्य दंड है। इन दोनों के बारे में सोच सोचकर, शक्ति खोकर ढांचा बना मनुष्य वर्तमान में अपनी आत्महत्या करता है।

घंटों इस प्रकार सोचता रहा फिर अचानक उसने आंखें खोलीं तो हवा के कारण पत्ते और धूल उस पर आ जमे थे। भेड़ों के झुंड की तरह पश्चिमाकाश में मेघ सूर्य रश्मियों को चरते जा रहे थे। घास की ढेर जैसी रश्मियां खतम होती जा रही थीं। लगता था कि पहाड़ियों पर पत्थर हिल रहे हैं धरती की तपस्या से खुश होकर आकाश बरस रहा था। पत्थरों के बीच झर रही बूंदें देखकर पता लगा कि मामूली सी वर्षा थी। प्रहरी की भांति सूरज किरणों की लाठी ले बादलों के बीच उन्हें हिलाकर झाड़ रहा था। निधि ने घूमकर देखा कात्यायनी कुछ संवार रही थी। बोली—"अरे बूंदें काफी तेज हो गयी हैं।"

"बारिश में मत भीगो घर चली जाओ।"

"यहां सर्दी है। आप भी भीतर चलिये न?"

"कोई बात नहीं, यहां अच्छा लग रहा है।"

"ओढ़ने के लिये शॉल ले आऊं?"

"नहीं—रहने दो।"

कात्यायनी सिर पर तोलिया डाले भीतर गयी। रंगय्या ने फ्लास्क में से कॉफी गिलास में डालकर पकड़ायी और बोला—"मांजी बुला रही है।"

"कह देना यहीं ठीक हूं।"

वर्षा पत्थरों से फिसलकर रेत में रास्ता बनाती, छोटी छोटी नालियां बनकर कमरे के इर्द गिर्द बह रही थी। रंगय्या ने कहा—"एक नाव बनाकर दीजिये न ?"

कागज फाड़कर उसने बड़ी नाव बनायी। रंगय्या ने उसे पानी में छोड़ा। कुछ दूर बहकर वह कंकड़ों से जूझने लगी। वर्षा रुक गयी, बादल छंट गये थे। स्नान के लिये पानी में उतर कर, सर्दी सह न पाने के कारण बाहें पसार कर कंपकंपाती हुई सूरज की किरणें पसर कर जा फैली थीं। तभी कात्यायनी ने आकर उसे एक लिफाफा पकड़ाया। चिट्ठी जगन्नाथम् ने लिखी थी। उसमें एक ही पंक्ति महत्व रखती थी कि अमृतम् को छह महीने का गर्भ है।

दयानिधि उठा और उसके पैर पश्चिम की ओर चलने लगे। सूर्यास्त के लिये दो घंटे शेष थे। अभ्यंग स्नान करके खड़ी पवित्र स्त्री की भांति पावन सूर्य चमक रहा था। निधि ने सोचा इस कांति से शरीर को भिगोकर सुखाने से मैल और पाप धुल कर शरीर पवित्र हो जायगा। एक फर्लांग दूर जाकर पगडंडी पत्थरों में खो गयी थी। चट्टानों की ठंडी छाया भूमि पर पड़ रही थी। पैरों के नीचे रेत सर्दी से कांप रही थी। पगले जंगली पौधे संतोष से भरकर मूर्छित हो गये थे। पक्षी अपनी जाति और नीति को भुलाकर जोड़ों में सूर्य की ओर भागते जा रहे थे। गुदगुदी के कारण विलग होकर रेत पीछे छिप गयी थी और पैरों के नीचे पत्थर हंसने लगे थे। घास नींद में श्वास की भांति हिल रही थी। चट्टानें, पत्थर, पक्षी, कीट, पतंग सभी सूर्य की तरफ बढ़ते जा रहे थे।

घंटे भर तक वह चलता रहा, अब आगे पैर नहीं पड़ रहे थे। छाती में दबाव आ गया था। एक काले से पत्थर पर बैठ गया। अपनी बस्ती, शहर, जिला, राज्य, देश सभी को छोड़कर भागा जा सकता है पर अपने ही शरीर को छोड़ कैसे भागे ? जगन्नाथम् की चिट्ठी पुन: एक बार पढ़ी। "छह मास का गर्भ।" उसे डर लगने लगा कि वह स्वयं ही उसका कारण है। अमृतम् क्या करेगी ? पति उस पर संदेह नहीं करेगा ? अगर वह उसे छोड़ दे तो अमृतम् का क्या होगा ? एलूर से यहां आकर उसे पांच महीने ही तो गुजरे हैं। अमृतम् को अब छह महीने का गर्भ है। महीनों का ठीक ठीक हिसाब कौन

लगा सकता है । अमृतम् ने झूठ बोल दिया होगा । सच बात कौन जान पायेगा ? अमृतम् को संतान की प्राप्ति उसके द्वारा न हो तो कोई चिंता की बात नहीं । पर अब सत्य तो अपने ही मुंह में कपड़े ठुंसे चुपचाप देख रहा है । नैतिकता का स्वरूप क्या ऐसा ही होता है ?''

उसने जो कुछ किया था वह अच्छा था या बुरा, निर्णय करना कितना कठिन है । उसका परिणाम जताकर प्रकृति उसका मूल्य निर्धारित करती है पर उसका अपना मत क्या है ? उस वातावरण और परिस्थिति में कोई भी व्यक्ति हो वही करता । कोई दो विरोधी लिंग वाले व्यक्ति उस समय वही करते जो उसने किया था । अहं, व्यक्तित्व, स्वार्थ, मैं का बोध सभी को नाश करने वाला वह एक नश्वर अनुभव है । उससे परे और असंपृक्त रह सकने वाले देवता या महात्मा ही हो सकते हैं, मानव नहीं । मानवता ही सर्वोत्तम साधना है वही एकमात्र साधन है । परिणाम से उसका कोई वास्ता नहीं, पर समाज परिणाम को ही मानता है ।

सहानुभूति, प्रेम, निर्मल आनंद ये ही महान मूल्य हैं । उस अनुभव ने ये बातें दो व्यक्तियों को प्रदान कीं । इन्हीं मूल्यों को समस्त संसार पा सके तो दुनिया स्वर्गतुल्य हो जाय । मानवता रहित व्यक्तियों के कल्याण के लिए समाज द्वारा निर्देशित विवाह जैसी संस्था के विरुद्ध विद्रोह करके वह मानवता के प्रति प्रतिबद्ध हुआ था । उसके इस कार्य के प्रति संवेदना न दिखाकर उल्टे दंड दिया था । साधारण स्तर के लोगों का संवेदनशील न होना भी स्वाभाविक है । सही अर्थों में संस्कारी जीव अल्प संख्या में होते हैं । ऐसे व्यक्ति पूरे युग में एक या दो जन्म लेते हैं, पूरे देश में एक या दो मिलेंगे । अपना आचरण अपने को अच्छा लगे उसे वह सही और सच्चा है । व्यक्ति से इसी बात की अपेक्षा है । वह अपने को दूसरों की आंखों से देखकर उसकी कीमत आंके और उसके आधार पर अपने और दूसरे के आचरण का खंडन करे, यह मात्र कायरता है ।

इतना सब कुछ सोच गया, फिर भी निधि को शांति नहीं मिली । यह सब मात्र अपने आचरण का समर्थन करने के लिए तर्क, भाषा भावों के साथ व्यभिचार करने जैसा लग रहा था । यह मानना गलत है कि आजकल के लोग पतित होते जा रहे हैं । पतित होना तो अनादि से चला आ रहा है ।

अंतर और आधुनिक दृष्टि यही है कि पतित होने का समर्थन करके दूसरों से करवा कर हो सके तो व्यक्ति अपना पतित होना मान ले। यही सभ्यता की निशानी है। राधाकृष्णन् के ये वाक्य उसे स्मरण हो आये। मस्तिष्क बड़ा ही विचित्र है। किसी विषय को अगर हम अच्छा मान भी लें तो मस्तिष्क उसे समर्थन दिलाने के कई तर्क खोज डालता है। आचरण के लिये हजारों आदेश कारण होते हैं। ये आदेश शरीर में जन्म लेते हैं, अच्छे बुरे का निर्णय भी शरीर ही करता है। तब विवेक दूसरी दुनिया में उदित सूर्य की भांति देखता खड़ा रहता है।

उसकी आंखों से अनायास ही आंसू वह निकले। कई स्मृतियों को सहन न करने वाली आंखों ने आंसुओं को विसर्जित किया। भविष्य रहित हो भूत को छुपाने में असमर्थ आंसू की हर बूंद काले पत्थर पर गिरकर फटती जा रही थी। दुख ऐसा था जिसे मृत्यु भी मिटा नहीं सकती थी।

दूर उसने देखा कात्यायनी रंगय्या और ग्वाला भादप्पा उसकी ओर आ रहे हैं लाल चमकती साड़ी में कात्यायनी रश्मि सी लग रही थी। पैरों की उंगली से जमीन पर मिट्टी में लकीरें बनाता बैठा था निधि। कुछ सख्त महसूस हुआ। उसने पैर की उंगली से ही खोदना शुरू किया कुछ लाल सा दिखा। रंगय्या भी आ पहुंचा और पत्थरों से खेलने लगा!

"मां ने आपको बुलाया है।" कात्यायनी बोली।

"मेरे लिये इतनी दूर क्यों चली आयी?"

कात्यायनी कुछ बोली नहीं, पर उसकी आंखें नीचे पृथ्वी पर लगी थीं। कुछ लाल सा दिखा तो उसकी ओर झुक गयी। और हाथों से जमीन खोदने लगी। हरे रंग की छाया लिये लाल पत्थर था जो चारों ओर एक और एक और पत्थर से जकड़ा था। दोनों ने उसे बाहर निकाला। सूरज नीचे फिसल गया। अंतिम किरणें कात्यायनी के कपोलों से छू गयी। खून के धब्बों जैसे उसके कपोलों पर किरणें चमक उठीं। शिकार समाप्त कर तीरों को तरकस में सहेजकर सूरज चला गया। "अरे क्या है।" कात्यायनी उसे उठाकर आश्चर्य से देखने लगी। निधि ने पुकारा "कात्यायनी।" इस निर्जीव स्वर को प्रकृति के अलावा कोई भी न सुन पाया। पत्थरों का इलाका भी हंस सकता है। यह सोचते हुए निधि ने घर का रुख किया। लाल पत्थर लेकर कात्यायनी, रंगय्या और मादय्या भी पीछे हो लिये।

कात्यायनी

आठ महीने बीते। न्यायमपल्ली, "न्यायपुरम्" कहलाने लगा। बंबई से जौहरी हीरा लाल ने आकर कात्यायनी का मूल्य आंका, यह लाल हीरे की कनी थी। देखने में पके बड़े लाल टमाटर सा लगता था। भीतर हरी रेखाएं चमक रही थीं। शाम के समय पोखर की काई में चमकते लाल मेघ की छाया सा लगता था। कात्यायनी को बेल्जियम के सियान ब्लामर्ची ने काटकर तराशा था और हीरा बनाया था जो उनतालीस कैरेट भारी था। कात्यायनी उस घर में नौ दिन अपनी प्रदर्शनी करती रही। दर्शकों की सुविधाओं के लिए आस पास फेरी वालों की दूकानें लग गयीं। मोटरों, घोड़ा गाड़ियों बैल गाड़ियों पर लोगों का तांता लग गया। इसके पहले उस क्षेत्र में पाये गये हीरों के बारे में लोगों ने सिर्फ सुना था, पर अब वह अपनी आंखों से उसका प्रत्यक्ष वैभव देख पा रहे थे। पत्रिकाओं ने प्राचीन वज्रों की महिमा गायी। फिर हीरालाल जौहरी आकर उसे खरीद कर ले गया।

हीरे के लिए मिली रकम में से एक तिहाई निधि ने सरकार को दे दिया कि वहां हीरे की खानों का खुदान प्रारंभ करने के लिये अनुमति और आवश्यक सहायता दे। उस क्षेत्र में कई पूंजीपति भी इस कार्य की लागत के लिए आगे बढ़े। बंबई से इंजीनियर आये और वज्र प्राप्त होने वाले स्थान की जांच करके उन्होंने प्रारंभिक योजना बनायी। विदेशों से मशीनें आयी। आस

पास की गरीब जनता को नौकरी मिली। अब उसमें 400 मजदूर काम करने लगे। खानों से कुछ दूर हटकर उनकी झोंपड़ियां बन गयी, उसमें काम करने ऊंचे कर्मचारी भी लगभग एक दर्जन के करीब वही आसपास बस गये। अनंताचारी पूरा काम अपनी देख रेख में करवाते। उनका घर दो मंजिला हो गया। चारों ओर चाहरदीवारी भी उग आयी। निधि का शांति कुटीर एक कलात्मक शांति मंदिर में बदल गया जिसे आधुनिक भवन निर्माण विशेषज्ञों ने तैयार किया था। आस पास बगीचा—सामने एक फव्वारा लग गया, पर उसमें से पानी नहीं आता था। गहरे कुएं खुदवाकर रिजरवायर लगाये बिना पानी आना असंभव था। तालाब खुदवाना प्रारंभ हुआ। मैसूर से शिल्पी बुलवाया गया उसने निधि की मां की एक पत्थर की मूर्ति बनाकर फव्वारे के बीचों बीच लगाया। लोगों ने शांति मंदिर दुनिया का आठवां आश्चर्य माना। दिन आराम से निकलते जा रहे थे। निधि रायलसीमा में पत्थरों के अलावा और कुछ न होने से जिस निष्कर्ष पर पहुंचा था उसे अब बदलना पड़ा। काम करते मजदूरों को देख निधि आनंद से भर जाता था। काले काले मजबूत पुट्ठे वाले, कड़ी धूप में पसीना बहाते उन मजदूरों को देख कर निधि सोचा करता, पानी में भीगे काले पत्थरों जैसे तन लिये ये व्यक्ति क्या सचमुच आदम की ही संतानें हैं? प्राणशक्ति किसमें है व्यक्ति के हिलने-डुलने में अथवा श्रम में, या इस काम में? कहां छिपी है वह—बिना हाथ पैर हिलाये दुनियां को देखते रहने में या मनुष्य की भाषा में अथवा सृष्टि में?" निधि बिलकुल नहीं समझ पाया। जानने के लिए उसके पास समय नहीं था। निरर्थक बातें सोच सोच कर समय न बरबाद करने में ही शायद प्राणशक्ति छिपी है। सोच ही रहा था कि अचानक उसने राजम्मा को देखा जो छतरी लगाये मजदूरों पर अधिकार चला रही थी। पीछे से अनंताचारी ने आकर पत्नी को डांटा। राजम्मा अपने बड़प्पन को जताने के लिए मजदूरों को बीच बीच में डांटती होती तो उसका पति परिहास कर कभी उसे डांट कर तथा कभी उसका मजाक उड़ा कर उसे रोकता निधि को इस पर हंसी आयी। उसने कहा इन दोनों का हृदय कितना सरल और निश्चल है। सूखने को डाले गये सफेद कपड़े की तरह बिलकुल साफ। सोचने कहने में, सोचने कहने और करने में कपड़े और उसमें छिपे भीगेपन जैसी अन्विति है। मिस्त्री मरि-

पप्पा चेट्टी की हंसी मूंछों के पीछे जा दुबकी। निधि को जब मालूम हुआ कि ये मनुष्य भी हंस सकते हैं तो उसका मन और भी हल्का हो गया।

खानों की खुदान से संबंधित पूरे काम आचारी ही देखते। निधि के जिम्मे दूसरे कई काम थे। वहां एक अस्पताल खोलने, रोगियों के लिये कमरे बनवाने जैसे काम उसके हिस्से में थे। उसने पहले चार कंपाऊंडर और चार नर्सों की नियुक्ति की। अस्पताल तक आ सकने वाले रोगियों की निशुल्क चिकित्सा की जाती थी। राजम्मा की सलाह पर वहां एक निशुल्क स्कूल भी खोला गया जिसमें वयस्क भी आकर पढ़ने लगे। एक मास्टर रखा गया। साथ अनंताचारी और शेषु भी जाकर लो ों को पढ़ाते।

किसी को भी फुरसत नहीं थी। उसी दिन नारय्या अमृतम् के गांव से होता हुआ वापस आया। अ ृतम् द्वारा भेजी गयी ईख की गांठें और शीरा अपने कमरे में रखा। निधि ने अमृतम् से उधार लिये रुपये नारय्या के हाथों वापस भिजवाये थे। उसने पूछा—"अमृतम् ने पैसे लिए कि नहीं ?"

"पैसे भला किसे बुरे लगते हैं। उसके पति ने ले लिये।"

"हां अमृतम् ने कुछ नहीं कहा ?"

"कहती क्या, वह तो पलंग से नीचे उतरती ही नहीं। पैर भारी है दो तीन दिन में बच्चे को जन्म देगी। मुझे तो उन्होंने चीन्हा ही नहीं। मेरे कपड़े देखकर जमींदार समझने लगीं।" कहते हुए नारय्या मुस्करा कर अपने सफेद कपड़ों पर गर्व करने लगा और फिर बोला, "यह धोती उन्हीं की दी है। यह लीजिये चिट्ठी।"

निधि के मन में कई शंकायें उठीं। उसकी समझ में नहीं आया कि नारय्या से पूछे या नहीं। वह पूछना चाहता था कि चिट्ठी सबके सामने लिखकर दी या एकांत में लिखी थी। जब उसके बारे में पूछताछ कर रही थी तो पास और कौन था ? निधि ने पूछा—"तुम यहां से कब निकले ?"

"तड़के ही।"

"चिट्ठी भी तभी लिखी थी ?"

"नहीं पिछले दिन रात को लिखकर दी थी।"

"जाने कब लिखा होगा ?"

"पता नहीं।"

"कुछ और कहा था ?"

"ऊंहुं यहां की खबरें खोद खोदकर पूछ रही थी। उनके मरद तो बस हंसते ही रहे।"

"क्यों ?"

"पता नहीं। मुझे तो अच्छा नहीं लगा।"

"तो कहो दोनों बड़ी उमंग में दीख रहे थे ?"

"हां उमंग क्यों न हो। मलाई घी दूध। उनका क्या ?"

"अलग से कुछ संदेश भेजा था ?"

"नहीं, पर बूढ़ी शायद उनकी सास होगी उन्होंने आपको अपने गांव आने का न्यौता दिया है। अरे वह बछड़ा भीतर आ रहा है। खूंटी पर बांध आता हूं।" कहता हुआ नारय्या निकल गया। निधि छत पर चला गया और चिट्ठी खोली। सामने मां की तस्वीर टंगी थी उसे उसने पलटकर टांग दिया और पढ़ने लगा—"नारय्या ने सब कुछ बताया है। तुम इतने बड़े आदमी हो गये हो, हम सबको बहुत खुशी हुई। हमने तो सोचा था कि तुम निरे भोले हो पर तुमने आने पाई का हिसाब भी याद रख कर पैसा वापस कर दिया। अब उधार चुक गया—हमारी तुम्हें क्या जरूरत होगी ? है न ? दो महीने के बाद कभी हो सके तो एक बार इधर आ सकोगे न ? हां, तुम क्यों आने लगे हम गरीबों के यहां ? कभी हमीं चले आयेंगे तुम्हारे पास। जग्गू पास हो गया है। आगे पढ़ने से इंकार कर रहा है। एक हफ्ते में यहां आ जायगा। कभी कभी चिट्ठी भेजकर याद तो करोगे न ?"

जिस अमृतम् की उसने कल्पना की थी। वह उस चिठ्ठी में बिलकुल नहीं थी और न ही उसमें वह अमृतम् थी जिसे वह पहचानता था। पैसे न भेजता तो ठीक था। पैसों की बात पति से छिपाना चाहती थी। जाने दो महीनों के बाद क्यों बुलाया है ? शायद तब तक बच्चा हो जायगा। लड़का होगा या लड़की ? "हम" "हमें" में ही बात टालती है स्पष्ट रूप से "मैं" क्यों नहीं लिखती ? ऊंह वह तो बेकार सोच रहा है—शायद यह चिट्ठी अकेले में नहीं लिखी होगी—हां बस—इस तरह गोल-मोल घुमा फिरा कर लिखने का यही कारण हो सकता है। स्त्रियां बहुत चतुर होती हैं। उसने सामने देखा मां का चित्र हंस रहा था। अरे—इसे किसने घुमाकर

रख दिया। पीछे घूमकर देखा तो कात्यायनी थी।

"तुम्हीं ने इसे घुमाकर रखा है ?"

कात्यायनी ने सिर हिला दिया और बोली—"आपके लिये कोई आया है।"

"कौन है ?"

"पता नहीं।"

कुछ क्षण सोचकर फिर बोली—"योर वाईफ" उसे अपनी बात पर हंसी आ गयी। पर हंसी रोक ली। निधि उठकर खड़ा हो गया। कात्यायनी उतरकर नीचे चली गयी। निधि सीढ़ियां उतर रहा था कि सबसे निचली सीढ़ी पर उसे कोमली दिखी। वहीं से उसने नमस्कार किया। निधि उसे देखता ही रह गया। मुंह से बोल नहीं फूटे। कोमली में उसने जो परिवर्तन देखा था वह दुनिया के सभी अनुभवों की माप हो सकती थी। गत जीवन को उसने पूरे शरीर पर चादर जैसे ओढ़ रखा था। बाल बंधे हुए थे जिसका मतलब था लंबे बाल घटकर जरा से रह गये थे। कमर की चौड़ाई आधुनिक सभ्यता का प्रतीक लग रही थी। लगता था कि जंगल के पेड़ और झाड़ झंखाड़ों को समोकर वहां कारखाने उग आये हैं। सरोवर, तेल की खाइयां, फूल, चाय के प्यालियों की खनक, हड़तालें, पहाड़ियां, मिल मालिकों की ज्यादतियां, फैक्ट्री की चिमनी से उभरा धुआं पक्षी, भौंरे और कीट पतंग—शोर, बदबू और जुगनू बिजली के लट्टू—इन सभी परिवर्तनों के परिणाम का प्रतीक थी कोमली। पहले की सी चंचल दृष्टि अब उसकी आंखों में नहीं थी। दुनिया का अनुभव प्राप्त हो जाने की थकावट झलक रही थी आंखों में। मुंह एक ऐसा गुलाब लग रहा था जिसमें से इतर और रस निचोड़कर फेंक दिया गया हो। निधि ने उसे सीढ़ियां चढ़ आने का संकेत किया। सूर्योदय के प्रकाश में फीके पड़ते तारों की सी हंसी हंसकर कोमली सीढ़ियां चढ़ कमरे तक आयी और चौखट के पास बैठ गयी। निधि ने उसे कुर्सी पर बैठने को कहा। पूरा कमरा उसे आंखें फाड़े देख रहा था।

"नहाकर ही आपके सामने आना चाहती थी।"

"क्यों ?"

"रात भर नींद नहीं और ऊपर से रेल के धुएं से पूरा तन मैला हो गया है।"

"ठहरो। पानी गरम करने को कह आता हूं।" निधि उठकर बाहर गया। इतने में कात्यायनी काफी और नाश्ता ले आयी। कोमली ने उसे सिर से पैर तक देखा और बोली "मैं तुम्हारा नाम जानती हूँ।"

कात्यायनी फीकी हंसी हंस दी। इतने में निधि आ पहुंचा। उसने परिचय कराया और बोला—"इंदिरा नहीं है।"

"............"

"यह है कात्यायनी। मेरे आश्रयदाता श्री अनंताचार्युलु की तीसरी बेटी है।"

"नाम तो बड़ा मजेदार है—मेरा नाम जानती हैं।"

कात्यायनी ने अपना भोलापन हंसी में छिपा दिया।

"यह लाज तो बस शादी होने तक ही रहती है। उसके बाद सब कुछ छू मंतर हो जाता है।" कात्यायनी कोमली को नीचे गुसलखाने में ले गयी। नारय्या ने सामान छत के कमरे में रखवा दिया और कमरे में सोफा एक चारपाई और डलवा दी। निधि से उसने पूछा—"कौन है छोटे बाबू।"

"तुमने देखा नहीं ?"

"नहीं। लोग कह रहे थे कि कोई लुगाई है।"

"देख लेना नहाने के बाद।"

कोमली के बारे में अनंताचारी को सूचना देने के लिये निधि बाहर चला गया। पर कोमली के बारे में क्या बतायेगा। वह उसकी क्या लगती है ? इन प्रश्नों का उसके पास कोई उत्तर नहीं था। समाज की दृष्टि से कोमली को देखा जाय तो हर एक को वह अलग अलग संबंधों में दिखेगी। "सोचो और निर्णय करो कि मैं कौन हूं ?"यह लिखकर कोमली को एक शो केस में रखकर दर्शकों से उसका उत्तर पूछा जाय तो कैसा रहे ? निधि सोच रहा था। एक ज्योतिषी देखेगा तो कहेगा—इसने बहुत दुख सहे। चार बार मरणयोग का इसने सामना किया। जन्म पत्री में भविष्य में सुख की संभावना है। पति के कारण इसे कई समस्याओं से जूझना पड़ा है पर मित्रों की सहायता से सब ठीक हो जायगा। इसको संतान प्राप्ति का योग नहीं है।

एक जीव वैज्ञानिक कहेगा—"यह जीव दूसरे जीव की सृष्टि नहीं कर सकता। सहज प्राप्य मातृत्व का इसने तिरस्कार किया है सो इसे समाज से बहिष्कार किया जाता है। प्रकृति ने इसे जिस सौंदर्य को सृष्टि के विकास के

लिए प्रदान किया था इसने उसका उपयोग स्वार्थपूर्ति के लिये किया। इस प्राणी ने सतीत्व को अपना अस्त्र नहीं बनाया। यह आज पुरुषों ने ही स्त्रियों को दिया है। यह उसका सहज गुण नहीं है पर कुछ स्त्रियां सहजता से और रहस्यमय ढंग से उस पर आचरण करने लगती हैं। इस प्राणी नें उस अस्वाभाविक अस्त्र को कोई महत्व नहीं दिया। प्रकृति ने इसको सौंदर्य दिया और मस्तिष्क भी। पर ये दोनों उसके लिये निरुपयोगी प्रमाणित हुए। नीति है कि चतुर स्त्रियां सुंदर भी हों तो समाज के विकास के लिए खतरा उपस्थित हो जाता है।

एक डाक्टर उसे देखकर जो निष्कर्ष निकालता, निधि ने उसका अंदाज लगाया—इस रोगी ने अपने स्वास्थ्य के प्रति बिलकुल ध्यान नहीं दिया। इसके पूरे शरीर की मरम्मत करनी होगी। जांच और शस्त्र चिकित्सा के बाद ही इसके बारे में कुछ कहा जा सकता है।" समाज सुधारक कहेगा—"नीति और आदर्शों का पालन करते हुए यह स्त्री अपना जीवन बिता सकती थी। पर इसने उसे छोड़ दिया जिसका परिणाम अब वह भोग रही है। गृहस्थ जीवन का सुख और सामाजिक संस्था के लिए वेश्यावृत्ति किस प्रकार बाधक है, यह स्त्री उसे चरितार्थ करती है।

कवि की दृष्टि में यही कोमली एक दूसरे रूप में प्रकट होगी। कवि कहेगा उस दिन तमिस्रा को छेदने वाले इसके ये नेत्रयुग्म आज उस अंधकारमय क्षेत्र में जाकर अंधता को प्राप्त हुए हैं। सौंदर्य और यौवन को यह संजोये रखती, तो मैं इसके सौंदर्य की महिमा को शाश्वत बनाने के लिए गाता। धूमिल मेघों में धुंधली बिजली की चमक के कारण रक्तिम आभा लिये डोलते हैं ये नेत्रयुग्म। तुम मधु मंदिर अश्रु बरसाओ। मधुर सपने में खोकर शिलारूप पाने वाली हे प्रेयसी। तुम्हारे गीत मैं अब नहीं गा सकता और न ही तुम्हारी यह अश्रुधारा में पोंछ सकता हूं।

वह किसी को कैसे बताये कि विभिन्न रूपों वाली यह कोमली उसकी क्या लगती है। बचपन की मित्र कहकर उसका परिचय दे? छोड़ो भी—पूछने वाले का दृष्टिकोण जानकर कुछ न कुछ बता देगा। निधि आचारी के घर जाते जाते फिर वापस अपने घर लौट आया। कोमली तब तक स्नान करके साड़ी पहन चुकी थी। माथे पर बाईं ओर मांग के नीचे काला सा धब्बा दिखा जो

पहले नहीं था। सामने खड़ी कोमली के सामने पहले के उसके रूप की धारणा टिक नहीं रही थी। तब की कोमली खिलती कली थी जिसने अपना विकास रोक लिया था। आज वह फूल के भार से झुकी डाली के समान थी। पंखुड़ियों को कीड़ों ने खाकर छलनी बना दिया था और जिसमें से उसका मधु पूरा सोख लिया था। निशानी के रूप में वह धब्बा बच गया था।

"कहां से आ रही हो?"

"मैं?" कोमली अनमनी हो उत्तर दे रही है। "मैं जंगल से लौटी हूं।"

"मतलब?"

"अब मेरा मन शांत है। यहां मुझे अच्छा लग रहा है। बस और आगे कोई प्रश्न न कीजिये।"

"खैर, इतना बतला दो किधर का जंगल था वह?"

"श्मशान से लगा—नदी से लगा?"

"मछलियां नहीं थी वहां?"

"ओह। तो आपको अभी तक याद है। मैं बिलकुल बदल गयी हूं। बहुत गंदी लग रही हूं न? तुम तो बिलकुल वैसे के वैसे हो। रत्ती भर भी नहीं बदले।"

"तुम्हें मेरा पता कैसे चला?"

"तुम न बताओ तो क्या मैं खोज नहीं सकती? अखबार में छपी थीं तुम्हारी बातें। सब उसके बारे में चर्चा करते रहे। तुम तो बहुत बड़े आदमी हो गये।"

"तो यह कहो, बड़े बन जाने के बाद ही तुम मुझे पहचान सकी हो।"

"अब भी वही बचपने की आदत और बात नहीं छोड़ी। मैं हर वक्त तुम्हारे बारे में पता लगाती ही रही। तुम्हें चिट्ठी भी लिखी। लिखी कि नहीं, सच सच बताओ, अब तुम ही मुझे भूल गये बड़े बनकर। मैं हर दिन तुम्हारे पास आना चाहती थी, पर डर लगता था।"

"क्यों?"

"पता नहीं रात भर तुम्हारे बारे में सोचती थी। नींद भी नहीं आती थी। तुम्हीं को सपनों में देखती। सोचती थी, कितने बदल गये। एक बार भी तो आकर नहीं देखा कि मरी हूं या जिंदा हूं।"

"तुम्हारी याद मैं क्यों करूं ?"

"मुझे तुमसे लगाव है तो तुम्हें क्या मुझ से नहीं होगा ?"

"तुम्हारी मां कहां है ?"

"मां को तुमने याद रखा, पर मुझे नहीं। कहीं मर रही है बस पैसे के पीछे पागल है। उसके लिए तो वही सब कुछ है।"

"कैसी दूध की धोई जैसी बातें करती हो जैसे तुम्हें पैसे नहीं चाहिये ?"

"अब ऐसा कहोगे तो मुझे गुस्सा आ जायगा। मैं पैसा लेकर क्या करती और लेती भी तो किसके लिए ? उसी के कहने पर मांगा करती थी।"

"मां के ऊपर जब तुम्हें इतनी ममता है तो अब उसे अकेली छोड़कर कैसे और क्यों चली आयी ?"

"तुम्हारे लिए। समझे।" प्यार भरीं आंखें बड़ी सी फैलाकर बोली।

"आज यह अचानक नया प्यार कहां से पैदा हो गया ?"

"मुझे तुम पर पहले से ही था, पर जताना नहीं आता था। बचपना भी था, नींद नहीं आती थी। आती भी तो सपने में तुम्हीं दीखते थे। हम दोनों ताल के किनारे बैठे मछलियां पकड़ रहे होते---तुम मुझे तलैया में धकेल कर खड़े तमाशा देख रहे होते---मैं चिल्लाती होती कि बचाओ।" कहती कहती कोमली किसी पुराने सपने में खो गयी।

"मेरे लिये जाने और कितने लोगों को छोड़कर चली आयी हो ?" निधि की यह बात सुनकर कोमली गुस्से से भर उठी।

"तब भी तुमने ऐसे ही कहा था तो मुझे गुस्सा आ गया था और मैंने भी कुछ कह दिया था याद है न, तुमने मुझे थप्पड़ मारा था।" कहती हुई हथेली से अपने कपोल सहलाने लगी। बाहर किसी के होने की आशंका हुई तो कोमली ने किवाड़ पास लगा दिये और बोली---"मैं पतिव्रता होने का दावा तो नही करती पर···।"

"कहने की जरूरत नहीं, तुम्हारी हालत देखकर ही इसका अंदाजा लग सकता है।" निधि ने किवाड़ खोल दिये।

"सचाई को मरद सह नहीं पाते।"

"तुम इसे अपने अनुभव से जान सकी हो। है न ?" निधि ने दूर नारद्या को देख उसे बुलाया, मिस्त्री के बारे में पूछा और कहा, पांच बजे मिस्त्री और

मरियप्पा शेट्टी को लिवा लाये ताकि खुदाई का काम शुरू कर दिया जाय।

"अरे! कोमली तू यहां कैसे आयी। तुझे रास्ता किसने बताया?" नारय्या ने भीतर झांककर पूछ ही लिया।

"अच्छे तो हो न नारय्या?"

"हां ठीक हूं। तू कहां रहती है?"

"रहूंगी कहां? कहीं नहीं—सबके जैसे मैंने कहीं घर तो नहीं बनाया।"

"नाटक पूरा हो गया होगा।"

"कैसी बातें करते हो नारय्या—अब तुम्हें मुझे ऐसी बातें कहने का हक नहीं। मैं बड़ी हो गयी हूं। तुम मुझे पहली जैसी मत समझो।"

"कितनी ही उमर आ जाय, पर औरत जात का भरोसा नहीं।"

"घर आये मेहमानों का आपके यहां क्या ऐसे ही आदर किया जाता है?" निधि को लक्ष्य करते हुए कोमली ने पूछा।

"चिढ़ क्यों गयी? मैं तो पुरानी बातें याद कर रहा था।" कहता हुआ नारय्या बाहर निकल गया। निधि भी बाहर चला गया तो कोमली सोफे पर लेटी चुपचाप रोने लगी।

दो तीन दिन तक लगातार अनंताचारी के घर किसी न किसी बहाने लोग आते और अचरज से कोमली को देखते रहे। राजम्मा ने जब सुना कि वह निधि की पत्नी नहीं है तो उन्हें भी कोमली को देखने की इच्छा हो आयी। कात्यायनी के साथ वे भी आयी। शाम के पांच बज चुके थे। कोमली तभी स्नान करके चोटी गूंथ रही थी। बालों में फूल खोंसे। छत पर आकर बाहर का दृश्य देखने लगी। दूर पहाड़ियों के पीछे सूरज ने कोमली का मुंह चमका दिया और ओझल हो गया। अंतिम किरण उसके बालों के रास्ते उतर कर छिप गयी। दूर अस्पताल के समीप निधि दीखा। वहां तक घूम आने का मन हो आया इतने में राजम्मा आ पहुंची।

कोमली ने उनका स्वागत कर बैठाया। काफी देर तक दोनों मौन बैठे रहे। दोनों में से किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि बातें कैसे शुरू की जायें। कोमली ने शुरुआत की "आपकी बेटी कात्यायनी बड़ी भली लड़की है। मेरी जरूरतों का हरदम ख्याल रखती है—"इधर आओ बेटी—चोटी गूंथ दूं? ठहरो फूल खोंसती हूं।"

कात्यायनी के सामने कोमली ऊंची और मोटी लगती थी पर राजम्मा के सामने छोटी नाजुक और दुबली लग रही थी।

"कंघी ले आऊं?" कात्यायनी कंघी लाने चल दी तो राजम्मा ने पूछा—"तुम्हारे साथ कोई नहीं आये? अकेली इतनी दूर कैसे चली आयी?"

"मेरे अपने कोई भी नहीं है?"

"मां-बाप भी नहीं? निधि ने तुम्हारे बारे में कभी कुछ जिक्र भी नहीं किया। कहता है कि उसके कोई नहीं है।" एक सांस में कहकर राजम्मा उत्तर की प्रतीक्षा करने लगी।

"हैं क्यों नहीं, बहुत से लोग हैं। हां, सब इनसे जलते हैं।"

"क्यों भला?"

"पता नहीं आपस में कोई मनमुटाव है। मैं नही जानती उसका कारण।"

"तुम्हारा इनके साथ क्या रिश्ता है?"

"मेरा? इनके साथ?" कोमली ने झिझकते हुए पूछा इधर-उधर देखकर अंत में साहस करके कह दिया—"मुझे इन्होंने पसंद किया था।"

"बीवी के रहते?"

अभी नहीं। शादी से पहले कहते थे। हम लोग नीचे कुल के हैं इसलिए इन्होंने शादी नहीं की अब ससुराल वालों से इनकी बिगड़ गयी है।"

"तुम्हारी शादी हुई कि नहीं?"

"मैंने इन्ही के लिए शादी नहीं की?"

राजम्मा सब समझ गयी। इतने में कात्यायनी कंघी लेकर आ गयी। अंधेरा हो चला था निर्मल आकाश में तारे उगने लगे थे। कोमली कात्यायनी के बाल बनाने लगी तो राजम्मा उठ कर चल दी।

"आज आप हमारे यहां खायेंगी।" कात्यायनी ने दावत दी तो कोमली ने कहा—"कैसी प्यारी बिटिया है। आदर सत्कार की बातें खूब जानती है। बिटिया! रहने दे अभी तेरा ब्याह होगा तो जरूर तेरे घर जाकर खाऊंगी।"

"जाओ तो फिर मैं नहीं बोलती।"

राजम्मा और बेटी दोनों चल दीं। जाते-जाते कात्यायनी ने फिर कोमली को साथ आने को कहा तो कोमली बोली—"थोड़ी देर के बाद आ जाऊंगी।" दोनों चली गयी तो उसने चटाई डाली और अपनी चोटी को तकिया बनाकर

खुली छत पर लेट गयी। इतने में किसी के आने की आहट हुई। उसने पूछा—"कौन है?"

दयानिधि अस्पताल से लौटकर तभी नहाकर आया था। उसने कंघी मांगी। कोमली ने पकड़ा दी। कंघी करते-करते निधि सीढ़ियां उतरने लगा। साबुन की खुशबू हवा में तैरने लगी। कोमली ने निधि से कहा कि छत पर ही कंघी करे। पर बात अनसुनी करके निधि चला गया।

तीन मिनट बीते। कोमली भी अचानक उठकर नीचे चली गयी।

निधि नीचे के कमरे में बैठा कंघी कर रहा था। कोमली चुपचाप काफी की प्याली ले कर पीछे जा खड़ी हुई।

निधि ने घूमकर देखा। पेट्रोमेक्स के प्रकाश में कोमली का चेहरा चमक उठा। अचानक उसका मन विचलित होने लगा। पश्चाताप के कारण दीनता सी झलकती उसकी आंखें। अनुभव में पूर्णता पाकर भर उठे उसके अंग सौष्ठव ने निधि से उसके पुराने सौंदर्य की स्मृतियों को झकझोर दिया। अब तक छिपा एक नयापन, दुनिया के पागलपन को देखकर उसे चिढ़ाना छोड़ हंसती उसका निश्चल औदार्य। अंत में उसमें एक पुराने सपने के यथार्थ हो जाने की सी अनुभूति निधि को प्राप्त हुई।

"तुम नहीं पिओगी।"

"बस, दिन में दो बार पीती हूं। ज्यादा पियूं तो मोटी हो जाने का डर है।" कहती हुई अपने पैरों को देखकर हंसने लगी।

"सो क्या हुआ। उम्र के साथ-साथ शरीर में भी परिवर्तन होता है जिन्हें हम स्वीकार कर लेते हैं पर...।"

"तो फिर आप क्यों नहीं बदले?" कोमली ने बात काटी।

"बदला क्यो नहीं। देखती नहीं आंखों के नीचे झाईयां। सुबह देखो तो कहीं-कहीं सफेद बाल भी दिखेंगे।"

"सच मानो मुझे तो तुम सबसे ज्यादा अच्छे लग रहे हो।"

"मुझमें दिखने वाला अच्छापन तुम्हारे मन के भीतर का है, मेरे भीतर अच्छापन जरा भी नहीं है।

"लो वेदांत की बातें करने लगे।" कहते हुए कोमली ने प्याली पकड़ायी और बोली—"जरा देखूं तो कहां और कितने सफेद बाल हैं।" लालटेन उठा-

कर देखने और बालों में उंगलियां फेरने लगी। निधि ने वह हाथ अपनी हथेलियों में ले लिया और सहलाकर उसे देखने लगा।

"क्यों, तुम्हें छूने की मनाही है ?" पूछते हुए उसने निधि का हाथ दबाया। निधि ने कोमली का हाथ छोड़ दिया।

"उन दिनों दिन रात मेरे लिये बेचैन रहते थे। अब कितने बदल गये ! पास रहो तो ठीक है। जरा दूर जाते ही पुरुष बदल जाते हैं।"

"पास रहने पर भी धोखा दे सकने की ताकत सिर्फ स्त्री में होती है।"

"मैंने तुम्हें कब धोखा दिया ?"

"वह तो तुम ही जानो।"

"उफ ! कितनी तीखी बातें कहते हो।" मुंह बिचका कर जरा पीछे हटी और उसकी आंखों की गहराईयों में झांकने लगी।

"क्या करती। मैं तो उस समय प्रेम का मतलब नहीं जानती थी। तुम्हें देखती तो जाने कैसा-कैसा लगता था। तुम मुझसे दिल खोलकर बातें भी तो नहीं करते थे। मुझसे शादी भी नहीं की तुमने। पुरानी बातों को सोचते डर लगता है।" कहती हुई कोमली ने अपना सिर निधि के कंधों पर रख दिया और आंखें मूंद लीं। तेल चुक जाने के कारण लालटेन की रोशनी मंद पड़ने लगी। पतंगों के टकराने की आवाज के अतिरिक्त चारों ओर नीरवता थी। कोमली के आंसू उसकी बायीं कुहनी पर आ गिरे। निधि ने कोमली का सिर अपने कंधों पर से अलग किया और लालटेन लेकर खड़ा हो गया।

एक हफ्ता बीता। घर का सब काम कोमली संभालने लगी। खाने के समय को छोड़ निधि पूरा दिन घर से बाहर रहता। रात को नारय्या के साथ नीचे वाले कमरे में सो जाता। कोमली ऊपर कमरे में सोती। सीढ़ियों के पास नौकर लेटता। कोमली को दिन काटना भारी पड़ रहा था। पहले तो कुछ दिन ताश, कौड़ियां आदि खेलों में मन लगाया पर उनसे जब ऊब आ गयी तो कोमली ने दो चर्खे मंगाये और दिन रात सूत कातने लगी।

एक दिन अनंताचारी के घर में एक नाटक घटा जिसमें कोमली अनायास ही एक पात्र बन बैठी। राजम्मा की इच्छानुसार उस दिन निधि कोमली के साथ उसके यहां भोजन करने को गया। राजम्मा ने कोमली को बाहर बरामदे में बाकी सबके लिए रसोई में पत्तल डाले। कोमली ने इसे अपना अपमान

समझा और खाना खाये बगैर रूठकर चल दी। राजम्मा और अनंताचारी में बहस होने लगी। बहुत कहा सुनी के बाद संधि हो गयी कि केवल इस बार सब मिलकर खायेंगे। कोमली को लिवा लाने के लिये निधि को भेजा गया। कोमली निधि की मां की मूर्ति के पास जाकर बैठी थी। निधि ने कहा चलो इस बार सब साथ खायेंगे। कोमली की आंखों से बादल बरसने लगे। जिन्हें वह आंखों में ही रोके बैठी थी। बोली—"मेरा यहां रहना तुम्हें अच्छा न लगे तो मुझे जाने को कह दो, चली जाऊंगी। अपने दोस्तों से कहकर मेरा अपमान क्यों कराना चाहते हो?"

"तो तुम समझती हो कि यह सब मैंने करवाया है?"

"वर्ना मुझे वे लोग क्यों बुलाने लगे। मेरी बातें मुझसे उगलवाकर अब मेरा अपमान करने लगे हैं।"

"तुम पर उन्हें क्यों ईर्ष्या होगी सोचो तो?"

"वह सब तुम्हीं जानते हो, मैं क्या जानूं। तुम्हारी कमजोरियां जानकर तुम्हें नचा रहे हैं। तुम्हीं मेरा आदर नहीं करते तो वे क्यों करने लगे। तुम सब सुख से रहो, मैं ही जाती हूं। सबके बीच में मेरी क्या जरूरत है? बस अब हो चुका, चली जाऊंगी।" कोमली मुंह ढांपकर रोने लगी।

"वे सब बहुत भले लोग हैं। अभी तुम उनके बारे में कुछ नहीं जानती। ब्राह्मणों के घर में ऐसे छुआछूत की बातें होती ही हैं। तुम्हारे लिये यह बात नयी नहीं। पूरी दुनियां देख आयी हो। निभाना पड़ता है। ये लोग तो फिर भी समझाने पर मान लेते हैं। तुम्हें बुला भेजा है। चली चलो। आज तो सब मिलकर ही खायेंगे।"

"तुम्हीं जाकर खाओ, मुझे भूख नहीं।"

"नाराज हो गयी?"

"मेरी नाराजगी से किसी का क्या बनता बिगड़ता है।"

"मुझे दुख होगा—शायद तुम वही चाहती हो।"

"............"

"बोलो न।"

कोमली ने फीकी हंसी हंस दी और बोली—"तुम दुखी होगे तो मैं कैसे जी सकूंगी?"

"तो फिर उठो……।"

"उठा लो न।" कहकर निधि के दोनों हाथों को पास खींचकर अपने कंधे तक ले जा कर पकड़ा और अपने शरीर से निधि के शरीर को रगड़ती हुई उठ खड़ी हुई। कोमली के उठते ही निधि ने दोनों हाथ छुड़ा लिये। इतने में कात्यायनी लालटेन लेकर आ गयी। बोली—"अम्मा ने जल्दी आने को कहा है।"

"बस अब चल ही रहे थे कि तुम आ गयी।" निधि ने बताया।

चुपचाप सबने एक साथ बैठकर भोजन किया।

इस घटना के बाद कोमली बाहरी दुनिया से अपना नाता बढ़ाने लगी। खुदाई हो रही खानों पर जाती, अस्पताल जाती और उससे जो कुछ बन पड़ता उनकी सहायता करती। शुरू शुरू में कोमली सबको आश्चर्य सी लगी पर धीरे-धीरे रेगिस्तान में मोटर की भांति, जंगल में सूटधारी की भांति लगी और उसके बाद उस वातावरण में वह एक प्रमुख और आवश्यक अलंकार के रूप में सबसे मिल जुल गयी, विशेषकर अस्पताल से तो कोमली को बहुत गहरा संबंध हो गया। वह रोगियों से बातचीत करती। टेंप्रेचर लेती, चार्ट में निशान बनाती और रोगियों को हंसाने और खुश रखने की कोशिश करती। उनके दुख बड़े धीरज के साथ सुनती। उनके लिए एक कमरा और कई पत्र-पत्रिकायें और ग्रामोफोन का भी उसने प्रबंध कर लिया।

स्वयं सभी पत्र-पत्रिकायें पढ़कर उन्हें सुनाती। कभी कोई बड़े लोग आते अस्पताल देखते और कुछ पैसा भी दान कर जाते। लोगों के विचार जानने के लिये वहां एक नोटबुक भी रखी गयी। कोमली उन सबकी आवभगत बडी तत्परता से करती। उस दिन शनिवार था।

दयानिधि स्नान करने गया। कुर्ता पहन, ऊपर अंगोछा डालकर वह बाहर आया। सूरज तभी पहाड़ियों के पीछे दुबका था। तमाशा देखने के लिए कुछ सलेटी रंग के बादल भी पश्चिम की पहाड़ियों के पीछे भागते जा रहे थे। पाल उतरी नाव की भांति सभी वस्तुओं ने अपनी छाया समेटकर भीतर के कालेपन को उजागर किया। जेब में से कुछ कागज और चिट्ठियां निकाल कर उन्हें एक बार देखा और गड्डमड्डुकर उन्हें दूर फेंककर निधि चल दिया।

निधि जीवन का स्पर्श करने निकला था। उस अंधकार में दूर कहीं जीवन

का रहस्य छिपा था उसे आज पाना होगा। इसके बारे में उसमें किसी प्रकार की शंका और संदेह नहीं बचा था। पृथ्वी पर चलते चलते अचानक पानी में उतर जाने जैसा लगा। तैरना न आये तो पानी में उतरना मुश्किल होता है। और पानी में उतरे बिना तैरना नहीं आता। इन अभावों का कोई अर्थ नहीं—जीवन एक घड़े जैसा है। समय सभी मनुष्यों से एक एक बूंद उसमें डलवाता रहता है। बस, एक बूंद और डाले तो घड़ा भर जाय। निधि को लगा कि उस सांझ किसी ने वह बूंद भी डाल दी है। दोनों में कौन सत्य है पानी या घड़ा? अंधेरे में जा रहा था तो पैर की उंगली से एक टूटे घड़े की तलहट छू गयी। कहीं श्मशान में तो नहीं आ गया वह? पूर्वी पहाड़ी के पीछे चांद हिल रहा था। पानी के घड़े को मौत फोड़ रही थी। वहां की जमीन पर टूटे घड़े के टुकड़े फैले थे। जाने कितने राजा रानियां विहार करके जिस जीवन से घड़ा भर लिया था मृत्यु ने तोड़कर रख दिया था। यह सब उन टूटे घड़े के टुकड़ों की कहानी थी। इन उपमाओं और साम्यों का विचारों के साथ कोई तुक नहीं था यह वह समय था जब प्रश्न संशय, संदेह, असंतृप्ति, वांछा, द्वेष, राग ये कोई भी घड़े के पानी को हिला नहीं सकते थे। निधि पत्थरों के बीच बैठ गया। चारों ओर पत्थर और उनके नीचे घड़े थे जो गर्मी में तप कर भी गर्मी को नहीं कोसते और न ही वर्षा में भीग कर ठंडक के गीत गाते थे। निधि का हृदय भी कुछ ऐसा ही था। न रोने का मन करता और न ही हंसने का। किसी के साथ किसी तरह का उसे लगाव नहीं रहा था। पर अगर वह वहां न रहे तो शून्यता छा जाये। समय, स्थान, परिमाण, परिवर्तन, स्वयं सभी मिलकर एक मात्र तत्कालीन यथार्थ बने थे जिसे कोई छू नहीं सकता था।

पर किसी ने उसे परखा, घड़े के पानी को किसी ने हिलाया। दुख से घड़ा भर आया स्थान और परिमाण बदल गया। समय दिशा को ढूंढ रहा था। परिवर्तन घटित हो रहा था। जब वह अपने आप में डूबकर पीछे घूमा तो सामने कोमली खड़ी थी।

"अकेली अंधेरे मे क्यों चली आयी?"

"तुम्हारे रहते अंधेरे का क्या डर?"

"क्यों आयी हो?"

"तुम्हारे लिए—।" दाहिने कंधे पर उसने सिर रख दिया। हवा के कारण पल्ला उड़कर निधि के मुंह पर फहराने लगा। सुई में पिरोये तागे की भांति उसकी कमर ठंडी गरमाहट घेरे ले रही थी। सौंदर्य क्षण भर में बढ़कर भारी हो उसे झकझोर रहा था। उसे छलक पड़ने से बचाना होगा। उसे अपना यह जूझना ऐसे लग रहा था जैसे कोई किसीके शरीर को छू रहा हो और वह स्वयं दूर खड़ा हो उसे डांट रहा हो।

"नाराज हो।"

"मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा?" कोमली ने उसका मुंह अपनी ओर कर लिया। निधि उसे देख रहा था पर वह दीख नहीं रही थी। मेघों से उठती ध्वनियों की भांति कोमली के कंठ में निस्तब्धता आंखें भरने लगी। वह उसका खंडित स्वर था जिसे भाषा का ज्ञान न था। उसमें से हृदय बोल रहा था। लगता था कि नक्षत्र मंडल में रहकर कोई समुद्र गर्भ के हाहाकार को सुन रहा है।

"मुझे क्यों किसी पर क्रोध होने लगा?" प्रश्न का उत्तर प्रश्न। निधि ने सोचा, पागल निरर्थक प्रश्न था।

"मैं लाख बिगड़ी बुरी औरत हूं पर तुम्हारे साथ रहूंगी तो संभलकर रहूंगी। पुरानी बातों का ख्याल न करो। मेरी नादानी में वह सब कुछ हो गया, अब नहीं होगा आगे। अपने पास ही मुझे रहने दो वर्ना मैं मर जाऊंगी।" तालाब में मछलियों के तैर जाने की गंध श्वास में भरी थी जिसने निधि के ओठों को दहला दिया, जला दिया था। धीरे धीरे बढ़कर विश्व को अपने में समो लेनेवाले दोनों ओठों ने उसे घेर कर शून्य बना दिया। ओठों की प्यास ने बोछार सा जन्म लेकर फेन बन, लहर में बदल झील बनकर महासमुद्र सा फैलकर उसमें निधि को डुबो दिया था। जाने कितनों के रक्त को स्पंदित कर उन्हें मिटा देने वाली ज्वालाओं से रंगे ओंठ थे वे। ये ओंठ पीढ़ी दर पीढ़ी शोले जैसे भड़क कर आंगन में मुरझा जाने वाले गुलाब के फूल जैसे थे।

जब मैं जमींदार बाबू के पास थी तो उसने आकर जबर्दस्ती की। कहता था कि तुम्हारा दोस्त है मुझे तुम्हारे पास ले जाना चाहता है। मैं मानी नहीं। अपने बचाव में मैंने उसे दांतों से काटा इस पर वह नाराज हो गया और उसने जाकर जमींदार से मेरी शिकायत कर दी कि मैं बदचलन हूं। जमींदार

उसकी बातों में आ गया मुझे बात-बात पर मारने और सताने लगा। एक दिन तो बहुत बुरा झगड़ा हुआ। मैंने साफ कह दिया कि मैं तुमसे प्रेम करती थी। जमींदार का पारा चढ़ गया। उसने मुझे खूब पीटा। मैंने भी गुस्से में आकर रुपये उसके मुंह पर दे मारे। उसने चप्पल से मेरी मरम्मत की। इस पर मैंने अल्मारी से उसके दिये सारे गहने उस पर दे मारे। वह मुझ पर झपटा ही था कि मैंने फूलों का गमला उसके सिर पर दे मारा। मरे का सिर फूट गया। मैं अम्मा के पास चली गयी। अम्मा मुझसे रोज झगड़ती थी। बस, उस दिन तो उस पर भूत सवार हो गया था। हाथ में कलछी ले उसने मुझ पर फेंकी। वार बचाने पर भी मेरे माथे से खून वह निकला। बस, उसी रात आपके पास चली आयी।

निधि की आंखों में बर्बरता का पूरा दृश्य तैर आया। उसमें अब न क्रोध था, न ईर्ष्या थी। हृदय में दिशाहीन जलप्रपात की भांति अपार करुणा का स्रोत फूटने लगा। वस्तुएं जब सभी में बंटने लगती है तो वह अपनी स्थिरता को खोकर नाश होने लगती है। सौंदर्य, आनंद और विचार बांट लेने पर कम हो जाते हैं। भक्तों ने शायद इसी को देखकर भगवान और धर्म को भी बांट कर उसकी हत्या कर दी। अपना सर्वस्व समाज को बांटने के बाद ही कोमली अपने भीतर का सच, अपना व्यक्तित्व पहचान सकी है। जाने कितनों ने अपने अधरों का मैल कोमली को पोत कर स्वयं पावन हो गये हैं। जाने कितनों के सपने सच बनाकर कोमली ने अपने सच को स्वप्न बना डाला है। उस कृत्रिम जीवन का त्याग कर अब वह मेरी गुलामी के लिए क्यों लालायित है? सोचकर निधि ने पूछा—"तुम्हें उस जीवन से घृणा हो आयी है तो फिर उसी जीवन की मांग मुझसे क्यों कर रही हो?"

आवेश से कोमली की आंखें चमक रही थीं—"मैं उनमें से किसी को भी नहीं बनी। तुम्हें मैं सबसे ज्यादा प्यार करती हूं बस उसे समझा नहीं पा रही हूं।"

"प्रेम में ज्यादा या कम की मात्रा नहीं होती। तुम किसी से या तो प्रेम कर सकती हो या घृणा।"

"मैं अपनी बात तुम्हें समझा नहीं पा रही हूं। मुझे जब से अक्ल आयी और जब मैंने जाना कि प्रेम क्या होता है उस दिन से मुझे लगा कि मैं अपना सब कुछ तुम्हें जब तक नहीं दे दूं मेरे मन को शांति नहीं होगी।"

"अब मुझे देने के लिये तुम्हारे पास क्या बच गया है ?"

"सब कुछ तुम्हारे लिये ही तो संजोकर रखा है मैंने । मैं अच्छी तरह जानती हूं तुम्हें भी मेरे सिवाय और किसी की चाह नहीं।" कहते हुए कोमली ने उसकी कमर को बाहों में लपेट लिया निधि की गोद में सिर रख कर फिर उसको बाहों में भर लिया और चांद को देखकर रोने लगी ।

"मात्र तुम्हारे शरीर के सिवा तुम्हारे विषय में कुछ भी नहीं जानता । तुम्हारे पास अब वह तन नहीं रहा । तुम मेरे लिए अजनबी हो ।"

"यह गलत है । तुम कल्पना भी नहीं कर सकते कि मैं कितनी सुंदर हूं । मेरे साथ तुम्हारा परिचय नहीं है । इसीलिए मैं मानती हूं कि तुम मुझसे प्यार कर सकोगे ।"

"तो फिर मात्र तन जोड़ने की आकांक्षा करके तुम उस अपने प्यार को क्यों गंदला करना चाहती हो । हम दोनों एक-दूसरे से अजनबी बनकर रहें वही दोनों के लिए ठीक रहेगा । सोचो इस पर भी ।" कहते हुए निधि ने कोमली का सिर अपने हाथों में ले लिया । कोमली के आंसुओं से निधि के पैर भीग गये थे ।

"कह दो कि तुम मुझे प्यार करते हो तो बस कुछ नहीं चाहूंगी । मेरा जन्म अपना फल पा लेगा । इसी सुख को लेकर मैं मर जाऊंगी ।"

"कोमली, में अब तक समझ नहीं पाया कि प्रेम क्या होता है । लोगों की तरह शरीर की भूख को प्रेम कह कर मैं अपने आपको धोखा नहीं दे सकता । दूसरे किसी के साथ, किसी एक के भी साथ मेरा प्यार बंट नहीं पाता । बस यह एक दृष्टिकोण है जो समस्त जीवन को आदि से अंत तक, आगे पीछे सब कुछ को दूर से देख परख कर उसे समझ लेना चाहता है । मेरी हर बात, हर भाव और कार्य को यही दृष्टिकोण प्रेरित करता है । तुम्हारे साथ मैत्री कर लूं तो मेरा वह दृष्टिकोण खतम हो जायगा । तुम समझ पा रही हो न ? अच्छा तुम अपनी बात बताओ कि प्रेम का मतलब तुम क्या समझती हो ।"

"क्या इतना भी नहीं जानती ? मूर्ख नहीं हूं । तुम कहीं दूर अकेले संन्यासी की भांति रह जाना चाहते हो । तुम्हीं बताओ लक्ष्य क्या है ? प्रेम के मतलब हैं हम दोनों प्राणी एक ही बनकर रहें । मिलकर आनंद पायें, दूसरों को जहां तक बन पड़े सहायता देते रहें ।" कहते हुए कोमली उठ बैठी । "उंह रहने

दो मैं प्रेम के बारे में कुछ नहीं जानती लेकिन मेरी छाती पर हाथ रखकर तो देखो दिल कितना धड़क रहा है। तन गरमा गया है—तुम्हारे लिए यह सब क्यों होता है मुझे तुम्हीं बताओ ?" पूछते हुए उसने निधि के मुंह से उत्तर पाने के पूर्व ही दोनों ओर से उसका मुंह दबा दिया।

"तो यही है तुम्हारे प्रेम का मतलब ? यह काम इसके पूर्व जाने कितने लोगों के साथ और कितनी बार किया होगा ?"

"यह अलग बात थी, यह बिलकुल अलग। तुम तो दूसरी ही तरह के इंसान हो। वह सब तो जानवर थे तुम मेरे देवता हो।"

"देवता की पूजा करनी चाहिये। भला कहीं उसका चुंबन भी कोई लेता है ?"

"पहले चुंबन ले लें, फिर पूजा।"

निधि ने अपने ऊपर आश्रय ले रहे कोमली के तन को पीछे धकेल दिया। समुद्र के थपेड़ों का सामना करने वाली शक्ति थी उस शरीर में। बरस कर पहाड़ की चोटियों को भी बहा देने वाले गतिवान मेघ की तरह शक्ति लिए था वह शरीर। इस तुच्छ प्रेम के लिए तड़पकर उसके लिए मिट जाना उसे अच्छा न लगा। कोमली के ओठों को अपनी हथेली से पीछे हटाकर बोला—"न—न—कोमली प्रेम को इस तरह बांट लेने का प्रयास मत करो। बस मेरे पास मात्र यही एक चीज बची है।"

"अच्छा वह भी मैं नहीं मांगती—पर मुझे हमेशा के लिए अपने पास रहने दो। हां कहो न ?"

"ठीक है पर शर्त है कि तुम आगे से कभी कुछ नहीं करोगी।"

दोनों उठकर चलने लगे। रास्ते में कांटे पत्थर आदि पड़े होते या नहीं ऊंचे नीचे रास्ते होते तो कोमली निधि के कंधे का सहारा लेती। उनसे पार होते ही छोड़ देती।

"इंदिरा को शंका है कि मैंने तुम्हें रख लिया है।"

"हाय रे, ये कैसा अन्याय है। तुम तो मुझसे दूर भागते हो। यह दुनिया भी कैसी अजीब है। जो मुंह में आया बक देती है। तुम्हारे लिए तो मैं एक परायी पगली बनकर दौड़ी चली आयी पर ब्याहता बीवी को जरा भी लगाव नहीं तुमसे। कैसी विचित्र बात है ? वह क्यों नहीं आती? तुम उसे पसंद नहीं करते।"

"बीमार है, ससुर जी ने चिट्ठी दी है। मुझे देख जाने को लिखा है।"

"हाय बेचारी, जाने कौन सी बीमारी है। मुझे भी साथ ले चलो न ?"

"तपेदिक है। ससुर जी रायबहादुर की उपाधि मिलने से पहले ही रिटायर हो गये। मुझे पुरानी बातें भूल जाने को लिखा है। और क्षमा मांगी है। दवा दारू के लिए परसों मैंने सौ रुपये भेजे हैं।"

"चलो चलकर देख आयेंगे।"

"तुम्हें देखेगी तो उसकी बीमारी और बढ़ जायेगी।"

"अच्छा रहने दो मत ले जाओ।"

"मुझसे प्रेम करने का दावा करती हो। बार बार यूं रूठोगी तो फिर कैसे चलेगा प्रेम। प्रेम को छोड़ कर तुम अजनबी सी दिखती रहोगी तो ये ईर्ष्या, क्रोध, तकलीफ कुछ नहीं आयेगी।"

"मुझे तो यही सारी चीजें अच्छी लगती हैं। इनके बिना तो केवल बैरागी ही रह सकता है मुझे बैरागन नहीं बनना।"

कुछ देर तक दोनों चुप रहे। दूर मकान की छत चांदनी में सफेद बादल की तरह चमक रही थी। कोमली ने सहसा पूछा—"अमृतम् कहां है ?"

"उसने तुम्हारे पास से पचास रुपये मय ब्याज के वसूलने को कहा है।"

"मतलब ?"

"शायद तुम्हें याद नहीं रहा। उस रात जब तुम तुलसी चोर पर दिया रखकर सो गयी थी, उस रात तुम्हें उठाये बिना तकिये के नीचे पचास रुपये रखकर चुपचाप चला आया था। उन्हें अमृतम् से मैंने लिया था।"

"वह बहुत अच्छी हैं—वो न होती तो तुम मेरे करीब ही न आते क्यों ठीक है न ? उस पर तो सांवलापन भी शोभा देता है।"

"उसकी एक लड़की है ?"

"सच कह रहे हो।"

"हां, जगन्नाथम् ने चिट्ठी लिखी थी। कोव्वूर में एक आश्रम बनाकर रह रहा है वह। मुझे आने को लिखा था।"

"तब शैतानी करता था—बड़ा शरीर था। मुझे तालाब में धकेलकर भाग गया। क्या कर रहा है ? शादी हुई कि नहीं ?"

"नहीं मजदूरों और गरीबों को मुफ्त में पढ़ा रहा है।" कहता है वही उसका जीवन होगा।"

दोनों घर के समीप पहुंच गये। कोमली सीढ़ियां चढ़ गयी। निधि बरामदे में मां की मूर्ति को देखता बैठ गया। उसे लगा कि स्त्रियों पर से उसका विश्वास उठ जाने का कारण मां है। क्षण मात्र के लिये पाप करने पर अगर स्त्री यह जान सके कि उसकी संतान की क्या हालत होती है तो कोई भी स्त्री इतना साहस नहीं कर सकती। मां स्त्रीत्व का एक प्रतीक है जो एक काले पर्दे जैसी उसकी दृष्टि को मैला बनाती जा रही है।

"पिताजी ने खाने के बाद मिलने को कहा हैं।" निधि ने घूमकर देखा तो कात्यायनी खड़ी थी। "क्यों ?" उसने पूछा।

"पता नहीं कुछ काम है।"

"कह दो मिल लूंगा।" कात्यायनी जाते जाते रुक गयी। उसने कहा—"मुझे पढ़ाना बंद कर दिया आपने ?"

"क्या करूं फुर्सत नहीं मिलती—कल पढ़ाऊंगा। बस हफ्ते की बात है मास्टरनी आ जायेंगी। वैसे में पढ़ाना बिलकुल भूल गया।" कात्यायनी हंसती हुई चल दी।

निधि ने डाक देखी। अपने नाम की चिट्ठी लेकर फाड़ी और पढ़ने लगा। अमृतम् ने बेटी के अन्नप्राशन संस्कार पर आने को निमंत्रण दिया था। इसी बीच नारय्या ने खबर दी कि अनंताचारी बुला रहे हैं। निधि ने वहीं जाकर खाना खाया। अनंताचारी से बातचीत करके घर लौटा तो रात के ग्यारह बज चुके थे। पलंग बिछाकर लेट गया। आकाश में तारे चमक रहे थे। तारा अपनी जगह से हटता हुआ भी वहीं स्थिर खड़ा था। इतने विशाल विश्व में मानव को शांति क्यों नहीं मिलती ? विश्व की विशालता मापने के लिए मनुष्य का मन और कल्पना भी उतनी ही विशाल होनी चाहिए तभी वह उसे आंक पायेगा।

अमृतम् की लड़की का अन्नप्राशन संस्कार है। उसे डर लगा कि अबोध बालिका उसी की छाती पर बिलख रही है। भय और शंका से शरीर में तनाव भरता जा रहा था। सृष्टि ने अपने रहस्य को मेटने की चुनौती दी थी। संतान की प्राप्ति क्या इतनी आसान है क्या सृष्टि को मनुष्यता के राग द्वेष से कोई वास्ता नहीं ? स्त्री एक पेड़ है जो देखते ही देखते डालियों, शाखों पल्लवों में फैलकर फूलों में फूल पैदा कर लेती है। उस छांव में कोई यायावर क्षण भर

के लिए रुककर अपनी थकान मिटाता है। उसकी श्वास खींचता है उसके फलों को चखता है और पूरे पेड़ को एक बार झकझोर कर चल देता है कुछ आवाज आयी। निधि ने घूमकर देखा, तभी पास के वृक्ष ने एक फल गिराया। अमृतम् को उसी ने झकझोरा था। कैसे पता चले कि फल किसका है -- लगा 'जाकर बच्ची को देखने नहीं जायेगा तो पागल हो जायेगा।'

गरमी के दिनों में अप्रैल की बीस तारीख को आंध्र राष्ट्र कमेटी ने कडपा में एक सभा आयोजित की जिसमें अनंताचारी और दयानिधि भी गये। इस मंडल के इलाके से भी कई नेतागण आ रहे थे। खुदायी के काम के लिये उनसे परिचय प्राप्त करने की आवश्यकता थी इसलिए अनंताचारी के कहने पर निधि भी साथ हो लिया। आचारी का विचार था कि निधि को चुनावों के लिए खड़ा कर जीतें और उसे एक बहुत बड़ा नेता बना डालें। निधि ने इसके प्रति कोई उत्साह नहीं दिखाया।

शाम के पांच बज रहे थे। लगभग तीन सौ के करीब भीड़ थी। भाषण शुरू हुए। तीसरा भाषणकर्ता 'सरकार' जिले से आया था। उसने अभी भाषण देना प्रारंभ ही किया था कि लोगों में सनसनी फैल गयी।

"इस जिले के कुछ लोग अलग आंध्र प्रदेश की मांग के विरुद्ध हैं। उन्होंने इसकी जरूरत को समझा नहीं। अलग राष्ट्र की मांग पूरी न होने देने के लिये सरकार भी उनकी सहायता कर रही है। हां, इसमें आश्चर्य करने की बात नहीं क्योंकि यह मांग सबसे पहले सरकार जिले में ही रखी! कोई भी मांग या आंदोलन हो, सरकार जिले के निवासी ही पहला कदम उठाते हैं। वही मार्गदर्शक भी बनते हैं। सामाजिक उन्नति की नींव हमीं डालते हैं और आंध्र प्रदेश की सभ्यता को संजो रखने वाले भी हमीं लोग हैं। दूसरे इलाकों के लोग चिढ़ते हैं कि कहीं सरकार प्रदेश के लोग धनी हो जायेंगे तो उन्हें कोई नहीं पूछेगा। अगर मैं कहूं, काम करने की क्षमता न रखने के कारण ये लोग पीछे हटते हैं और आगे बढ़ने वालों के रास्ते में बाधायें डालते रहते हैं तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।" भाषण पर कुछ लोगों ने तालियां पीटीं, कुछ लोगों ने झिड़कियां सुनाईं। बात बढ़ गयी शोर होने लगा—थोड़ी देर बाद शोर बंद हुआ—भाषणकर्ता ने बात आगे बढ़ायी।

"उदाहरण देता हूं—परसों श्री राघव श्रेष्टी के घर में ठहरा। उनके

घर में मैंने लोगों को चार भाषायें बोलते हुए पाया । बेटा तेलुगु बोल रहा था तो बाप संस्कृत बहू कन्नड़ और सास तमिल । निजाम रियासत की सीमा पर बसी होने के कारण मैं मानता हूं कि थोड़ी बहुत हिंदी तो बोलते ही होंगे । मुझे लगा इनकी कोई एक सामान्य भाषा नहीं है । चाहे पत्रिका का संपादक हो या एक शायर, चाहे चित्रकार हो या राजनीतिज्ञ । क्या हम किसी को ऐसे किसी एक मेधावी को भी यहां नहीं पाते । मैं कहता हूं कि यहां के लोग मूर्ख और जाहिल हैं । मेरा कहना है कि उनके भविष्य को सुखद बनाने योग्य आर्थिक सामाजिक स्थितियां अभी बनी नहीं हैं ।' इन सभी बातों को पाने के लिए हमारे साथ मिलकर कदम बढ़ाना होगा ।

वाक्य अभी पूरा नहीं हुआ था कि लोगों ने भाषण बंद करने की आवाजें लगायीं । वहां के कुछ बड़े लोगों को भी भाषणकर्ता की बातें अच्छी नहीं लगीं । भीड़ में से एक ने अध्यक्ष से अनुमति मांगी कि उसे बोलने का मौका दिया जाय । लोगों ने तालियां बजाकर उसे मंच पर ले जाकर खड़ा कर दिया । एक ने उठकर इस नये व्यक्ति का परिचय कराया—

"आप हैं तिप्पेस्वामी कर्नूल मजदूर संघ के कार्यवाहक । अपने मजदूरों के लिये औसत मजदूरी पर एक सुझाव तैयार किया है । इससे अधिक कहने की जरूरत नहीं यह काफी है ।" परिचयकर्ता के हट जाने पर तिप्पेस्वामी ने भाषण देना शुरू किया ।

"मैं यहां भाषण देने नहीं, सुनने आया था । मेरे पूर्व के भाषणकर्ता के मुंह से छूटती गाड़ी पर ब्रेक लगाना जरूरी था । माफ कीजियेगा सरकार जिले के हमारे मित्रों की उदारता को कोई अस्वीकार नहीं कर सकता क्योंकि इन्होंने अकाल पीड़ितों के लिए पांच हजार रुपये का दान दिया है । इस उदारता के लिये हम उनके आभारी हैं । अकाल पड़ने की पूरी जिम्मेदारी हमीं लोगों पर डालने की उनकी बात सुनकर तो हमें हंसी आती है क्योंकि प्लेग, हैजा जैसी बीमारियां फैलना, बाढ़, अनावृष्टि और अतिवृष्टि जैसी प्राकृतिक संभावनायें सरकार जिले में भी होती आयी हैं जिसे हर कोई जानता है । पर वे लोग हम पर सहानुभूति दिखाकर महज अपने बड़प्पन का ढोंग रचाते हैं । इन महाशय ने सभ्यता पर भी कुछ उपदेश दे डाले । मैं क्योंकि बहुत असभ्य व्यक्ति हूं सो कहना न होगा कि सभ्यता प्रवचन की एक भी बात मेरे पल्ले नहीं पड़ी ।

शायद उनका मतलब हो कि खाने कपड़ों की तंगी न होने वालों को सभ्यता की जड़ता घेर लेती है। पर उनके इलाके में भी तो कई जमींदार और धनवान लोग हैं जिन्हें खाने-पीने की तंगी नहीं है उनके बारे में भाषणकर्ता क्या कहते हैं ? किसानों और खेत जोतने वालों को यातना देकर बेगारी करवा कर उन्हें लूटना और उस पैसे से ऊटी, शिमला, बंबई में जाकर शराब, और वेश्याओं पर बरबाद करना शायद सबसे महान सभ्यता होगी उनकी दृष्टि में।"

"हमारे सरकारी मित्र—क्षमा कीजिये सरकार जिले के निवासी मित्र ने श्री राघव श्रेष्टी के नाम का उल्लेख किया है सो मैं भी उसी अधिकार को लेकर कहना चाहूंगा यहां से करीब दस मील की दूरी पर न्यायमपल्ली मे एक व्यक्ति रहते हैं जो सरकार जिलों से आकर यहां बस गये हैं। वे डाक्टर हैं यहां भिखारी के रूप में आये थे उन्हें यहां रायलसीमा में हीरा मिला अब वह लखपति हो गये हैं और हीरों के लिये खानें खुदवा रहे हैं। उन्होंने अस्पताल बनवाया है। कहिये इस श्री संपदा के सच्चे वारिस कौन हैं, हम हैं या सरकार जिला वासी ? हमारे राघव श्रेष्टी जी के घर में चार भाषाओं के बोलने पर भाषणकर्ता महोदय को आपत्ति है पर उनके इलाके से यहां आकर बसे डाक्टर साहब के सुना है चार पत्नियां हैं। इस पर कोई उंगली नहीं उठाता।"

नया रहस्य पटाखे की तरह छूटा तो भीड़ में से खलबली मच गयी। अध्यक्ष ने तिप्पेस्वामी को बिठा दिया। भीड़ में से कुछ लोग आकर तिप्पेस्वामी को पकड़ कर ले गये। वहां पर रखी दो गैस लाईटों में से एक बुझ गयी। मंच वाली जल रही थी। किसी ने निधि को मंच पर आने की आवाज उठाई। आचारी ने निधि को ढूंढ़ा पर निधि वहां नहीं था। आचारी ने बात बना दी और निधि की तबियत ठीक नहीं सो वह चला गया है और स्वयं मंच पर जाकर श्लोक पाठ, गीतापाठ करके सरकार प्रदेश और दत्त मंडल (कडपा कर्नूल आदि जिलों) के लोगों में रामरसता का उपदेश दिया और भीड़ को चुप कराया।

निधि घर चला आया था। रात के बारह हो चले थे। चुपचाप छत पर गया। नारय्या वहां बरामदे में खुर्राटे ले रहा था। कोमली कमरे में सो रही थी। कोने में बत्ती जल रही थी। खिड़की में से चुपचाप उस पर चांदनी बरस रही थी। गहने न होने के कारण उसका गला गोल-गोल और मुलायम दिख रहा

था। चांदनी के इंद्रजाल से बचने के लिये रहस्यमय श्वास के साथ उरोज एक विचित्र लय में उठ उठ रहे थे। विकास को भूले लाल मंदार पुष्प की मुर्झायी कली सी उसकी आंखें बंद पड़ी थीं। सौंदर्य में से चंचलता को हटा कर उम्र ने उसे गंभीरता प्रदान की थी। जीवन में टकराहटों ने यौवन की कुटिलता को चूर कर उसमें वैराग्य भर दिया था।

कोमली के पास वह एक सोफे पर बैठ गया। लगा कि पर्वत चढ़ते-चढ़ते उसने शिखर पा लिया है। चांदनी के वातावरण में कोमली के अस्तित्व ने प्रश्नपैठजा में बांध लिया था। अब भूमंडल घूमेगा नहीं। उसे कोमली का स्पर्श करने की इच्छा नहीं हुई। मंदार कुसुम की पंखुड़ियों को खोल उसे विकसित कराने की भी इच्छा नहीं हुई। पर बीती बातें सोचने पर डर लगता है। लगा कि तिप्पे-स्वामी का भाषण कोमली के कंठ में से निकल रहा है। असंख्य कांटों ने उसे छेदा और कीड़ों ने डंक मारा है पर उसकी भोली आत्मा यहां चुपचाप सो रही है। उसमें एक चाह उठी कि कोमली की गर्दन को दोनों हाथों से कस ले और उसे ताजे सौंदर्य में डुबो दे। यह चाह एक व्यसन जैसी थी एक तृष्णा थी एक बड़वाग्नि की ज्वाला थी। पहाड़ की चोटी से गिराकर समुद्र को सब सोख लेने वाली आदिम बर्बर शक्ति थी। उसकी सच्ची इच्छायें, दंभित वांछायें, साकार न होने वाले सपने, आचरण में न रख सकने वाले आदर्श, उसके अंतरंग की बातें सभी कुछ कोमली बनकर सो रही थी। उसकी हत्या भी कर दी जाय तो वह हत्या नहीं होगी—आत्महत्या होगी और इससे दुनिया की गंदगी दूर हो जायेगी।

निधि ने सोफे को पलंग के पास खींच लिया। किसी ने उसके भीतर के मंदिर के किवाड़ खोल दिये। कोमली के प्रति निहित द्वेष उसे मार डालने की बलवती इच्छा अब हृदयगामी होकर अपना केंद्र खोज रही थी। कोमली की आत्मा पर द्वेष में परिणित होने वाले निधि का सहज प्रेम ही उसका जन्म केंद्र था। क्या यह घटना सचमुच घटी थी या मात्र उसकी कल्पना थी? उसमें बहुत गहरे छिपा एक धुंधला चित्र उभर आया। जाने कब देखा था याद नहीं—बापू मां का गला घोंट रहे थे। लगा, यह उसके आदर्शों और सपनों का कोई गला घोंट रहा है।

मंदिर में घंटे बज उठे। घंटों की ध्वनि पर तिप्पेस्वामी के भाषण के

शब्द तैर रहे थे, पर्दा फट गया, मानो द्वार खोलकर पूरा आकाश झांक रहा हो। चांदनी ने बदलियों की शृंखलायें तोड़ डाली थीं। वातावरण मुक्त हो उठा। कोमली ने उसे अधोलोक के बंधन से मुक्त कराकर अपने वास्तविक साम्राज्य में ला खड़ा किया था जिसकी वह स्वयं अधिष्ठात्री थी। इसका स्पर्श नहीं करना चाहिये।

निधि ने कोने में रखी बत्ती उठाकर रोशनी कोमली के मुंह पर फेंकी। कोमली ने सहसा अपना हाथ निधि के दाहिने हाथ पर डाल दिया। निधि का लगा कि वह नींद में कह रही है—"मैं तुम्हारी सब बातें जानती हूं।" उसने प्रकाश की किरण देखी। कोमली का हाथ उसमें कुछ खोज रहा था। कंधे को पोंछती वह हथेली ठीक स्थान पर जा पहुंची। बिना किसी प्रयत्न के बदन तोड़ती हुई बड़ी अदा से सिंहासन पर डुलती रानी ने चारों दिशाओं से अपने सौंदर्य का प्रशेषण किया। दिये से हाथ जा टकराया जिससे बत्ती बुझकर दिया नीचे जा गिरा। आवाज़ सुनकर अचानक उठ बैठी। "अरे तुम? कब आये?" कई प्रश्नों के साथ निधि को उसने अपने समीप खींच लिया।

"कोमली, बड़ी विचित्र बात हो गयी है।" निधि ने अपने को अलग किया और पैरों के पास पलंग पर बैठ गया।

"क्या?"

"कि लोग कह रहे हैं कि मेरी चार पत्नियां हैं।"

"इसमें कौन सी बड़ी बात है। सभी पुरुष रखते हैं। हां, यह अलग बात है कि तुमने शादी नहीं की। परसों राजम्मा बता रही थी कि यहां पर दो-दो पत्नियां रखना तो मामूली बात है। तुम तो बेकार घबराते हो।" कहकर कोमली हंसने लगी।

"इसका मतलब समझती हो न?"

"क्यों नहीं? चाहे कितनी ही बीवियां हों पर प्रेम तो एक ही से होता है। अब मेरी ही बात देखो।"

"कोमली प्यार करने का अधिकार मैंने खो दिया है।"

"जब तक मैं जिंदा हूं कोई नहीं छीन सकता।" कहती हुई कोमली ने उसके कंधे पर सिर रख दिया। गरम उसांसे चांदनी में भीग उठीं। कोमली की आंखों में विश्वास का अपार सागर लहरा रहा था पर निधि उसमें डूबने

के लिए अपने को असमर्थ पा रहा था। उसने पूछा—"क्या हम दोनों मित्र बनकर नहीं रह सकते ?"

"ऐसे ही तो कह रहे हैं।"

"इतने करीब नहीं दूर रहकर।"

"इससे भी अधिक दूरी और कोई नहीं बरत सकता।"

"हमारी आत्मायें शरीरहीन होतीं तो कितना अच्छा था।"

"आत्मायें तो अलगाव बरतती हैं। सिर्फ शरीर को ही मिलकर रहने का वरदान है।"

"तुम्हें ये बातें किसने सिखाईं।"

"मैं भी गीता पढ़ चुकी हूं।"

"क्या तुम समझ लेती हो ?"

"क्यों नहीं। वैसे तो मेरे जैसे लोगों के लिये ही लिखी गयी है।"

"कितना समझी हो उसे तुम ?"

"मैं नहीं बता सकती। पढ़ने पर तो लगा कि उसका सब सच मेरी आंखों में तैरने लगता है। जब बंद कर देती हूं तो कुछ नहीं दिखता।"

"तब फिर तुम मुझसे प्रेम क्यों करती हो ?"

"वह एक पवित्र संबंध है।"

"सब झूठ है।"

"बिलकुल सच है।"

"तो फिर मुझे पाने के लिये तुम्हारे मन में तृष्णा क्यों होती है ?"

"प्रेम मन के आनंद के लिये, तृष्णा शरीर के लिये वह भी तुम हो इसलिए।"

"नहीं नहीं, तृष्णा मत पालो। मोह में मत पड़ो। दोनों यों ही मित्र बने रहेंगे बस। शरीर का स्नेह कभी द्वेष में भी बदल सकता है जो आत्मा को मार कर रख देगा।"

"नहीं, मैं नहीं रह सकती।"

"तुम्हें अपनी यह आदत छोड़नी पड़ेगी। यही योग है, तपस्या है।"

"बड़ा कठिन है। मरते दम तक यों ही रहना होगा ?"

"हां।"

"न बाबा मुझसे नहीं होगा—अच्छा एक बार तुम्हें पा लूं फिर छोड़ दूंगी।"

"फिर तो हम सभी जैसे हो जायेंगे। न पाने में ही सारा आनंद है। जीवन भी मजेदार रहेगा और जीते रहने से ऊब नहीं आयेंगे। तभी अच्छे और बड़े-बड़े काम कर पायेंगे दोनों।"

"तब तो तुम अपनी वास्तविकता में नहीं होगे, अपने ऊपर कई बातें लादकर अजनबी से दूसरे आदमी लगोगे।"

"अजनबीपन में विचित्रता भरी है। अब अपनी ही बात लो। तुम्हारे ओठों से मेरा परिचय है पर शरीर से नहीं। हम रोज जिसे देखते रहते हैं उससे प्रेम तो नहीं कर सकते। इस देखने की एकरसता से ऊब कर उससे घृणा करने लगते हैं पर अनचीह्नी को चीह्नने की कोशिश और खोज हम करते रहते हैं। प्रेम का मतलब यही खोज की प्रवृत्ति है।" निधि बता रहा था तो कोमली उसे देख रही थी जिसमें गहरा विश्वास भरा था। मस्तिष्क में भुलायी गयी बातें अब उसे सताने लगी थीं। लगा कि मस्तिष्क और हृदय एक बन गया है। कोमली ने अपनी तन्मयता में निधि को बांधकर नीचे आ गिरी और अपने साथ निधि को भी खींच लिया।

वह निधि की गोद में जा लेटी आकाश की ओर देख रही थी। अब उसमें कोई तृष्णा बाकी नहीं थी। नयी बातों को जानने का उतावलापन और नयी शंकायें थीं।

"जीवन का रहस्य क्या है बताओगे?" निधि को इस प्रश्न पर हंसी आ गयी। बोला—"तुमसे यह प्रश्न कराने लायक बताना ही मेरे जीवन का रहस्य है?"

"उन्हें जाने दो मैं नहीं पूछती, नहीं बताना चाहते हो तो। पर मेरी हंसी मत उड़ाओ।"

"तुम सो जाओ सपने में जान लोगी।" कहकर निधि लेट गया।

"मैंने तो अभी पता लगा लिया है। तुम्हीं हो मेरे जीवन का रहस्य।" कहकर उसने निद्रादेवी की गोद में आंखें खोलीं। दोनों थके जीवों को प्रात: सूर्य की किरणों ने थपथपा कर तरोताजा कर दिया।

पतझर

एक महीना बीत गया। निधि को तार मिला कि इंदिरा की हालत नाजुक है फौरन आये। सर्दी के दिन थे, तार लेकर निधि छतवाले कमरे में गया। कोमली सूत कात रही थी। निधि ने जल्दी से सामान बांधे तो कोमली ने कहा

"मुझे भी ले चलो न इंदिरा को देख आऊंगी।"

"मैं भी नहीं जा रहा हूं। कल एक दोस्त आ रहा है।"

"बीमारी नाजुक है नहीं जाओगे तो लोग क्या कहेंगे ? दोस्त को तार दे दो कि न आये।"

"मैं जाकर भी क्या करूंगा ?"

"ऐसी बातें क्यों करते हो ? लोग तुम्हीं को कहेंगे कि बीवी की जान पर बन आई तो भी नहीं गया।"

"अब भी कह रहे हैं।"

"बच्चों की सी बातें मत करो। लोग मुझे कोसेंगे कि मैंने नहीं जाने दिया।

"तुम्हें डर नहीं लगता कि मेरे साथ आओगी तो बेतुकी बातें करेंगे ?"

"करने दो पर मैंने उन पर ध्यान देना छोड़ दिया है। मुझे बातें सहने की आदत हो गयी है।"

"ये ही बात मेरे साथ भी है।"

"मुझे इंदिरा की सेवा करने की इच्छा हो रही है।"

"हम दोनों को इंदिरा साथ देखेगी तो उसकी बीमारी और भी बढ़ जायेगी। और वह फौरन आंख मूंद लेगी। कोई भी स्त्री दूसरी को नहीं सह सकती।"

"कैसी बातें करते हो तुम तो औरत का दिल भी नहीं जानते। अच्छा, तुम कल चले जाना। मैं आज ही नारय्या को लेकर···।"

बात पूरी नहीं हुई थी कि किसी के आने की आहट हुई। पांच मज़दूर और मिस्त्री मिलकर आये और निधि को नीचे ले गये। नीचे के बरामदे में नारय्या चटाई पर लेटा था उसके कंधे पर दो बड़े और सिर पर छोटा घाव दिख रहे थे। निधि फौरन सामान लेकर आया मरहम पट्टी की। मिस्त्री ने बताया कि सोमप्पा की करतूत है। कोमली ने कारण पूछा। नारय्या ने मजदूरों और मिस्त्री को झिड़क दिया कि चुपचाप अपना काम देखें बात का बतंगड़ न बनायें।

नारय्या रेड्डी को डांट रहा था। एक बार काम करते वक्त उसने कमीज उतारने को कहा। रेड्डी ने उतारने से इंकार कर दिया। इस पर नारय्या चिढ़ गया। रेड्डी ने जवाब दिया "तू कौन होता है हम पर हकूमत करने वाला तू तो नौकर है।" नारय्या ने मारने की धमकी दी बस उसने बदले में उसे पकड़ कर पीटा।

कोमली के पल्ले कुछ भी नहीं पड़ा। दूसरे मजदूर सिंगप्पा ने कहना शुरू किया ये सारी बातें तो पैसों पर उठी थीं। नारय्या ने कहा कि बाबू से कहकर मजदूरी में कटौती करवायेगा, बस सोमप्पा उछलने लगा। वह मारिम्मा है न सरकार, वह रेड्डी से हमेशा काम के वक्त बतियाती रहती है। नारय्या को यह अच्छा नही लगा। उसने कहा खबरदार जो उससे बातें कीं। रेड्डी ने मारिम्मा और नारय्या का रिश्ता बताकर ताना मारा। नारय्या ने रेड्डी और मारिम्मा को अलग करके अलग जगहों पर खुदाई करने को कहा। मारिम्मा ने सोमप्पा से कह दिया। रेड्डी को तैश चढ़ गया। दोनों ने मिलकर नारय्या की मरम्मत कर दी।

कोमली को अब भी पूरी तरह से बात समझ में नहीं आयी। नारय्या ने फिर से सबको डांटा कि वे अपने काम पर जायें। सब चले गये तो गिरि गुप्ता ने बताना शुरू किया "यह सब बातें तो उस कर्नूल के आदमी ने भड़कायी हैं सरकार।"

निधि ने पूछा "वह कौन है?"

"अरे वही जो भीड़ को जमा कर हमेशा कुछ न कुछ भड़काता रहता है। सरकार उन दिनों आप यहां नहीं थे, उसने कर्नूल में मीटिंग की। उसने बलपूर्वक लोगों को मीटिंग में बुलाया। मुझे भी जाना पड़ा। उसने सबको भड़काया कि ज्यादा मज़दूरी मांगे। बस रेड्डी भड़क गया। नारय्या ने जब कटौती की बात की तो उसने कहा मालिक से कहकर उसकी खबर लेंगे। सरकार आपसे कहने के पहले ही सोमप्पा के साथ मिलकर मारिम्मा के बहाने खूब पीटा। सब कुछ बताकर गौरय्या भी चल दिया। कोमली ने निधि से पूछा कि वह कहां तक बात समझ पाया है। निधि ने बताया...नारय्या रेड्डी पर अधिकार जमाना चाहता था। मारिम्मा के साथ सोमप्पा का प्रेमालाप नारय्या सह नहीं पाया। तिप्पेस्वामी ने मज़दूरों को ज्यादा मज़दूरी मांगने के लिए भड़काया इन सभी कारणों से रेड्डी और सोमय्या ने नारय्या को पाठ पढ़ाया है और प्रजातंत्र के माने समझाये।"

"तो तुम अब नहीं जाओगे?"

"कैसे जाऊं?"

यही बातें हो रही थीं कि इतने में इंदिरा के पास से एक और तार आया कि हालत बहुत नाजुक है। निधि शाम की गाड़ी से जाने को तैयार हुआ। स्टेशन पर गाड़ी के लिए खबर भेजी। इतने में अनंताचारी भी आ गये। उन्हें देखकर कोमली भीतर चली गयी और दरवाजे की ओर से उनकी बातें सुनने लगी।

"सुना तुमने परसों देबरकोंडा में फिर गड़बड़ी हो गयी। अनंताचारी ने पूछा।"

"सुना तो था, पर पूरी बात नहीं मालूम हुई।"

"इसी सरकार जिले के आदमी ने गड़बड़ी मचाई। मीटिंग के बाद गुंडप्पा के घर भोजन का प्रबंध किया गया था। वहां पर बहस छिड़ गयी। गुंडप्पा को संदेह हुआ कि उसकी दो पत्नियां होने की बात पर सरकार जिले का वह व्यक्ति परोक्ष रूप में नुक्ताचीनी कर रहा है उसने भी खूब झाड़ा। इसी बहस के दौरान तुम्हारा नाम भी आया। तुम्हारे नाम के साथ कोमली को भी उसने खूब खरी खोटी सुनायीं।

"गुंडप्पा की फरियाद क्या थी?"

"होती क्या ? निरर्थक आक्रोश में भरकर बात को बढ़ाने के सिवाय कुछ भी नहीं था। कहता था कि बिना शादी के परायी स्त्री को घर में बिठाने से तो शादी करके दो पत्नियां रखना बेहतर है। उसका विचार था कि पत्नी को दूसरा कोई अपहरण न कर ले इसलिए शादी की जाती है। बात यहां तक बढ़ गयी कि दोनों एक दूसरे की जान लेने तक को तैयार हो गये। मैंने बीच में पड़कर दोनों को अलग किया उन्होंने तो मुझे भी नहीं छोड़ा।"

"क्या कहते थे ?"

गुंडप्पा कहता था कि कात्यायनी की शादी होनी मुश्किल है, तो मैंने कहा—" न हो तो मेरी बेटी संन्यासिनी रह जायेगी तुम लोगों का इससे क्या बिगड़ता है ?" गुंडप्पा के अनुचर रेड्डी के दल ने तो बेचारे नारय्या को भी तो नहीं छोड़ा।

"मुझे तो लगता है नारय्या की ही गलती है।" निधि ने कहा।

"नहीं मैं नहीं मानता। इन गधों पर मस्ती छा गयी है—इन्हें काम से हटा देना चाहिए।"

"इससे समस्या का अंत नहीं होगा, बल्कि वह और उग्र रूप ले लेगी। मेरा ख्याल है कि इस सबका कुछ और ही गहरा कारण रहा होगा। उसे खोज निकालना जरूरी है। जरा सोचकर बताइये।"

"मुझे तो कुछ नहीं दिखता।"

"जाति कुल के झगड़े, सीमावर्ती इलाकों पर संघर्ष तो मात्र धनी और दरिद्र वर्ग के झगड़ों के ही दूसरे रूप हैं। जब तक आर्थिक समानता नहीं होगी तब तक मनुष्य सबको समान रूप से प्यार करना नहीं सीखेगा।"

"इसका मतलब है कि तुम सोशलिज्म की पैरवी कर रहे हो।"

"पैरवी नहीं यह एक ज्वलंत सत्य है। दया, प्रेम, स्नेह, औदार्य आदि मूल्यों का पैसे के साथ निकट का संबंध है। सर्वोत्तम और श्रेष्ठ आध्यात्मिक जीवन बिताने की इच्छा वाले व्यक्ति को वह तभी संभव हो पाता है। साधारण गृहस्थ उसमें रत नहीं हो पाता, इसका तो आप प्रत्यक्ष उदाहरण देख ही रहे हैं और सब के सब न तो योगी बन सकते हैं न बनेंगे और न ही बनने चाहिये। मुझे लगता है सब में समान रूप से भौतिक वस्तुओं का वितरण होना आवश्यक है। इसे आप सोशलिज्म की पैरवी कह लीजिए या कुछ और।

"ये सारी बातें तो हवा में महल बनाने से सपने देखना है। एक साधारण मनुष्य खाना कपड़ा रहने को जगह के अलावा कुछ नहीं चाहता। यही है न तुम्हारी बातों का सार ?"

"सिर्फ चाहने की बात नहीं। मैं कहता हूं इन तीनों के न होने पर दूसरी कोई बात होनी असंभव है। कालेपानी की सजा भुगतने वालों को सरकार ये तीनों चीजें बराबर देती है। प्रारंभिक आवश्यकतायें पूरी हो जाती हैं इसीलिए हम उनसे आध्यात्मिक चिंतन और सहनशीलता पाते हैं। उत्तम से उत्तम पुस्तकें कारावास में ही लिखनी संभव हुई। कपड़ा त्याग कर एक आध इंसान भले ही मोक्ष पा ले पर खाना त्याग कर मोक्ष पा लेने वाले किसी भी एक व्यक्ति का उदाहरण आज तक सुनने में नहीं आया।

"अनंताचारी सोच में पड़ गये। उन्हें झिझक हो रही थी कि अगला प्रश्न करें अथवा नहीं! दो तीन बार प्रश्न ओठों तक आकर लौट गया। अपने को रोककर उन्होंने एक दूसरा ही प्रश्न किया—"अच्छा, दोनों जाकर तुम्हारी पत्नी को ले आयें तो कैसा रहे ?"

"वह बीमार है आज शाम की गाड़ी से उसे देखने जा रहा हूं। खुदाई का काम बीस गज भी नहीं हुआ।"

"मजदूर ठीक से काम करें तो एक हफ्ते में काम पूरा हो जायगा।"

"इच्छा हो रही है कि खुदाई का काम बंद कर दूं।"

"इतनी दूर बढ़ आये हो, तो अब काम बंद करना ठीक नहीं। तुम जाओ और वह अच्छी हो जाय तभी आना, तब तक मैं यहां तुम्हारा काम संभालता हूं।"

इतने में कोमली ने गिलास में दूध लाकर अनंताचारी के सामने रखा और बोली—"मैं भी इनके साथ जाना चाहती थी।"

"तुम्हें यहां अकेली रहने से जी घबराता हो तो मेरे यहां चलकर रह लेना।" अनंताचारी ने सुझाव दिया।

"मेरी वजह से आप पर भी तकलीफें आयेंगी।"

"तकलीफें किस बात की ?"

"तकलीफ नहीं तो निंदा ही सही। कात्यायनी की शादी हो जाती तो किसी को चिंता नहीं होती।"

आचारी ने जवाब नहीं दिया। दूध पीकर चले गये।

निधि ने कहा—"बेचारे नारय्या को अकेला कैसे छोड़ दूं ?"

कोमली ने उसका भार अपने ऊपर ले लिया। इतने में गाड़ी आ गयी। कोमली ने होल्डाल गाड़ी में रखा। निधि नारय्या को देखने गया तो नारय्या ने कहा—"घबराओ नहीं छोटे बाबू। मैं ठीक हो जाऊंगा, पर हां कोमली को साथ मत ले जाओ। "निधि ने बताया कि वह अकेला ही जा रहा है।" नारय्या ने बताया कि झगड़े की जड़ वही कोमली है। रेड्डी कोमली के बारे में कुछ बक रहा था सो उसने रेड्डी को थप्पड़ दिया। कहता था "कोमली को मैं और आप धनवानों के पास भेजकर पैसा कमाते हैं। मुझे इस पर गुस्सा आ गया था। देखने तो दो छोटे बाबू। उसका खून न पी डालूं तो कहना।"

"नारय्या ! हमारी हालत ठीक नहीं। दस लोग दस बातें करेंगे ही। जब तुम जानते हो वे बातें सच नहीं हैं तो गुस्सा करने की भी जरूरत नहीं। उन्हें जीतने के लिए तुम उनसे घृणा करने लगोगे तो बात बिगड़ जायेगी।"

"इन कमबख्तों के साथ अच्छाई बरतना ठीक नहीं। लातों के भूत बातों से नहीं मानते।"

"अच्छा अब तू सो जा।"

"आप जाइये छोटे बाबू। मेरी फिकर मत कीजिये।" निधि गाड़ी में जा बैठा। कोमली ने गाड़ी में सिर ले जाकर निधि का हाथ पकड़ कर उसकी आंखों में देखा और बोली "जल्दी आ जाओगे न" ?

"पता नहीं कितने दिन रहना पड़ेगा।"

"तुम्हें देखे बिना मैं रह नहीं सकती। मैं भी कल या परसों चली आऊंगी। मुझ पर गुस्सा मत करना।"

"नारय्या को छोड़कर चली आओगी ?"

"बूढ़े की जान इतनी जल्दी नहीं जायेगी। काफी तगड़ा है।" कहकर हंसने लगी। वापसी में अमृतम् और उसके भाई को लेते आईये।"

गाड़ी चली। कोमली गिरती गिरती संभल गयी। गाड़ी को नुक्कड़ पर मुड़ने तक खड़ी खड़ी देखती रही। दूर से लाल साड़ी में धीरे-धीरे तारे जैसी बन धूप में लीन होकर चमकी और ओझल हो गयी।

निधि को लेने स्टेशन पर कोई नहीं आया। ससुराल में कदम रखते शाम के चार बज गये थे। घर में लोगों की आहट नहीं थी। नौकरानी झाड़ू दे रही थी। उसने पूछा—"किसके लिये आये हैं आप ?" निधि को सूझा नहीं कि क्या जवाब दे। उसे किसी से भी रिश्ता जोड़कर बुलाने की आदत नहीं थी। बिस्तर चौकी पर रखवाकर चहलकदमी करने लगा। इतने में सात आठ बरस का लड़का उसके पास आया और उसने चौकी के नीचे से लट्टू निकाल देने की मांग की। निधि ने उससे पूछा कि कौन है तो लड़के ने बताया कि वह इंदिरा का भाई है। लड़के के चेहरे से इंदिरा के चेहरे को याद करते हुए निधि ने लकड़ी लेकर लट्टू चौकी के नीचे से खींचकर उसे दे दिया। लड़का लट्टू लेकर भाग गया। इतने में नौकरानी ने आकर कहा कि उसे भीतर बुलाया गया है। भीतर के कमरे में दीवाल से लगकर नीचे चारपाई पर माधवय्या बैठे थे। निधि के जाते ही उसे गले लगा लिया। आंसू न निकल आयें इस डर से निधि के कंधे पर चेहरा छुपा लिया। "अब तुम ही बचा लो भगवान ने हमें डुबो दिया है।" कह कर माधवय्या नीचे बैठ गये।

निधि को दुखी लोगों के चेहरे देखने की आदत थी। पर फिर भी ससुर का चेहरा देख नहीं सका। यह उसके लिये भी एक नयी अनुभूति थी। दूसरी ओर मुंह फेर कर उसने पूछा—"इंदिरा कहां है ?" इस पूरे दृश्य में उसे कहीं भी दु:ख की झांकी नहीं मिली। लगा कि एक बाधा को हटाने के लिये दूसरी बाधा को मोल ले लिया गया है।

"तुम्हें मैंने खो दिया इसका फल मुझे मिल गया, बेटा! करनी का फल तो मिलेगा ही।" माधवय्या कहते हुए उठा और डगमगाते हुए निधि को लेकर बाहर निकला। निधि ने माधवय्या को सिर से पैर तक देखा। जीवन ने उन्हें ऊंचे शिखर से नीचे खाई में ले जाकर पटक दिया था। फिर समय ने उसे फिर से ऊपर उछाला पर ऊंचाई पर रहने का अधिकार खो देने वाले व्यक्ति की भांति पुन: पुन: खाई में गिरकर चोट खाकर छटपटा रहा था। ऊपर की पंक्ति में दो दांत टूट चुके थे। सिर पर काफी बाल झड़ चुके थे। बाकी सफेद हो गये थे। त्वचा हड्डियों को थामे रखने में असमर्थ होकर ढीली हो गयी थी, लगता था कि पानी में पत्थर का आश्रय लेकर वृक्षों की शाखें हिल रही हैं।

दोनों बस्ती की सीमा पर पहुंचे। दूर एक झोंपड़ी और उसके सामने बांस के छाजन से बना मंडप दीख रहा था। झोंपड़ी के पीछे पश्चिमी आकाश को सूर्य जला रहा था। दूर गायों का समूह हिल रहा था। पक्षी समूहों में उड़ते तलाब में गिर रहे थे।

"बस्ती से बाहर ले जाने को कहा गया। किसी भी सैनीटोरियम में जगह नहीं थी। दूसरा कोई चारा न देखकर यह इंतजाम कराया है।" झोंपड़ी के पीछे एक बुढ़िया बर्तन मांज रही थी। माधवय्या ने बताया "मेरी भाभी है रात दिन…"

खटिया पर शेष बची इंदिरा का ढांचा पड़ा था। पास रखे बक्से को खींच कर निधि खटिया के पास बैठ गया। इंदिरा का कंकाल विकट हंसी हंसने लगा। तनिक हिलकर उसने हाथ बाहर किया। इस चेष्टा में शिशु के जन्म जैसा आश्चर्य भरा था। इंदिरा ने एकटक निधि को देखा। दृष्टि को दूर कहीं कोई खींचे ले जा रहा था जिसे जबर्दस्ती एक बार निधि पर टिकाने की कोशिश कर रही थी। पूरी ताकत और शक्तियां गले में आ गयीं। दिल की धड़कन क्षण भर रोककर शब्द रूप में ढल जाने को भीतरी शक्तियां प्रयास कर रही थीं।

"आप आ गये ?"

बुढ़िया यह दृश्य देख न पायी सो वहां से हट गयी।

"लोगों ने मुझे यहां फेंक दिया है। मुझे छोड़कर तो नहीं जाओगे न ?" कहती हुई थकावट से इंदिरा ने आंखें बंद कर लीं।

निधि का मन निश्चल खड़ा रहा। आस पास के शिखर पिघल कर गिरते बहते जा रहे थे। नदियां अपने जन्म-स्थान को पहुंच रही थीं। भूमि पर गिरे पत्ते उठ उठकर पेड़ों से मिलने जा रहे थे। इस डांवाडोल और प्रतिकूल वातावरण में निधि अकेला शांत और स्थिर बना खड़ा था। उसमें किसी भी प्रकार का आवेश नहीं था। सुख, दुख, भय, चिंता के कसाव में अपने को नहीं पा रहा था। इंदिरा के साथ उसने मिलकर सूर्योदय के सौंदर्य में अंगड़ाई नहीं ली थी और न ही चंदा के शीतल सुखद वातावरण में प्रेमोन्मत हुआ था। तारों की झिलमिलाहट में तिरछी नजरों का शिकार बन काम वासना से वह उन्मत नहीं हुआ था और न ही शीतल पानी की पुलक में वह बेसुध हुआ था।

इंदिरा के साथ अपना हृदय मिलाकर विश्वसंगीत की मधुर तान उसने नहीं भरी थी। सभी नदियों के संगम से बने महासमुद्र जैसी प्रेमवाहिनी में उनके खून अलग अस्तित्वों में ही बहे थे। सृष्टिरचना के लिये जूझना सीखने वाले अबोध प्राणियों की पागल प्रशांतता ने उसे घेर लिया था। गीत, पद, यज्ञ, वस्तुएं और प्रार्थनाएं कितना भी कुछ करो, चांद जितना प्रकाशमान है उससे अधिक प्रकाश अपने में नहीं भर सकता और न ही हवा अपनी शक्ति को बढ़ा सकती है। समुद्र अपनी लहरों की संख्या को बढ़ा नहीं सकता और न ही मनुष्य का हृदय सीमा से अधिक प्रेम कर पाता है। जो लोग जीवन में सुख को नहीं भोग सकते कष्ट भोगना उनके लिये कठिन है।

इंदिरा जिस लोक को देख रही थी उसके किवाड़ खुले ? कहीं उसने फिर से आंखें तो नहीं खोलीं।

"मुझे अब छोड़कर मत जाना।" शरीर को छोड़कर निकले हाथ ने निधि को स्पर्श किया। हथेली खुरदुरी थी। जाने और यह छटपटाहट किसलिए ? क्या पा लेने के लिये यह हृदय धड़क रहा है ? त्वचा और खाल को सताने के पीछे जाने क्या उद्देश्य रहता होगा ? इस लोक में आंखें बंद कर दूसरे लोक में खुलने वाली उसकी आंखें अंधकार में पुनः पुनः आंख मिचौली क्यों खेलना चाहती हैं ?"

निधि की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहे और क्या करे। उठकर बाहर आ गया। पश्चिम की ओर आकाश में जाकर सूरज धू धू करके जल उठा। बादल राख बनकर बिखर कर उड़ने लगे थे। प्रकृति दुःख से अंधी हो गयी ! जाने किसके लिये तार के खंभों पर एकाकी कौवा रो रहा था। निधि को अपने भीतर एक और की चीख सुन पड़ी—"बापू"। इतने में माधवय्या ने आकर कहा—"बेटा भीतर चलो।" इंदिरा ने पुनः शक्ति संजोकर कटी फटी आंखों से प्रश्न किया—"चले जाओगे ?" निधि जानता था कि यह प्रश्न मृत्यु जीवन से पूछ रही है। उसकी मृत्यु ने उसका हाथ पकड़ कर झकझोर दिया था। उस नौका की पकड़ में लंगर नहीं आ रहा था। कोई भी शक्ति उसे पकड़कर नाव को रोकने में असमर्थ हो गयी थी। निधि ने मृत्यु का स्पर्श किया। प्राणी का अंतिम माधुर्य उसके हाथों में छलक आया। उसे लगा कि सृष्टि के रहस्य का शोधन करके उसने उसे पा लिया है। एक प्रशांत

ज्योतिवाहिनी उसके भीतर प्रवाहित हो उठी जिसने सुख और दुःख जैसे आवेगों से तटस्थ रह कर उसमें चेतनता भर दी थी और उसे एक स्तर का मानव बना डाला था ।

कमरे के भीतर बुढ़िया और बाहर माधवय्या, दुनिया समझ सकने वाला रोना रोने लगे । रुदन में गंभीरता और पूर्णता थी सो उसमें बाधा डालना उचित नहीं था । मनुष्य को जीवन के साथ बांध लेने वाला एकमात्र साधन है आंसू । आंसू ही अंतर को जानता है । निधि इस आंसू से भी तटस्थ रहा । वह मानव जीवन को आंसू में ढालकर उसे हथेली पर रख देख परख कर सारी दुनिया को डुबो देने का समय था । आंसू में प्रवाहित प्रेमवाहिनियां, हंसी के फव्वारे, मनुष्य को दूसरे के साथ बांध लेने वाली सांकल, यौवन में गरमाकर, बुढ़ापे में बर्फ सी जमकर , मृत्यु में सार्थक हो उठने की क्षमता वाले आंसू का क्या कोई अर्थ नहीं रह गया ? "नहीं ऐसा नहीं, आंसू का कोई अर्थ नहीं" का बोधमात्र ही आंसू बन जाता है । यही उसका अर्थ है ।

निधि ने क्रिया-कर्म स्वयं ही संपन्न किया । लोगों ने इंदिरा को महासती की उपाधि दी । सुहागन की मौत को लोगों ने सराहा । बड़ों ने कहा "अच्छा हुआ कोई बच्चा वाला नहीं छोड़ गयी ।" कुछ बड़ों ने तो निधि को दूसरा विवाह करने और शव को जलाकर उलटे पांवों से हवनकुंड के चारों ओर सप्तपदी रखने की सलाह दी । चिता को जलाने वाले हाथों से मंगलसूत्र बांधने को कहा गया । निधि ने कहा कि ये इंसान नहीं टाट के बोरे हैं । बोरियां खाली नहीं रहनी चाहिएं चाहे फूलों से भरो या पत्थरों से या लकड़ियों से । उन्हें भरना ही एक लक्ष्य है उनका । भर कर उसका मुंह बांधकर पेड़ से लटका देते हैं । तभी जाकर उन्हें संतोष मिलता है ।

पांच हजार, दस हजार दहेज का भी लालच दिया । किसी के गले में फांसी का फंदा लगाने की सलाह दी । रेलगाड़ी छूटने तक अमूल्य सलाहों से कान भरते ही रहे कुछ सज्जन तो तीन स्टेशनों तक उनके साथ लगे रहे । जैसे तैसे उनसे पीछा छुड़ाकर वह गोदावरी स्टेशन पर उतरा । औरतों की नजरों से बचता हुआ गाड़ी लेकर गोदावरी नदी के तीर पर जाने की आज्ञा दी ।

गोदावरी के किनारे किनारे जाकर निधि जगन्नाथम् के आश्रम पहुंचा तो नौ बज चुके थे । तट से फलांग की दूरी पर एक बड़ी और तीन छोटी झोंप-

ड़ियां थीं। आगे बड़े बड़े वृक्ष साया दे रहे थे। पीछे पुआल की ढेरी और खूंटे से बंधी दो गाएं खड़ी थीं। बछड़े छलांग मारते हुए घास चबा रहे थे। नदी के तीर पर आधी बाहर खींची डोंगी एक लकड़ी के कुंदे से बंधी थी। निधि ने बिस्तर गाड़ी से निकालकर गाड़ी वाले को किराया दिया। इतने में बीच में मांग काढ़े लंबे लबे से बाल, लंबी और ऊंची नाक, नीचे का ओंठ लटका सा, खद्दर का नीला पजामा और बटन रहित कुर्ता पहने हाथ में छड़ी लिये जगन्नाथम् झोंपड़ी से बाहर आया।

"धिनि जा जी जी—जा जी जी।" उल्टे शब्दों से निधि को संबोधन कर उसने स्वागत किया। स्वर में अभी सुकुमारता शेष थी। निधि ने पीछे मुड़कर देखा तब तक जगन्नाथम् ने उसके गले में बाहें डाल दी थीं। कहने लगा "येआ नेतकि नोंदि दबा।" (कितने दिनों बाद आये) कमान सी भोंहों ने उसकी आंखों में एक विशेषता दी थी और उन्हीं आंखों में प्यार भर गया था।

"तमिल सीख रहे हो क्या ?"

"हमारी पाठशाला में शिष्य बनकर आकर बारहखड़ी सीख सकते हैं। क्यों नहीं समझ पाये कि मेरी जीवन की तरह मेरी भाषा भी उल्टी हो गयी है। जा जी जी।" दोनों एक दूसरे को देखकर हंस पड़े। फिर निधि ने जगन्नाथम् के दोनों हाथ लेकर उसकी आंखों में एकटक देखा और हंसने लगा।

"ओह ये तो अपन भी कर सकते हैं।" कहकर जगन्नाथम् फिर हंसा। दोनों यों ही निरर्थक कई बार हंसे। पास खड़े गाड़ी वाले की समझ में कुछ नहीं आया, फिर भी हंसता हुआ बैलों को ललकार कर सीटी बजाता हुआ हांककर ले गया।

"आश्रम का क्या नाम दिया है ?"

"स्वामी। यह पुण्य भूमि है। इसे आश्रम कहना पाप होगा। दुनिया से अलग थलग तटस्थ रहने वालों के लिये यहां कोई स्थान नहीं है। हां, समाज में रह सकने वालों को यहां आश्रय मिल सकती है। अज्ञान से अंधकार में भटकते हुए अनपढ़ लोगों को, 'तेलूगु साहित्य' के प्रबंध युग के शोधार्थी जगन्नाथम् यानि अस्मदीय सेवक—ज्ञानदान कर ज्योति प्रदान करते हैं।"

"ऐसा संकल्प रखते हो तो तुम शहर से इतनी दूर अलग-थलग क्यों रहते हो।"

"किसी भी प्रकार की बाधा या रुकावट के बिना निर्विघ्न रूप से कार्य संपादन करने के लिये यहीं रहना उत्तम है जी जा जी। पेट भरने के लिए और जी कर लोगों के पैर पकड़ना, उनकी दया भिक्षा मांगने का काम मैं नहीं कर पाया और न ही वह मुझ से बन पड़ा। बेकारी में घूमते-घूमते तकलीफें सहते-सहते अचानक सोच रहा था कि दिमाग में यह योजना बिजली जैसी कौंध गयी।"

दोनों नदी तक पहुंचे और पानी में उतरे। "वह अपनी जीवन नौका है—सुकुमार डोंगी, संध्या समय नहीं विहार के लिये ली है।" कहकर जगन्नाथम् डोंगी में चढ़कर पानी में कूदा और तैरने लगा।

दोनों पानी से बाहर आये।

"सुना है, इंदिरा चल बसी।"

"हां।"

"जीवन बड़ा ही विचित्र है, जीजाजी। अगर इंसान इसके आड़े न आवे तो वह अपने आप ही सभी समस्यायें सुलझा लेता है।"

"वह सुलझाना नहीं कहलायेगा। समस्या न होना और सुलझाना दो अलग बातें हैं। समस्याहीन होना मृत्यु की स्थिति है। अच्छा तुम अपनी बात बताओ। पत्नी के साथ रहने की तुम्हारी उम्र हो चली है।"

"मेरी तो वह समझ में नहीं आती और न ही मुझे उनसे कोई वास्ता ही महसूस हुआ। मुझे तो लगता है खिलौनों की तरह उनके साथ खेलूं। किसी एक के साथ रहने में मुझे डर मालूम होता है। मुझे लगता है प्रथम इंसान जब अकेला था और अपने अकेलेपन से वह साक्षात्कार नहीं कर पाया तो अपने मनोरंजन के लिये उसने स्त्री की रचना की होगी।"

"तुम में स्त्री की इच्छा ...।"

"वह तो उसी में होती है जिसके पास करने को कोई काम नहीं। दिन भर काम हो तो यह स्त्री एक मुसीबत ही हो जाती है। मैं भोर तड़के उठता हूं। गोदावरी में घंटे भर नहाता हूं फिर दूध दुहता हूं। बागवानी का काम करता हूं। खाना बनाता हूं। दोपहर पत्रिकायें पढ़ता हूं, शतरंज खेलता हूं, लोगों को पढाता हूं। शाम पेड़ के नीचे पचीस के करीब लोग आते हैं, उन्हें पढ़ाता हूं। एक पैसे का भी खर्चा नहीं, बड़े आराम का जीवन है। पढ़ाने के एवज में मैं

किसी से पैसा नहीं लेता। शिष्यगण खाने पीने का सामान लाकर डाल देते हैं। घर से चावल आता है। दोनों गायें भी शिष्यों ने ही दी हैं। वही खाना बना देने का भी आग्रह करते हैं। देखते रहिये पांच वर्षों में यह एक बड़ा विश्व-विद्यालय बन जायेगा। यही जीवन का रहस्य है। आप कुछ भी न मांगिये, चुपचाप अपना काम करते जाइये, दुनिया आपके पैरों पर झुकती है, आप उससे कुछ अपेक्षा कीजिये तो पत्थर बरसाने लगेगी।

खाना पक चुका तो दोनों ने छक कर खाया। फिर कुछ देर सोये। शाम को चाय पी कर दोनों नदी की तरफ गये।

"जानते हो न, कोमली मेरे साथ है।" निधि ने पूछा।

"आप मेरा रहस्य जाने बिना मानेंगे नहीं। कोमली का नाम लेंगे तो मुझमें से कविता फूट निकलेगी। सुंदर स्त्री पर लिखे गये काव्य संग्रहों पर कवि-पुंगव समीक्षा ग्रंथों की उपज बढ़ा रहे हैं। अच्छा होता, ये कवि पुंगव कोमली के नीचे हस्ताक्षर करके चुप हो जाते।"

"तुम्हें लिवा लाने को कहा है उसने। कह रही थी कि तुम उसे पानी में भगा ले गये थे। अब तुम जाओगे तो उसके लिये सजा देगी।" बातें हो ही रही थीं कि कुछ लोग पढ़ने आ गये।

जगन्नाथम् उनके साथ घर चला गया।

दिन बीतकर दूसरे दिन में परिवर्तित हो गया। निधि ने सामान बांधा।

"तुम्हें जरूर आना होगा, समझे।"

"जरूर आऊंगा। कह देना आप कोमली से।" जहां भी रहूं तेरी याद, मेरी गरमायी हर लेती है।

"किसी भीड़ में बसूं मैं जाकर"
एकाकी वन लीप तेरी, देहरी
सजा रंगोली
तेरी याद बसा कर
तेरे ही सपने साकार कराता हूं।"

"नहीं आज बिलकुल नहीं जम रही है बात। कविता से प्रारंभ कर गीत में उतर आया हूं जीजाजी। रुकना तो चाहता हूं पर गला सध नहीं रहा है। कह देना दीपावली पर आऊंगा। अमृतम् दीदी से कह देना उसे बहुत याद किया है मैंने। गाड़ी ओझल हो गयी।

दयानिधि को अमृतम् के गांव पहुंचते शाम के पांच बज गये। सामान वहीं स्टेशन पर छोड़कर अकेला गाड़ी लेकर चार पांच मील घूमा और बस्ती के पास नदी के पुल तक पहुंचा। गाड़ी वाले ने निधि को वहीं छोड़ पुल के पार बसे गांव में अमृतम् के घर का पता बताकर गाड़ी मोड़ ली। निधि ने पुल तो पार कर लिया पर अंधेरा होने तक वह बस्ती में नहीं जाना चाहता था। दूर खेत दिख रहे थे। लोग खेत से लौट रहे थे। निधि को डर था कि अमृतम् के पति से उसका सामना न हो जाये। निधि बायीं ओर तालाब के किनारे थोड़ी दूर तक गया। सबकी नजर बचाकर चुपचाप अमृतम् की बेटी को आंख देखकर लौट जाना चाहता था। उसने अपने आपसे प्रश्न किया कि वह क्यों चोरों की सी हरकत कर रहा है। सीधे सबके सामने जाकर क्यों नहीं देख सकता। पर उसे अपने प्रश्न का उत्तर नहीं मिला। चोरी में दूर गहरे कोई आनंद और सुख छिपा था जो किसी को बांटा रहीं जा सकता था। शायद अमृतम् उसे देखकर लाज से सिर झुका ले। आनंद से पागल हो छिप जायेगी। पूछेगी "क्यों आये हो जीजाजी। तुम हमेशा के लिये मेरे पास ही रह जाओ न। पालने में लेटी इस को देखो, तुम्हें बांट लेने का फल है मेरी बेटी।" अमृतम् उस अपार आनंद को मूक बनकर सहेगी जिसे दुनिया समझ नहीं पाती। अमृतम् की उस स्थिति को वह अकेले में देखना चाहता था। बच्ची के रुदन में अनादिकाल से मानव की रहस्यमय मूक तड़पन मुखर हो उठेगी। शायद पुण्य की भांति पाप भी अमरता पाता होगा।

ये सारी बातें निधि की कल्पना में डोल रही थीं। वह तालाब के किनारे बैठा था लहरें किनारों पर श्वास ले रही थीं। मिट्टी से उठती गरमी बाहर न आ सकने के कारण धरती में ही समाती जा रही थी। फूटते तारे तालाब में चमकने लगे। बैल तालाब पर पानी पीने आये। उन्होंने कमल के पत्तों को छितरा दिया। कहीं कांताराव का नौकर तो नहीं। वह डरता क्यों है? अमृतम् तो है ही, बड़े चमत्कारिक ढंग से बात संभाल लेगी। पिछवाड़े न होकर सीधे रास्ते से घर में प्रवेश करना ही अच्छा होगा। वह धनवान है। बड़ा आदमी है—कोई उसे कुछ न कह पायेगा।" पैसा सबका मुंह बंद कर देता है—हर पाप को ढक देता है। योगी वेमना की सूक्ति उसे याद आ रही थी। आकाश निर्मल हो उठा था। चांद अभी नहीं उगा था। तारे चुपचाप चमक रहे थे।

मेघ पश्चिम में स्नान करने के निमित्त डूबकर छिप गये थे। दूर कहीं कोई पक्षी अपने अस्तित्व की हूक लगा रखा था। बच्चे लकड़ियों में कील ठोंककर लोहे के पहिये खदेड़ते जा रहे थे। जन कोलाहल कम हुआ। उसे भूख लग रही थी। पुल के पास आकर उसने दो केले खरीदकर खाये। आठ बज रहे थे। अमृतम् के घर की गली तक पहुंचा, मकान का पता लगाया। कोने वाली छत थी।

गली काफी चौड़ी थी पर सभी मिट्टी के बने कच्चे मकान और झोपड़ियां थीं। दूर सड़क की लालटेन झुकी खड़ी थी। उसमें रोशनी नहीं थी। एक ओर खाली मैदान और उसके सामने पीले छत वाला मकान यही अमृतम् का घर था।

घर तक पहुंचकर उसे मुख्य द्वार से भीतर जाने का साहस नहीं हुआ। मकान के आगे से होता हुआ गली के मोड़ तक गया। इसी रास्ते अमृतम् गगरी दबाये नदी से पानी लाने जाने कितनी बार गयी होगी। पिछवाड़े तक पहुंचने के लिए रास्ता नहीं दिखा। घर के चारों ओर पीली चाहरदीवारी घेरे घड़ी थी। दीवारों पर शीशे के टुकड़े जड़े थे। निधि ने सोचा इसीलिए लगवाये गये होंगे कि पिछवाड़े पेड़ पर पड़े झूले पर झूलती अमृतम् को कोई काला सा राजकुमार चुपचाप जाकर उठा न ले जाय। दीवार के सहारे वह पीछे पहुंचा। किवाड़ में से भीतर झांककर देखा उसमें से पूरा पीछे का हिस्सा दिख रहा था। बड़े-बड़े पेड़ पौधे—बरामदे से लगी सीढ़ियां—कुएं की जगत—उसके पास बड़े बड़े पानी के हंडे। बादाम का पेड़ और पास ही भीतर जाने वाला बड़ा दरवाजा दिख रहे थे।

लोगों की आहट नहीं थी। चाबी देना भूल गया था इसलिए रिस्टवाच शाम चार बजे रुक गयी थी। शायद लोग भीतर खाना खा रहे होंगे। पता नहीं कांताराव खेतों से लौटा होगा या नहीं। अमृतम् मंदिर तो नहीं गयी होगी? अमृतम् उसे पिछवाड़े देखकर अगर पूछेगी—"यह क्या इधर से कैसे आये?" तो कह देगा कि उसी को मुख्य द्वार समझ लिया था।

अचानक उसका हाथ किवाड़ पर जा पड़ा। किवाड़ आवाज़ के साथ भीतर की ओर खुला। "तो खुला ही है" फौरन उसने हाथ खींच लिया तो किवाड़ अपनी जगह वापस आ गया। कभी तो अमृतम् पिछवाड़े आयेगी, पर वह कब तक उसकी प्रतीक्षा में यों खड़ा रहेगा! बड़ी शर्म लग रही थी। लगा कि

वह बौना हो गया है। उसे देखने के लिए वह उतावलापन उसमें क्यों उठ रहा है ? अमृतम् उसके बारे में नहीं सोचती, उसके बारे में खुद क्यों सोच सोचकर परेशान हो रहा है, शायद कोई पिछवाड़े आया है—अरे अमृतम् ही तो है। दरवाजा ठेलकर भीतर पहुंचा। हाथ के झूठे पत्तलों को एक ओर दीवार से बाहर फेंककर आहट सुनते ही अमृतम् ने पीछे मुड़कर पूछा—"कौन है ? अरे तुम—जीजाजी। आओ।"

"शी—।" उंगली मुंह पर रख चुप रहने का इशारा किया और फुसफुसाने लगा—"मेरे आने की खबर किसी को न लगे।" बात पूरी करने से पहले ही अमृतम् हंसने लगी और बोली—"वाह। क्यों न कहूंगी। चलो चुपचाप भीतर—क्या तमाशा करते हो—सासूजी—जीजाजी आये हैं। शायद गाड़ी देर से पहुंची होगी।" कहते हुए दरवाजा बंद किया। सांकल चढ़ायी। इतने में उसकी सास बरामदे में आ गयी और चिल्लाई—"कौन है ? दिया भी तो किसी ने नहीं रखा ?"

"सासजी, हमारे निधि जीजाजी आये हैं। गाड़ी देर से पहुंची—बेचारों को घर का ठीक पता नहीं मिला ढूंढ़ते हुए पिछवाड़े से आ पहुंचे। चलो जीजाजी भीतर, चलकर मेरी बिटिया रानी को तो देख लो।"

तीनों भीतर गये।

"कांताराव कहां है ?" निधि ने पूछा।

"ताश खेलने गये हैं दोस्त के घर। यही है हमारी झोंपड़ी। तुम तो अब ज़मींदार हो गये हो। हमारी झोंपड़ी तुम्हें कैसे रास आयेगी। कैसा है तुम्हारा बंगला ? मुझे दिखाओगे नहीं ?" अमृतम् कहे जा रही थी। गहरे लाल रंग की साड़ी पहने थी—गोल छापे की चोली के बीच दिए की रोशनी में पेट का हिस्सा दिख रहा था।

अमृतम् बढ़ गयी थी खूब मोटी लग रही थी। बाल खुलकर छल्लों में कंधों पर लटक रहे थे। बीच में पुखराज के कर्णफूल चमक रहे थे।

"मेरे बंगले के बारे में तुम्हें किसने बताया ?"

"वाह। हम गंवार हैं तो क्या इतनी खबर नहीं पा सकते। खबरें तो मिलती ही रहती हैं। सासजी ! मैं सुनाती रहती थी न जीजाजी के बारे में बस ये ही हैं हमारे जीजाजी ! इन्हें गन्ना बहुत पसंद है।"

"ओह। अब समझी बेटा। तुम्हारे पास जाने के लिए मेरे बच्चे ने कई बार कोशिश की, पर हुआ नहीं। तुम्हें हम पर प्यार है। हमें याद रखकर खुद ही चले आये, बेटा। तुम्हें देखकर बहुत खुशी हुई। रिश्ता हो तो ऐसा हो।" कहती हुई बुढ़िया कुछ देखने लगी। फिर बोली "चलो आकर मेरी पोती को देख लो बेटा।"

अमृतम् उसे भीतर ले गयी। तीनों भीतर के कमरे में पहुंचे। अमृतम् ने लालटेन की बत्ती तेज़ करके झूले में लेटी बच्ची को दिखाया। नन्हीं सी अबोध बच्ची आखें मूंदे पड़ी थी। बच्ची सांवली थी, माथे पर काली बिंदी लगी थी। घुंघराले छोटे छोटे बालों ने माथे को घेर रखा था। निधि पहचान नहीं पा रहा था कि बच्ची का चेहरा किससे मिलता-जुलता है। अमृतम् की सास ने, जैसे मानो उसी ने बच्चों को जन्म दिया हो बच्ची के गालों पर हाथ फेरते हुए बोली—"शैतान बच्ची देख तेरे काका आये हैं। काका जिन्हें हीरा मिला है। तेरे काका को हीरा मिला है और हमें मिली है तू···सुंदर हीरे की कनी।"

'इसे कैसे पता चला होगा।" निधि सोच रहा था।

"सासजी, देखो न मेरी बिटिया रानी बिलकुल जीजाजी की शक्ल पर गयी है न?"

निधि का दिल धड़कने लगा—"कैसी निडर होकर कह रही है। जिस नश्तर के धार सी तेज अनुभूति ने उसे पूरा झकझोर कर रख दिया था, अमृतम् ने उसे ऐसे झेला मानो कुछ हुआ ही नहीं। बैंगन खरीदते वक्त मोल तोल ठीक न होने पर जिस तटस्थता से बैंगन बेचने वाले को जाने के लिये। कहा जाता है ठीक ऐसे ही निर्भयता से कह रही थी अमृतम्। देखो न आखें भी वही—मुंह बिलकुल वही। हूबहू जीजाजी आप ही की शक्ल है।

"बड़ी होगी तभी चेहरों का पता चलेगा। अपने काका पर नहीं जायेगी तो किस पर जायेगी। सास भी उसी तन्मयता से कहने लगी। "चलो अब अपने जीजाजी को खाना खिलाओगी या बातों से उस बेचारे का पेट भर दोगी?" कह कर सास रसोई की ओर चल दी तो अमृतम् ने पूछा—"कैसी लगी जीजाजी बिटियारानी?"

निधि को लगा कि पूछे सचमुच मेरी ही बेटी है? साहस संजो कर, गला

संवार कर पूछा—"अमृतम् मुझे एक शंका हो रही है कि—" शब्द मिल नहीं रहे थे।

"यही न कि हम दोनों तुम्हारे पास क्यों नहीं आये? तुम भी खूब हो। हमें तुमने बुलाया कब?" भीतर जाकर लोटे में पानी और साबुन लाकर उसके हाथ धुलवाये। इतने में कांताराव आ गया। सब मिलकर खाना खाने बैठे। अमृतम् ने भीतर जाकर सफेद साड़ी और चोली पहनी। बाल बनाकर फूल खोंसे और आकर परोसने लगी।

कांताराव ने कहा—"भाईसाहब आपकी मेहरबानी है कि आपके बहाने हमें भी मिठाइयां और दही खाने को मिला है।"

"उंह आप तो ऐसे कहते हैं मानो दही को कभी सूंघा भी नहीं। बेचारे जीज जी सच मान जायेंगे। ऐसी बेतुकी बातें मत करो।" अमृतम् ने कहा तो सब हंस पड़े। इतने में बच्ची रोने लगी। अमृतम् भीतर चली गया। भोजन खतम हुआ। अमृतम् ने पान बनाये और सुपारी इलायची की तश्तरी ले आयी। निधि तब तक बरामदे में खाट बिछा चुका था। जगन्नाथन और अनंताचारी के बारे में बातें होती रहीं। इतने में अमृतम् भी खाना खा आयी। कांताराव ने चुरुट सुलगाया और लोटे में पानी लेकर शौच के लिये खेतों में चला गया।

"उफ—तुम्हारे चुरुट की बू सही नहीं जाती।" अमृतम् ने नाक सिकोड़ी। फिर इंदिरा की मृत्यु पर संवेदना प्रकट की। दोनों कुछ देर तक मौन रहे। फिर अमृनम् ने पूछा—"तो कोमली अब तुम्हारे ही पास है न?"

"हां, पर तुम्हें किसने बताया?"

"इतना भी पता नहीं चलेगा। तुम भूल सकते हो हम लोगों को, पर हम तो तुम्हारा हर समाचार पाते ही रहते हैं।"

"क्या कांताराव भी जानते हैं?"

"शायद नहीं जानते। मुझसे कभी कहा नहीं। अच्छा बताओ अब कोमली से विवाह करोगे?"

"तुम्हारी नेक सलाह क्या है?"

"मैं क्या जानूं भला?"

"तुम्हें यह शंका कैसे हुई?"

"बचपन के साथी हो। अब तो वह तुम्हारे ही पास रहती है। इसी मे मैंने सोचा कि—।"

"तुम सलाह दोगी तो कर लूंगा।"

"पता नहीं।"

"क्या कहती हो ? क्या वह शादी करने के योग्य औरत है या नहीं ?"

"हमेशा इंसान एक ही जैसे नहीं रहते। एक जगह स्थिर रहने के लिए अब उसे अक्ल आ गयी होगी।"

अमृतम् की बात पर निधि को हंसी आ गयी। उसकी सास आ जाने के कारण बातों का सिलसिला टूट गया। अमृतम् की सास इंदिरा के खानदान के पुरखों को बातें बताने लगी। और फिर कहा—"सुना है बेटा इंदिरा की एक छोटी बहन शादी के लायक हो गयी है उससे तुम क्यों नहीं शादी कर लेते ? जाने किसके भाग में कौन लिखा है।" अपने प्रश्न का आप ही समाधान करके सास भीतर चली गयी कि उसे नींद आ रही है।

अमृतम् ने पूछा—"मुझ में कोई फर्क पा रहे हो।"

"मैं क्या जानूं।" निधि ने कहा।

"तुम बड़े वो हो। क्या इतना भी नहीं बता सकते ? थोड़ी मोटी हो गयी हूं न" कह कर तन पर एक नजर फेर कर वह सुराही से पानी लेने झुकी तो निधि ने देखा चोली के भीतर से भारी स्तन हिल उठे हैं।

"तुम्हारा मतलब शरीर के फर्क से है ?"

"और कैसे बदलूंगी ? तुम तो सचमुच बड़े होशियार हो जीजाजी। बातें खूब करते हो।"

"इतना घबराती क्यों हो। मैं तुमसे जो पूछना चाहता था और जिसके लिए मैं इतनी दूर आया हूं पूछा ही नहीं।

"पूछो। वैसे तुम जरा सी बात को खूब बड़ी बनाकर पूछते हो। पूछ डालो न क्या शंका है ?"

"तो तुम्हारी बिटिया—।" वाक्य को पूरा करने का अवसर नहीं मिला। कांताराव लौट आया था। कुछ देर हीरों की और इधर उधर की बातें होती रहीं। "नींद आ रही है।" कह कर बड़ी ही अदा से अमृतम् ने अंगड़ाई ली।

"जाकर सो रहो न" कांताराव ने कहा।

"जीजाजी को तुम भी मत सताओ देखो तो उनकी आंखों में नीद भर आयी है। पंद्रह मिनट बाद कांताराव और अमृतम् सोने चल दिये। भीतर सांकल चढ़ गयी। निधि बिस्तर बिछाकर लेट गया।

"कुछ चाहिए जीजा जी ?" अमृतम् ने दरवाज़ा खोलकर फिर पूछा।

"कुछ नहीं।"

"कुछ ज़रूरत हो तो उठाना।" दरवाजे पर कुछ क्षण खड़ी रही अमृतम्। और फिर धीरे से फुसफुसाई। "क्या जानना चाहते थे पूछो न।" इतने में कांताराव बाहर आ गया। "कमबख्त नींद ही नहीं आ रही एक चुरुट और न फूंक लूं तो चैन नहीं पड़ रही।"

"तो फिर तुम उसे खत्म करके आना। दरवाज़ा लगाना मत भूलना, मैं सोती हूं जाकर।" अमृतम् चली गयी।

"निधि को भी नींद नहीं आयी। घड़ी खराब हो गयी थी शायद। उसने छह घंटे बजाये। निधि को विश्वास था कि अमृतम् रात को बाहर आयेगी। घंटे दो घंटे बीते उसे नींद नहीं लगी। अचानक उसकी आखें दरवाजे पर जा लगीं। अमृतम् को उसके पति की बाहों में कल्पना करके उसे तकलीफ हुई। उसे तकलीफ क्यों होती है ? जब तक दूर था ऐसी बातें कितनी भी दिमाग में आयें पर तकलीफ नहीं होती थी, पास रहने पर ही तकलीफ होती है। उससे ठीक छह गज दूर भीतर अमृतम् ने अपना भारी सौंदर्य भरा शरीर पति के हाथों में सौंप दिया होगा। उसके अस्तित्व से क्या कोमली को ज़रा भी तकलीफ नहीं हो रही होगी ? स्त्रियों का स्वभाव बड़ा विचित्र होता है। उनमें व्यक्तित्व नाम की चीज शायद नहीं होती। मन के भीतर की व्यथाओं और गड़बड़ को बाहर प्रकट नहीं करती या फिर ये सारी बातें पुरुष की विशेष जड़ता की परिचायक हैं ? उनमें शायद व्यक्तित्व नहीं होता होगा। न ही वे सोचती होंगी कि "यह मेरी अपनी विशेष वस्तु है इसे फलां को ही सौंपूंगी। कोई एक उसे चाहकर उसके लिए खोजता चला आये तो बस दे देती हैं। उसी में तृप्त हो जाती हैं— जाने यह ऐमी बेतुकी बातें क्यों सोच रहा है—इन बातों के क्या सबूत हैं ? कोमली उसकी सोची हुई सारी बातों को झूठा साबित करती है। स्त्री का व्यक्तित्व न होता तो कोमली में कैसे रहती बात।"

निधि को लगा कि दरवाज़ा खुल गया है। पड़ोस से आवाज आई थी। मुर्गा

बांग दे रहा था। निधि ने थकावट से आंखें मूंद लीं। सुबह हो गयी लोग इधर उधर घूमने लगे। नौकरों को आना—नौकरानी का देहरी लीप कर रंगोली रखना। बूढ़ी सास की खांसी—अमृतम् का उठना सारी बातें होती गयी।

"जीजा जी, रात को नींद आयी कि नहीं ?"

"ऊंहुं बिलकुल नहीं आयी।"

"नयी जगह है न, इसलिए नहीं आयी होगी नींद।" निधि को उस रात थक कर सोयी अमृतम् याद आयी। उसे हंसी आ गयी। इंसान के सोचने और करने में कोई ताल-मेल नहीं है।

निधि ने उठकर मुंह धोया और काफी पी। स्नान करके लौटने के लिए बिस्तर बांधने लगा। कांताराव ने कहा कि वह हाट जा रहा है, चाहे तो गाड़ी में स्टेशन उतार देगा।

"कम से कम चार दिन तो रहो। नहीं ठहरोगे तो हम भी तुम्हारे यहां नहीं जायेंगे।" अमृतम् तुनक कर बोली।

"इस बार आऊंगा तो ज़रूर रहूंगा।"

"अब बार बार क्यों आने लगे। अब की बार तो रास्ता भूल गये थे।"

"तुम दोनों मेरे साथ चलो न ?"

"पतझर हो जाये तो कटाई भी पूरी हो जायेगी। तब जरूर आऊंगा।" कांताराव बोला।

"चलो सुबह की रोशनी में एक बार बिटिया को देख आओ।" निधि को लेकर अमृतम् भीतर गयी। कांताराव भी पीछे हो लिया।

"अजी सुनते हो। मैं तो कहती हूं कि बिटिया रानी बिलकुल जीजाजी जैसी लगती है, जीजाजी मानते ही नहीं।" अमृतम् ने कहा तो कांताराव फीकी सी हंसी हंस दिया। निधि ने बच्ची को एकटक देखा पर निर्णय न कर पाया कि चेहरा किससे मिलता जुलता है। अमृतम् तो उसमें दिख ही रही थी। शेष आधा कांताराव है या वह स्वयं पता नहीं चल रहा था। पांच साल तक चेहरे स्थिर नहीं रहते।

बैलगाड़ी आ गयी। कांताराव और निधि जा बैठे। अमृतम् पीली रेशमी साड़ी पर काली चोली पहने माथे पर सिंदूर लगाये देहली पर खड़ी थी। छूटते निश्वास से उसके हिलते उरोज बैठते जा रहे थे। अमृमम् एक पूर्ण

आकृति में ढली हंसती खड़ी थी। सास इतने में बच्ची को लेकर उसका हाथ पकड़कर गुड मार्निंग कहलाने लगी।

कांताराव ने बात संभाली कि "गुड मार्निंग नहीं बाय बाय कहा जाता है।"

'कुछ भी कह डालो जीजाजी को गुस्सा नहीं आता। आप ही दूसरों की हर बात में टांग अड़ाते हैं" जग्गू की तरह अमृतम् ने डांट लगायी।

"जग्गू नहीं जगन्नाथम् कहना होग।" निधि की बात पर सब हंस दिये।

"गुड बाई चाइल्ड ऑफ क्रियेशन" कहकर निधि ने हाथ हिलाया।

"अरे भोली बिटिया के साथ अंग्रेजी बातें कर रहे हो। उसे अपने साथ ले जाकर अंग्रेजी पढ़ा दो न।"

"हां अब बस करो। भूत जैसी लग रही है भीतर ले जाओ उसे"—कांताराव चिढ़कर बोला।

"मेरी मेम सी बिटिया को भूत कहोगे तो मैं चुप नहीं रहूंगी। जीजाजी, ज़रा इन्हें समझाओ।" गाड़ी रवाना हुई। "चिट्ठी देते रहना।" बेटी का हाथ पकड़कर हिलाती रही अमृतम्। "पता इनसे पूछकर लिख लो।" फिर बातें नहीं सुनायी दीं। पानी की गगरियां दबाये बस्ती की औरतें अमृतम् को बड़े आश्चर्य से देखती जा रही थीं। यही अंतिम दृश्य था। गाड़ी नुक्कड़ पर मुड़ गयी।

आखिर जो बचा

निधि को घर पहुंचते पहुंचते शाम के छह बज गये। खबर पाकर पच्चीस के करीब मजदूरों ने आकर उसे घेर लिया और बताया कि हड़ताल करके दो दिन से मजदूरों ने काम बंद कर दिया है। और पिछले दिन एक आम सभा हुई थी। जिसमें तय किया गया था कि सरकार जिले से आकर बसे लोग यहां उनके इलाके में तरह तरह के अत्याचार कर रहे हैं। अतः उन्हें किसी प्रकार की सहायता न दी जाय। इसी के परिणाम स्वरूप मजदूरों ने हड़ताल की थी। कारण कोई नहीं बता पा रहा था। इन्होंने बताया कि अनंताचारी को भी लोगों ने जाति से बाहर निकाल दिया है। कुछ कारण तो स्पष्ट थे। नारय्य रेड्डी के बीच हुए झगड़े, कोमली का डांटना, अनंताचारी द्वारा कोमली का समर्थन, निधि के गत जीवन की कही सुनी बातें—इन्हें लेकर खानों की खुदायी के लिए पूंजी देने वाले कुछ पूंजीपतियों ने लागत से लाभ न होते देखा तो इसे धोखाधड़ी समझकर, इंद्रजाल मानकर पूंजी के लिए गड़बड़ी की। मगर अस्पताल से संबंधित व्यक्ति अब तक मित्रता निबाह रहे थे। क्षीरप्पा पूंजीपति था, खदानों में उसका भी साझा था। बीमारी के कारण वह एक बार निधि के अस्पताल में दाखिल हुआ। निधि का सहायक नागेंदराव इंजेक्शन दे रहा था फिर भी तीन दिन पहले क्षीरप्पा की मृत्यु हो गयी। लोगों ने झूठी खबर उड़ा दी कि उसे जहर देकर मार दिया गया है। शिकायत

थी कि क्षीरप्पा की जब हालत नाजुक थी तो असिस्टेंट को बुलाया गया पर उस समय वह नर्स तायारम्मा के साथ कार में सैर कर रहा था। कोमली ने असि-स्टेंट को डांटा कि समय पर वहां न रहना बहुत बड़ी गलती है सो वह निधि से कहकर उसे निकलवा देगी। असिस्टेंट ने कोमली को डांटा कि नौकरी से निकलवा देने वाली वह कौन होती है ? डांट खाकर कोमली रोती बैठ गयी थी। दूसरे दिन असिस्टेंट ने खुद ही त्यागपत्र लिखकर कोमली के मुंह पर दे मारा। अनंताचारी जब बीच में पड़े तो उन्हें भी चार सुना गया कि उनकी बेटी की अब शादी नहीं होगी। अब वह दुश्मनों के साथ मिल गया था और निधि के खिलाफ प्रचार कर रहा था। ये सारी बातें एक हफ्ते निधि के बाहर रहने के बीच घटीं।

नारय्या के घाव भर गये थे। पर अभी कमजोरी बाकी थी। उसे देखकर निधि ने जाना कि अब उसकी अंतिम घड़ियां पास आ गयी हैं मजदूर घर चले गये थे। निधि स्नान करके बरामदे में आया। नारय्या के पास कात्यायनी और रंगय्या बैठे थे। निधि ने पूछा--"कैसे हो नारय्या ?"

"चार दिन में ठीक हो जाऊंगा छोटे बाबू। मुझे तो जेल जैसा लग रहा है। जब तक उठकर इन लोगों की मरम्मत नहीं करूंगा मुझे चैन नहीं आयेगी।"

"कहो अभी तुम्हारा जोर कम नहीं हुआ ?"

"उस रेड्डी को खतम कर दूं तब कहना। जाने क्या समझ रखा है उसने ?"

"नहीं नारय्या, ऐसा मत कहो। तुम बड़े हो तुम्हें सब्र करना चाहिये। अच्छी बातों से उन्हें रास्ते पर लाना चाहिये न कि उनसे बैर निकालना।

"ये नीति की बातें जानवरों पर काम नहीं करतीं। इस बिटिया से बैर साध रहे हैं वे कमबख्त।" कहकर नारय्या कात्यायनी को देखर पोपली हंसी हंस दिया।

"अच्छा सो जाओ।"

कात्यायनी ने बताया कि अनंताचारी भी गांव से लौट आये हैं। निधि ने बताया कि वह खाना खाकर रात को आयेगा। कात्यायनी के चेहरे पर का भोलापन उदासी में बदल गया। वह चली गयी। वह दुबली हो गयी थी। उसके भीतर मथ रहे दुख को कोई जान नहीं पाता था। निधि छत पर गया

तो कोमली उछलती गाती हुई आयी। हवा में छितरे इमली के पत्तों की तरह बाल बिखरे थे। वर्षा रुक जाने के बाद रिस रहे बूंद की भाति नहायी हुई गीली साड़ी अपने शरीर से चिपका ली थी। पानी की बूंदें बालो से रिस रहीं थीं। सृष्टि का रहस्य पा लेने वाले शोधार्थी की भांति उसकी आंखों में चमक था। इस आनंद को ओंठ छुपा न पाये। निधि ने पूछा—"क्या बात है बड़ी उमंग में दिखती हो?"

"कारण? बताऊं? यह कह कर उसने निधि के ललाट को चूम लिया।"

"हम दोनों ने जो निश्चय किये थे वह एक हफ्ते में भूल गयी?"

"नहीं उसे तो मैंने अपने दिल में सहेज कर रखा है।" कहती हुई निधि के हाथों को ले जाकर अपनी छाती पर रख लिया—"हमेशा उदास कोई कहां तक रहे? कभी कभी तो उमंग चढ़ती ही है।" कह कर उसे अपनी बाहों में भरकर उसके चेहरे को छाती में दबा लिया।

"एक दूसरे को देखकर घृणा करने के लिए ही ये शरीर उपयोगी बनते हैं। इसे घृणा रहित बनाने की ताकत सृष्टि में एक ही चीज में है, वह है मृत्यु। मृत्यु ही गृहस्थ जीवन, सामाजिक जीवन, प्रांतीयता, जातीयता तथा राष्ट्रीयता आदि क्षण भर में छूमंतर कर उसे उड़ा लेती है। शक्ति क्षीण हो जाने पर शरीर इतना गंदा हो जाता है कि उसे देखकर उबकाई आने लगती है। मन और आत्मा एक होकर, दुनिया एक हो जाने का सपना देखने वालों को शरीर की ममता छोड़कर दूर निर्लिप्त और एकाकी रहते होंगे।

"आनंदरहित यह एकाकीपन क्या साध पायेगा? मैं पूछती हूं ऐसे एक होने की अपेक्षा ही क्यों हो। अगर तुम्हारी बातें ही सच हों तो फिर स्त्री पुरुष का अंतर क्यों और किसलिए? सब गलत है—भ्रम है।" कहती हुई कोमली ने निधि के घुटनों पर गुस्से से मुक्का मारा। कोमली के शरीर में शीतल ज्वाला जल रही थी जिसमें वह निधि को झोंक देना चाहती थी। सौंदर्य की ज्वाला निधि को घेर रही थी। तर्क, ज्ञान, वादविवाद सोच विचार कुछ भी उस ज्वाला का उपशमन नहीं कर सकता था। निधि ने कोमली के बाल उठाकर उसके चेहरे को उठाकर उसकी आंखों में झोका। सूर्यास्त के समय पश्चिमी आकाश में बादलों की भांति वह लाल हो उठा था। आंखों के नीचे की झाईयां अंधेरे के कालेपन कों फैलाती दिख रही थी। पानी से बाहर फेंकी

गयी मछली की भांति ओंठ तड़प रहे थे।

"मैं जानती हूं तुम किसी और से प्यार करते हो।"

"वह तुम्हारे प्यार में बाधक तो नहीं। चांद हमारा शत्रु है फिर भी हम उसकी प्रशंसा से थकते नहीं।"

'अमृतम् को ....।"

निधि को हंसी आ गयी। "कोई और ?" पूछने ही वाला था कि इतने में कात्यायनी आ गयी।

"और और – कात्यायनी —।"

निधि ने कोमली को कस कर एक थप्पड़ लगाया और उसे झटक कर खड़ा हो गया। कात्यायनी ने किवाड़ खोला तो दोनों को उसमें पाकर धीरे से किवाड़ लगाकर चलती बनी। निधि सीढ़ियों से उतर कर उसके पास गया। कात्यायनी ने बताया कि नारय्या की कराहें बढ़ गयी हैं उसके पिता भी आ गये हैं। दोनों नारय्या के पास पहुंचे।

नारय्या को जोरों का बुखार चढ़ गया था। निधि ने उसे इंजेक्शन दिया। नारय्या बोल नहीं पा रहा था। अनंताचारी ने निधि को अलग ले जाकर उसकी अनुपस्थिति में घटी बातों का ब्यौरा कह सुनाया और सरकार जिले-वासियों के प्रति उस क्षेत्र के लोगों में बसे बैर भाव को दूर करने का उपाय सोचने को कहा। दोनों ने मिलकर एक सभा का आयोजन कर उस क्षेत्र के निवासियों को मन की बातें प्रकट करने का अवसर देने की योजना बनायी। निधि की समझ में नहीं आ रहा था कि उसकी किस गलती के कारण वहां के लोग नाराज हो उठे हैं। अनंताचारी भी कारण को खोज निकालने में अपने को असमर्थ पा रहे थे। आचारी ने निधि को एक पत्र पकड़ाया निधि ने उसे लेकर पढ़ना शुरू किया।

'ऐसी हालत में कात्यायनी के लिए आप दूसरा वर खोज लीजिये। शायद आपको ढूंढने की भी आवश्यकता नहीं क्योंकि आपके प्रियजन इस संबंध में आपकी सहायता करने को तत्पर हैं ही। अब तक आपको जो कष्ट हमने दिया उसके लिये क्षमा चाहता हूं।"

चिट्ठी पब्लिक प्रासीक्यूटर प्रभंजनराय की लिखी थी। इनके सुपुत्र से कात्यायनी का रिश्ता तय हुआ था।

निधि ने कहा "ऐसी हालत में तो अच्छा है कि मैं यहां से चला जाऊं।"

"वस्तु स्थिति को न समझने वाले कई बातें कहते हैं, सो इससे हमें अपना कर्तव्य नहीं भूलना चाहिये। इनकी बातों से घबराते रहे तो जिंदा रहना मुश्किल हो जायेगा। तुम कहीं नहीं जाओगे, समझे।" अनंताचारी ने निधि को आदेश दिया।

"आप मेरे साथ दोस्ती बरत कर मेरा गौरव करते हैं, इसीलिए मेरे लिए इनके मन में जो नफरत है, उसे आप पर थोप रहे हैं। मैं नहीं चाहता कि मेरी वजह से आपको कोई तकलीफ हो।" इतने में कोमली कंधे पर तौलिया डालकर उसके सामने से निकल गयी। अनंताचारी ने फिर कहा—"वैसे तो तुम विद्वान हो मैं तुम्हें सलाह देने योग्य नही हूं, फिर भी उम्र में तुमसे बड़ा हूं सो एक बात कहूंगा।"

"जरूर मुझ पर तो आपको पूरा हक है।"

"तुम्हारी अभी उम्र नहीं बीती है। तुम्हें अभी बहुत से बड़े काम करने हैं इसलिए तुम्हें विवाह कर लेना चाहिये।" निधि को आचारी की बात से डर लगने लगा कि कहीं कात्यायनी के साथ रिश्ता न जोड़ दें। बोला—"न तो मुझे इसकी जरूरत ही महसूस हुई और न करने का ही मेरा उद्देश्य है।"

"बिना विवाह के मिलकर रहना दुनिया सह नहीं पाती।" निधि जानता था कि आचारी का लक्ष्य कोमली है। अपनी बात कहकर आचारी नारय्या को देखने चले गये। निधि मां की मूर्ति के सामने जा खड़ा हुआ। मूर्ति का दाहिना हाथ टूट गया था। चेहरे के बीच से एक दरार नीचे तक फैल गयी थी। निधि को लगा कि किसी ने उसके प्राण केंद्र पर लक्ष्य करके मारा है। निधि सोचने लगा—"किसने किया होगा ?"

फाटक पार कर बाहर गली में पहुंचा। कोमली दूर चली जा रही थी। शायद नाराज हो गयी हो। कहीं कुछ कर न ले। उसी ओर पैर उठने लगे। आकाश स्वच्छ हो उठा था। चांद और तारे कुछ भी नहीं थे। धरती फूलों की चादर ओढ़े थी। मंद गति से पवन डोल रहा था। पेड़ पौधे पहाड़ियां पार कर गया। एकांत में बाधा न देने के लिए ताड़ के वृक्ष पहरे पर तैनात थे। कोमली अब उससे एक फर्लांग दूर थी। उसने कोमली को आवाज दी। जल्दी जल्दी कदम बढ़ाकर उसके पास पहुंचा। नदी में पत्थरों को लुढ़काकर कोमली

गिर पड़ी। पास निधि भी बैठ गया। उसके कंधे का तौलिया गोदी में डालकर उस पर अपना सिर रख फफक फफक कर रोने लगी। खून की बूंदें तौलिये से चिपक गयी।

"क्यों आये हो मेरे लिए चले जाओ, मैं नहीं आती वापस।"

"इश्श—चुप हो जाओ। तारे घबराने लगेंगे। तुम्हें अब कभी नहीं मारूंगा। मुझे माफ कर दो।"

"लेकिन मैं मारूंगी।" कहकर कोमली ने निधि को एक हल्की सी चपत मारी।

"मानिनि का मन तो शांत हुआ न। कई विषयों की चिंता से मन खराब हो जाता है तो उसके कारण क्रोध इस प्रकार प्रकट हो जाता है।" निधि बोला।

"मुझे भी माफ कर दो। जानकर भी कि सब झूठी बातें हैं, मैंने तुम्हारा दिल दुखाया।"

"हम दोनों में माफी वाफी कुछ नहीं। कोमली अब हम एक दूसरे में मिल नहीं सकते। पर समाज भी चाहे लाख कोशिश करे हम दोनों को अलग नहीं कर सकता।"

कोमली ने आंखें फैलाकर मुंह को गोल बनाकर उसके बालों में उंगलियां फेरने लगी। झुका कर उसकी गर्दन पर अपने कपोल रख लिए। उफन कर पत्थर पर गिरी लहर जैसी उठी छोटी फुहार की भांति उसका तन बिखर गया। संपूर्ण स्त्री प्राणवान होकर मृत्यु को खोजने लगी। बोली—"बस मुझे यों अपनी गोद में सो जाने दो, मैं कुछ भी नहीं करूंगी, धीरज रखो।

निधि को उसके दिल की धड़कन सुनाई दे रही थी। तारे चमचमा रहे थे। ताड़ के वृक्ष जग गये थे। झींगुर संगीत सुनाने लगे। प्रकृति सपने से उठी। उसने वास्तविकता के भय से फिर आंखें मूंद लीं।

कोमली और निधि उस सुखद अनुभव में से ऊंचे मानसिक स्तर पर जा पहुंचे थे। जीवन से संबंध तोड़कर एकांत में वह प्रौढ़ता को पा गयी थी। बोली—"देखो न मैंने तुम्हें कुछ भी नहीं दिया। क्या मैं इतना भी नहीं समझती।"

"अब हम दोनों को इस स्थिति में कोई देखेगा तो क्या यह मानेगा कि हम

दोनों के बीच शारीरिक संबंध नहीं रहा ।''

''नहीं बिलकुल विश्वास नहीं करेंगे। तभी तो मुझे लगता है, क्यों न हो शारीरिक संबंध ?''

''ऐसा करके हम भूल करेंगे । सच्चे प्यार में मनुष्य द्वारा निर्मित सीमायें नहीं होतीं । अगर हों तो वह प्यार नहीं कहलायेगा ।''

''तो तुम सचमुच मुझे प्यार करते हो । मुझसे तुमने इतने दिनों तक क्यों छिपाया ? कह देते तो मैं तुम्हारा सिर न खाती ।''

''मैंने अपने आपको टटोलकर देखा, परखा, व्याख्या की तो मुझे मिला कि मैं सिर्फ तुम्हीं को प्यार करता हूं ।''

दोनों कुछ देर मौन रहे जैसे दो लहरें टकरा कर भंवर में जा मिली हों। दोनों एक-दूसरे की आंखों में देखते हंसते रहे। बस यही उनका प्यार था।

दोनों उठ खड़े हुए । चलने लगे । वह चाल समय के छोर को पा लेने के लिए थी । स्थान के अंतिम छोर तक थी । लक्ष्यहीन खोज थी। पड़ाव और लक्ष्यहीन अनंत यात्रा थी, सहयात्री थे दोनों। सब कुछ भ्रम था बस्ती तक पहुंचे निशीथ गाढ़ा हो चला था। वह अपने आपको देखकर डर गया और तारों को उसने नीचे उतार लिया । ताड़ के वृक्षों के झुरमुट में दोनों खड़े हो गये । कोमली ने वृक्ष का सहारा लेकर निधि की कमर को अपनी बाहों से बांध लिया ।

''थक गयी हो ।''

''ऊंहु डर हो रहा है कि घर पास आ गया है ।'' कहकर फीकी सी हंसी हंस दी । इतने में कोई आवाज़ आयी । निधि ने घूमकर देखा । एक छुरा उसकी कनपटी के पास से सनसनाता हुआ ताड़ के तने पर जाकर लग गया । निधि ने चारों ओर देखा । पेड़ों की झुरमुट के अलावा कुछ न था । छुरे को निकाल कर उसे उलट पुलट कर देखा। वह एक लंबा सा चाकू था जिसकी मूठ पर ''स'' अक्षर बना था । वह जान गया कि चाकू किसका है ।

''यह क्या ?'' कोमली ने चाकू लेकर देखा ।

''किस मुए की करतूत है ?''

''कोई बेचारा हमारा भला चाहने वाला हमें सावधान कर रहा है ।'' निधि ने कहा ।

"उसे तो पकड़वाना होगा। अब चुप बैठना ठीक नहीं।" कोमली बोली।

"मनुष्य संस्थायें और देश सभी से टकराया जा सकता है पर अकारण द्वेष को कोई नहीं रोक सकता।" निधि कहकर चलने को उद्यत हुआ। कुछ दूर जाकर बोला—"तुमने डाक्टर को नौकरी से हटवा दिया है न ?"

"हां, रोगी बिना दवाई के मर रहा था तो डाक्टर साहब नर्स के साथ रंग-रेलियां मना रहे थे।"

"उधर नारय्या दम तोड़ रहा है, हम भी तो इधर आकर मौज कर रहे हैं। बस ऐसे ही उसे क्यों नहीं समझा था तुमने ?"

"तुम इतने भले हो तभी वे लोग सिर चढ़ बैठे हैं।"

"सौ फीसदी अच्छाई कहीं भी नहीं होती। हां, किसी दूसरे की तुलना में ज़रा ज्यादा अच्छा होना कह सकते हैं।"

चलते चलते खदानों तक पहुंचे वहां पर खुदे हुए स्थान पत्थर और मट्टी से पटे हुए थे। "यह क्या ? किसने किया यह काम ?" कोमली ने पूछा।

"प्रेम ने इसे छह महीने में खुदवाया तो द्वेष ने छह घंटों में इसे पाटकर रख दिया। निधि को सूझा नहीं कि इस हालत पर रोये या हंसे। मनुष्य में द्वेष, क्रूरता, पशुता की पराकाष्ठा वह आज अपनी आंखों से देख रहा था। खुद भी तो उसी मनुष्य जाति का अंग था। वह अपने आप से कैसे प्यार करे ? जो अपनों से प्यार नहीं कर पाता उसे दूसरों से भी प्यार करने का अधिकार नहीं है।"

घर पहुंचा। मां की मूर्ति की दरार स्पष्ट दिख रही थी। उसने अनुमान लगाया कि अब तक सिर भी टूट चुका होगा। पर ऐसा नहीं हुआ। दो बज चुके थे। चबूतरे को अंगौछे से झाड़कर लेट गया। भीतर से नारय्या का कराहना सुनायी पड़ रहा था। दूर नीचे नौकर चारपायी पर लेटा था। दिया अंतिम बार छटपटाकर बुझ गया। कोमली निधि के पास दीवार से लगकर लुढ़क गयी। दोनों अपने अपने एकाकी भवनों में बंदी बने एक दूसरे को नींद में देखकर अपने अलगाव पर सिसक रहे थे।

वही सूरज निकला। उन्हीं किरणों ने उनकी आंखों में माधुर्य भर कर उत्तेजित करके जगाया था। आसपास लोगों की भीड़ लगी थी। रात की घटी दुर्घटना के कारण और कारणों की छान-बीन कर रहे थे। निदारोपण

कर रहे थे। मैजिस्ट्रेट भी आये। मैजिस्ट्रेट का आगमन इस कारण से हुआ था कि उनके पास कई हवाई चिट्ठियां आयी थीं जिनमें लिखा गया था कि खानों की खुदाई का बहाना करके सरकारी जिलावासी एक व्यक्ति लोगों को लूट रहा है। अत्याचार कर रहा है। आज वे इस बात की छानबीन करने आ पहुंचे थे। उन्होंने योजना की रूप-रेखा देखी। विशेषज्ञों, इंजीनियरों से बातचीत की। खुदी हुई खाने पाट दी गयी थीं। फरियाद, सबूत, जिरह आदि को समाप्त कर सरकार को भेजने के लिए जांच रिपोर्ट तैयार करते-करते मैजिस्ट्रेट को दोपहर के दो बज गये। उन्होंने रिपोर्ट में लिखा कि निधि का कार्य न्यायोचित है। शिकायतें करने वालों को दोषी ठहराया।

समाचार वजकरूर में हवा की तरह फैल गया। वहां पर एक बड़ी सभा बुलाई गयी। जिसमें सर्वसम्मति से निर्णय किया गया कि मैजिस्ट्रेट अनंताचारी के दोस्त हैं, अतः उन्होंने जांच के काम के लिए रिश्वत खाकर गलत रिपोर्ट भेज दी है। सर्वसम्मति के निर्णय से सरकार को लिख भेजना भी इसी सभा में तय किया गया।

सभा विसर्जित हुई। लोगों की भीड़ कम हुई। अंधेरा हो चला था। निधि दूर बैठे सरय्या के पास गया और चाकू देकर बोला—"देखिये कहीं यह आपका तो नहीं है, शायद आपके किसी नौकर ने ले आकर खानों के पास फेंक दिया था।"

सरय्या ने उसे जांचकर कहा—"हां मेरा ही चाकू है। मेरा भाई भूल से उधर ले आया होगा।"

निधि चाकू लौटाकर अनंताचारी के पास गया। अनंताचारी ने कहा—"आज सब यहीं मेरे घर रह जाओ।" निधि मान गया। कात्यायनी को भेज कर कोमली को बुलवा लिया।

अनंताचारी बाहर खटिया डालकर बैठे थे। सरय्या दो पुलिस वालों को लेकर आ खड़ा हुआ। फौरन आचारी को लिवा लाने के लिए मैजिस्ट्रेट के पास से संदेशा आया था। आचारी ने कहा कि सुबह तक आयेंगे।

"अभी बुला भेजा है।" पुलिस ने कहा।

अनंताचारी ने कपड़े पहन कर सुबह वापस आने को कहा और कार में जा बैठे।

निधि को कुछ सूझा नहीं। वह चलने लगा। पुलिया तक पहुंचा तो कुछ

लोगों की आवाजे सुन पड़ीं ।

"निर्जलिंगप्पा की उससे आंख लड़ गयी है । उसे कभी भगा ले जायेगा ।"

"सुना है कि वह निधि बाबू की ब्याहता नहीं है ।"

"उनकी महतारी का भी यही हाल था । महतारी का कमाया पैसा पूत खर्च रहा है ।"

"महतारी की अकल पायी है पूत ने भी ।"

"निधि को उस अंधेरे के रुदन में दुनिया श्मशान सी लगी । वहां से लौट आना चाहता था । पर आगे की बातें सुनने को मन ललचा गया । स्वार्थ दुनियां से अपना रिश्ता नहीं छोड़ पाता है । फिर से एक और स्वर सुन पड़ा ।

"अरे सरकार ज़िले वाले सभी ऐसे होते हैं । उन्हें औरत के साथ रंगरेलियां ही करनी आती है । औरत और पैसा बस यही उनके लिए सब कुछ है । वह हमारा जब तक पिंड नहीं छोड़ेंगे हमारे दिन भी नहीं फिरेंगे । मीटिंग में भी तय हो गया है ।"

निधि का स्वार्थ उसे उनके भीतर तक खदेड़ रहा था । उसका अपना गौरव उसकी अपनी आत्मा का आदर्श, कुल और उसका प्रांत अपनी दुनिया सबने मिलकर एकबारगी एक शक्ति का रूप धर लिया और उसे मंच पर ला पटका । भय, लाज—संकोच सब छू मंतर हो गयी ।

"क्या मेहरबानी करके आप लोग बतायेंगे कि मैंने आप लोगों को क्या हानि पहुंचायी है ?" निधि ने पूछा ।

लोगों को काठ मार गया । उनमें से एक आदमी ने कहा—"आपके बारे में कौन कह रहा था, हम तो किसी दूसरे के बारे में कह रहे थे ।"

"आप की सभी बातें मुझपर लागू होती हैं, मैं उन्हें झूठ साबित नहीं कर सकता । पर आपसे प्रार्थना करता हूं कि मेरी गलती मुझे बता दें, इसे मैं आपका उपकार मानूंगा ।"

सब चुप रहे । कोई नहीं बोला ।

"तुम्हें गुस्सा इस बात पर है कि मैं सरकार जिलों का वासी हूं ।"

"..................."

"बोलते क्यों नहीं ?"

किसी ने खंखारा ।

"अगर यही बात है तो मैं कल ही सुबह यहां से चला जाऊंगा।"

"सब चुप रहे।"

"अगर तुम कहते हो कि मेरी शादी नहीं हुई, तो कल सुबह शादी कर लूंगा।"

कोई हंसा।

"हंसी मत उड़ाओ। मैं तुम में से किसी को भी नहीं जानता। अपने जैसे बहुतों के मन में उठे विचारों को तुमने व्यक्त किया। मैं तुम्हारे बीच में रह रहा हूं, इस लिए तुम लोगों के साथ संधि करना मेरा कर्तव्य है। तुम जो चाहोगे, वही मैं करूंगा। अस्पताल, खानें, अपना बंगला, स्कूल पुस्तकालय सभी कुछ तुम लोगों को सौंप दूंगा।"

एक के मुंह से भी बात नहीं निकली।

"तुम में से किसी ने मेरी मां का ज़िक्र किया। उसके लिए मैं क्या करूं। मेरी मां मर गयी। मरे हुए को तो मैं जिला नहीं सकता।" कहते कहते निधि की आखें भर आयीं। गला भर्रा गया। दुख को रोकने में असमर्थ हो निधि खुलकर रो दिया—"मर गयी वह, मैं क्या करूं।" कहता हुआ वह पागलों की तरह लौट आया। दूर किसी ने नाक साफ़ करके निश्वास छोड़ा।

आचारी के घर में दीया धुंधला गया था। अंधेरा फैल गया था। अब निधि को रोना नहीं आया। आसूं सूख गये। श्मशान में भूतों के साथ बातचीत कर आने के बाद उसमें से डर भाग गया। समुद्र ने भार को लील कर मुंह पर बौछारें ोड़ दी थीं। भार ने समुद्र का सारा खारापन सोख लिया था अब आसूं खारे नहीं होंगे।

रंगय्या ने आकर कहा—"बूझिये तो अम्मा ने क्या कहला भेजा है?"

"क्या कहलाया है?"

"बता दूं तो क्या दोगे?"

"मान लो आज मैं मर जाता हूं। मेरे मरने तक तुम क्या चाहोगे। मांग लो।"

"बस एक रुपया।"

"बस। अच्छा तो ठहर। अभी देता हूं। पर देखो कभी किसी बात पर रोना नहीं अच्छा।"

रंगय्या रुपया लेकर कूदने लगा।

"अम्मा मर जाय तो भी मत रोना।"

इतने में कोमली आ गयी। उस रात उसने काली साड़ी पहनी। चोली का रंग समझ में नहीं आ रहा था। गुलाब, जूही आदि के फूल जूड़े में खोंसे हुए थे। लगती थी जैसे कोई महारानी ससुराल जा रही है।

"देर हो गयी। रात चढ़ आयी। अब तक तुम कहां घूम रहे थे?"

"नारय्या की हालत कैसी है?"

"कराहना बंद कर दिया है। तुम्हारी बातें सुलझीं कि नहीं?"

निधि ने उत्तर नहीं दिया। सब ने खाना खाया। राजम्मा का चेहरा उदास था। खाना खाते वक्त किसी ने भी बात नहीं की। निधि तौलिया कंधे पर डाल, सड़क पर निकल आया। वहां से उसने कोमली को बुलाया और साथ आने को कहा।

कोमली ने पूछा—"मुझ पर आज इतनी कृपा कैसी?"

"मुझे आज तक इंसानों से, समाज से डर लगता था। आज से वह डर भी खत्म हो गया।"

"मेरे रहते तुम्हें किस बात का डर?" कोमली ने निधि का हाथ पकड़ा और पूछने लगी—"बताओगे नहीं क्या हुआ?"

"आज मैंने श्मशान में ज्योति देखी है।"

"कैसी बातें करते हो—मुझे डर लग रहा है।"

"विश्वास करोगी मैंने खोज लिया है कि मनुष्य के हृदय में घृणा क्यों उठती है?"

"बता दो कारण भी।"

"जब वह खुद नहीं जानता कि उसे क्या चाहिए तो उसके मन में दूसरे के प्रति द्वेष होने लगता है।"

"मतलब मैं नहीं समझी।"

"अगर वह जान ले कि उसे क्या चाहिए तो उस वस्तु को प्यार कर उसे पाने की कोशिश करता है। चाह ही अगर मालूम न हो, हृदय में केवल द्वेष ही बचा रहता है।"

"मैं जानती हूं कि मुझे क्या चाहिए और तुम्हें जो चीज चाहिए वह भी

मैं जानती हूं। सदेह के लिए हमारे बीच कोई स्थान नहीं है।'' कहती हुई कोमली ने उसे पकड़कर झकझोरा और अपने ओंठ उसके ओठों से लगा दिये। उस दिन की छोटी छोटी मछलियां बढ़कर आज सरोवर में तैरने लगी थीं। एक विचित्र सौगंध ने निधि को बांध लिया।

''अब और न उतरो। डूब जायेंगे।'' निधि हंसकर बोला।

''तो फिर जाओ वापस अपनी जगह निधि को उसने धक्का दे दिया। निधि रेत में जा गिरा। कोमली का हाथ पकड़ कर वह उठने को हुआ। कोमली उसे गुदगुदा कर छुड़वा कर भाग गयी। निधि ने खदेड़ते हुए उसका पीछा किया।

''मुझे पकड़ नहीं पाओगे।''

दोनों भागते हुए दूर पहुंचे। सब सो रहे थे। घड़ी ने ग्यारह बजाये। उस दिन दोनों को जल्दी नींद भी आ गयी। घर में किसी के कुछ संभालने, ढूंढने-किवाड़ लगाने की आवाजें आ रही थीं—फिर एक निस्तब्धता छा गयी। निधि को विचित्र सपना दिखा—वह सूर्य के भीतर समाता जा रहा है—सूरज के गोले से बड़ी बड़ी लपटें उसे लील रही हैं। इस दृश्य को देखकर पृथ्वी पर लोग उसके लिए सहानुभूति प्रकट कर रहे हैं। उठकर उसने एक और झांक कर देखा। कोमली के जूड़े में फूल लाल लपटों की भांति उठ रहे थे। वह आंखें खोलकर देखने लगा। वह स्वप्न नहीं यथार्थ था। कोई रो रहा था—बच्चों का रोना—लपटें—आवाजें —शोर— अनंताचारी का घर धू धू कर जल रहा था।

घर झोपड़ी सब कुछ स्वाहा हो गये। लोग भीतर जा जाकर सामान बाहर फेंक रहे थे। कोमली उसके भीतर बिजली की रेखा सी प्रवेश कर गयी आस-पास के लोग जमा होकर पानी डाल रहे थे। गाय-बछड़े रंभा रहे थे। निधि भी भीतर चला गया और सामान बाहर फेंकने लगा। बच्चों को बाहर निकाला गया। वह पुन: कोमली के लिए भीतर गया। अग्नि की ज्वालायें कोमली बनकर उसे घेरने लगीं। उसने कोमली को पुकारा तो लपटों में से निधि के लिए आवाज आयी। छत टूटकर गिरा। किसी ने उसे बाहर खींचा, लकड़ी का खंभा जलकर नीचे गिरा। उसके नीचे जलती हुई साड़ी और कोमली के हाथ दिखे। खंभे को नीचे से खींच कोमली को निकाल कर वह बाहर आया। कोमली के चेहरे और बाहों पर चोट लगी थी। वह बेहोश हो गयी थी।

निधि लोगों और सामान को अपने घर तक पहुंचाने लगा। कोमली को गाड़ी पर लादकर, दो लोग खींचकर अपने घर की ओर ले गये. आचारी के परिवार के सभी लोग सकुशल निधि के घर पहुंच गये। कोमली को वहीं गाड़ी पर छोड़ निधि आसपास की चीजों को देखने लगा। खुदाई के लिये मंगाये औजार जला दिये गये थे। वज्र के कारण मिली पूरी संपत्ति नष्ट हो गयी थी। जोड़े गये सूत्र टूट चुके थे। सांकलें खुल गयी। अब वह स्वतंत्र था। बिलकुल स्वतंत्र और एकाकी। उसका हृदय फट नहीं रहा था। भारी कदम रखता हुआ वह फाटक तक आया।

कहीं कुछ बच गया पूरा का पूरा नाश नहीं हुआ। सिर उठाकर देखा तो मां की मूर्ति टूटकर गिर गयी थी। पैर बचे थे, अब वह पूर्ण रूप से स्वतंत्र था अब उसे रोने की जरूरत नहीं थी "कि हाय ! यही एकमात्र वस्तु बच गयी है।"

"नारय्या गाली देता हुआ उठने की कोशिश करने लगा। निधि ने उसे लिटाकर उसकी जांच की। कोमली के घावों पर दवा लगायी और उसके सिरहाने तकिया देकर आचारी के घर की ओर गया। घर के सामने सारी चारपाइयां जैसी के तैसी पड़ी हुई थीं। कुछ लोग आग बुझाने की कोशिश कर रहे थे। निधि फिर वापस अपने घर आ गया। नीचे के बरामदे में राजम्मा और बच्चे कुछ ढूंढते हुए बैठे थे। निधि ने सबको सो जाने का आदेश दिया। राजम्मा रोने लगी। निधि ने कहा—आपको इतना सब कुछ मेरे कारण भोगना पड़ा है। राजम्मा ने कुछ उत्तर नहीं दिया। एक घंटा बीत गया। राजम्मा ने तब कहा—"उनके घर में न होने के कारण यह सब कुछ हो गया है।" फिर वह बच्चों को लेकर छत पर चली गयी।

निधि ने एक पत्र लिखा उसे खिड़की में रख दिया, और बाहर गाड़ी के पास आया। कोमली ने क्षीण स्वर में उसे पुकारा। निधि ने उसे गाड़ी से उतारा। बांह पर गहरी चोट लगी थी। उसके हाथ को अपने कंधे पर रखकर निधि कोमली को सहारा देकर वह घर की ओर ले गया।

"कहां ले जा रहे हो अंधेरे में।" कोमली हंसने के लिये छटपटाई।

"लक्ष्य का पता चल जाय तो फिर क्या रह जायगा जानने के लिये। चलो जीवन की यात्रा पर. जिसका कोई निर्दिष्ट स्थान नहीं हैं। चल सकोगी ?"

"हां।" कह कर निधि को कोमली ने कसकर पकड़ा, और जल्दी पग

रखने की कोशिश करने लगी। मकान और झोंपड़ियां पीछे रह गये। ताड़ के वृक्ष अलसाकर उठे। उन्हें जगह देकर पीछे खिसक गये—पहरे देने के लिये कुछ भी तो नहीं था।

उसने पीछे मुड़कर देखा। एक ही फर्लांग चल पाये थे। दूर छत से उतरकर फाटक पार कर कोई उन्हीं की ओर आ रहा था। उस व्यक्ति के पीछे कोई दूसरा भी आया। उसने पहले वाले को रोककर कुछ कहा। और फिर दोनों चल दिये। निधि ने पूरा दृश्य देखा और उन्हें पहचान गया।

पत्थर, पेड़, झाड़झंखाड़, पगडंडी, नदी का किनारा, झाड़ियां सब पार करके वे दोनों पहाड़ी के पास पहुंचे। उसकी संपदा कात्यायनी, सभी कुछ करोड़ हीरे बनकर आकाश में जा चिपके। अंधकार छुप गया था उसमें जाकर तारे चिपक गये थे। पूरी सृष्टि में फैल गये थे। उनमें से एक छोटा सा तारा सृष्टि की तरह विकास पाकर पूरे विश्व में फैल गया। सब कुछ अपना था पर हाथ फैलाने पर कुछ भी नहीं मिलता था। सब कोई अपने थे पर बुलाने पर कोई उत्तर नहीं देता था।

"दो पहाड़ियों के बीच से चलकर दूसरे छोर जा पहुंचे। चलते रहना छोरहीन—अंतहीन किनारे तक चलते ही रहना फिर वहीं पहुंचना क्या यही है, विशाल दुनिया, क्या यही है अनंत जगत, और अनंतहीन जीवन का रहस्य।" सोच रहा था निधि।

कोमली घास में लेट गयी। "अब चला नहीं जाता मुझसे।" साड़ी का किनारा गोल तकिये सा बनाकर लेट गयी। कहीं दूर से निधि को बुलाने की आवाज आयी। निधि ने पहाड़ी पर चढ़कर पीछे देखा। कोई हिलता सा दिखा। उस आवाज ने पुकारा—"छोटे बाबू।" नारय्या पुकार कर गिर गया।—"मैं बस अब चल रहा हूं। माफ करना मैं आपके किसी काम न आ सका।"

नारय्या जा चुका था। निधि वहीं पहाड़ी पर लेटकर आसमान की ओर ताकने लगा। उस दिन नहर का किनारा और आज इस पहाड़ी पर। वही आकाश था और वही तारे। कहां से कहां कितनी दूर आ गया है। कितना समय हो गया है। स्थान, काल और स्वयं। तीनों में कौन सी चीज सत्य है। वहां दूर लेटी हुई कौन है उसकी क्या लगती है उसके पास क्या बचा है ?

अपना जीवन बिगाड़ लेने वाला एक व्यक्ति अगर दूसरों को सुधारने

की इच्छा रखे तो उसे हर ओर से बाधायें ही आ घेरती हैं। जो अपना जीवन सुधार लेता है उसे दूसरों की आवश्यकता नहीं रह जाती। दूसरे खराब हों तो उनके सामने अपना अच्छापन निरखने लगता है। "अच्छे बुरे" का मूल्य दूसरे ही आंक सकते हैं। एक से दूसरा अच्छा होता है। वास्तव में 'अच्छाई' जैसा खालिस गुण कहां मिलेगा ? कहीं तो होगा वर्ना उसकी मात्रायें कैसे बनतीं। 'अच्छाई' होने के लिये तीन चीजों की आवश्यकता पड़ती है—प्रेम धन और कीर्ति। पहला यौवन में तो तीसरा बुढ़ापे में। दूसरे की तो हमेशा ज़रूरत होती है। दूसरी हो तो पहली और तीसरी पलक मारने में उपलब्ध हो जाते हैं। पर वह नहीं जानता था कि तीनों में वह किसे चाहता था। उसे अब किसी की भी जरूरत नहीं थी।

"प्रेम।" वह सोच रहा था—

थकी हुई नीली नसें, जलता ललाट और सूखी जीभ इनके लिए एक दूसरे से धोखाधड़ी। प्यार के नाटक, मन का मिलना, हृदय का विलग होना, षडयंत्र और नाटक यही तो है प्रेम।

बदरी से भरे बादल, लहरों की बौछार, फूलों का खिलना, सांझ की बर्फ से गिरी नदी, बकरी का मिमियाना। बच्चों का खेल, कुत्ते का विश्वास, बच्चों का शोर, गर्मी की बारिश, फूटे अंकुर की अदा, सूखे पत्ते का विराग, प्यास लगने पर पानी पीना, प्रीतम के कोमल अधरों का चुंबन—यही तो है प्रेम।

"धन।" वह सोच रहा था।

महल, मोटर, बैंक बैलेंस। दोनों आंखों की पुतलियों में स्त्री का स्तन भार, गरम सासों में दम घुटना, सब पर अधिकार चलाने की आकांक्षा। युवकों और कुत्तों में फेंके गये झूठे पत्तलों के लिये छीना झपटी करते देख आंखें बंद लिये हुए मोटर में से देखते हुए निकल जाना—यही तो है धन।

"और कीर्ति। वह सोच रहा था।"

"मंच पर बने महानुभाव, घर में दरिंदों से बदतर हो जाना। ग्रंथों का स्रष्टा महानायक बीवी के साथ कमरे में जानवर हो जाता है। सड़क पर कहलाने वाला जननेता और घर में अपने को मनवाने की हठ करता है।

उसने जो भूमि जीती वहां महान राज्य बन गया। पर उसका अपना देश श्मशान में बदल गया। उसे प्यार करने वाली स्त्रियां महारानी बन गयीं।

उसने जिससे प्यार किया वह दर दर की ठोकरें खा रही है। घास का तिनका सोने में बदल गया है। पागल फूल मणि बन गया। नदी चांदनी बन गयी। हीरे, मानिक, मोती मिट्टी में मिल गये। शरीर को कइयों ने बांट लिया। प्यार को शराब पिलाकर उसकी हत्या कर दी। शांति आभा से टकराकर चूर चूर हो गयी। सौंदर्य यौवन का आलिंगन कर रोने लगा। दया को घृणा ने बिगाड़ दिया। धर्म को विज्ञान ने दफना दिया। भगवान को मंदिर में बांध दिया गया। अच्छाई सिंहासन पर चढ़कर दम तोड़ बैठी। मोह ने कमर को बांध लिया। सभ्यता, कारों के नीचे, रेलों की पटरियों पर विमानों से नीचे गिर कर कराहने लगी। "हम" टूटकर "मैं" "तुम" के टुकड़ों में बंटकर दो विपरीत दिशाओं में जाने लगी। वैसे, ये, कोई, कुछ लोग, एक व्यक्ति, आप, क्यों ? पता नहीं। कुछ भी तो नहीं बचा।

सभी प्रश्न उत्तर एक भी नहीं।

—क्यों, कब, कहां, कैसे, किसलिए, किसके लिये, किधर, कितने ?

इसलिए, यहां अब ऐसे, ये, यह, यह रहा, इतने सारे—कुछ भी नहीं रहे। चारों ओर हंसी और रुदन। ऊपर से हंसी भीतर से गहरे कहीं दुख, चारों ओर प्रकाश बीच में अंधकार। ऊपर, नीचे, दायें, बायें देवता ही देवता बीच में दानव। सब चले गये। सब कुछ समाप्त हो गया। अब बचा एकमात्र स्वयं।

समाज को वह बदल नहीं सकता। लोगों को सुधार नहीं सकता। सुधारने की कोशिश करेगा तो परिणाम होगा दुख, अपदायें, घृणा और संघर्ष। अपने आप से संधि करनी होगी। उसे आज पा सका है। एक शांति उसमें छिप गयी। उसमें एक पवित्र और महत्तर आनंद का बोध जो बाहर की दुनिया में नहीं था। ज्वाला को शांत करने वाली बरफ था उसका हृदय। पागल दुनिया को सहानुभूति से तटस्थ रखने का औदार्य था। धर्म, ईश्वर और मनुष्य को धकेल कर आनंद देने वाली आध्यात्मिक, मानसिकता का उद्भव ही मानव जीवन के अंतिम छोर का यथार्थ है।

उसने सोचा और अपने आपको पूर्णता में देखा। कितना विचित्र था कितना बड़ा धोखा था कैसा भ्रम था अब तक ? अपने से संधि करके अपने को स्वीकार करके अपने को बाहों में भरकर एकाकार हो उठा। अब वह दुनिया को स्वीकार कर सकता था। अपने आपका तिरस्कार करने वाला दुनिया को

स्वीकार नहीं कर सकता। दुनिया आगे बढ़ जाती है। अनंत सृष्टि, सभी ग्रह घूमते जा रहे हैं। सूरज को पीछे छोड़ जाते हैं। चांद तारा बन जाता है। सभी समुद्र बर्फ बन जाते हैं। फूल सिमट जाते हैं। जीव मर जाते हैं। भूखंड मरु बनकर अनंत में अर्थहीन घेरे लेने लगती हैं। मनुष्य की आशायें, सपने, कामनाएं, इच्छाएं, विषाद गीत, विजय गान सब कुछ हर लिये जाते हैं।

इस जीवन का अर्थ ही क्यों हो ? अर्थहीनता के विचार से दुख और कष्ट नहीं रहते, बल्कि नया बल, विकास, आत्मविश्वास और दृढ़ निश्चय प्राप्त होते है।

नयी नींवें खोदनी होंगी, नये मकानों का निर्माण करना होगा। सरोवरों को महानदियों में परिवर्तित होना होगा। बीज बोने होंगे। महान कथाओं की रचना करनी होगी। मनुष्य के धर्म, ईश्वर मनौतियां और राजनीति की अपेक्षा नहीं उसे चाहिये करुणा की एक कोर—बस।

पूरब का आकाश अंगड़ाई लेकर उठ बैठा। पलकें उठाने पर सफेद चमक फैलती जा रही थी और तारों को अपने में समेट रही थी। कोमली एक और तारा बन कर झिलमिलाने लगी। कोमली के साथ उसे दूर कहीं एक और नया जीवन प्रारंभ करना होगा। बाल-सूर्य की किरणों के समय ही थी दुलहन कोमली मुस्कराहट। दुनिया भर के लिए अपने में छिपाये अबोध बनकर सो रही है वह।

उस दिन गोदावरी के तीर पर जगन्नाथम् के साथ डोंगी पर सैर, वर्षा रुकने पर कात्यायनी के साथ पहाड़ियों के बीच नाचनेवाली संध्याकांता, आधी रात को अमृतम् के शरीर से उठी लाल शक्ति उसे घेर कर जला डालने वाला मदमस्त सौंदर्य, पिंजरे का तोता, फेंका हुआ पिंजरा—विवाह की खुशियां, स्वामीजी के साथ बहस—और पीछे नागमणि के साथ गाड़ी में, नहर के किनारे खेतों में भीगे कपड़ों में भागती कोमली, डोंगी में सिर पर कपड़ा लिये अमृतम्—इंदिरा की उंगली में लगायी अंगूठी किवाड़ों के भीतर की रस्में—टाऊनहाल, श्मशान में मां—पुनः नहर के किनारे आज की तरह एकाकी लेटना—स्मृतियां एक एक कर तैरती गयीं। अंत में उसके पास क्या बचा ?

आखिर जो बचा वह इसका उत्तर नहीं; इस उत्तर को पाने के लिये उनका अथक प्रयास—संस्मरण—अपने आपसे समझौता—बस, यही बचा था।

भारत मुद्रणालय, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032 द्वारा मुद्रित।